अहिंसा परमो धर्मः

मनुष्याहार ।

प्रकाशक—

भारत जैन महामण्डल,

ललितपुर.

Published by Baboo Chaitan Das, B A
Secretary Bharat Jain Maha Mandal
Lalitpur

Printed by C S Deole, in the "Bombay
Vaibhav Press" Kandewadi, Sadashiv
Street No 1 Girgaon, Bombay

ॐ

दयैव परमो धर्मः

मनुष्याहार।

अर्थात्

लंदन के 'हेरल्ड ऑफ दी गोल्डेन एज' के सम्पादक

श्रीयुत मिस्टर सिडनी एच बियर्ड की "वैज्ञानिक

साक्षी कि मनुष्य का भोजन क्या होना

चाहिए" नामक अंग्रेजी पुस्तक का

आशयानुवाद।

बमराना (ललितपुर) निवासी

श्रीयुत सेठ लक्ष्मीचंद्रजी रईस व जमींदार की आर्थिक सहायता से

भारत जैन महामंडल द्वारा प्रकाशित।

वीर नि. सं. २४३८. मई सन १९१२

प्रथमावृत्ति २०००]

मूल्य दया करना.

बमराना (ललितपुर) निवासी श्रीयुत सेठ लक्ष्मीचन्द्रजी

प्रस्तावना।

हर्षका विषय है कि अंग्रेज़ोंने उच्चकोटि की शिक्षा पाकर तथा सभ्यता प्राप्त करके, अब यह जान लिया है कि मासभक्षण न केवल मनुष्यके स्वभाव के विपरीत है वरन् बड़ा कष्ट दायक और हानि कारक है। वह मनुष्यके शरीरमे सैकडों असाध्य रोग उत्पन्न करता है और उसको क्रूर और निष्ठुर परिणामी बनाता है। इसके अतिरिक्त सहस्त्रों निरपराधी प्राणियो की गर्दनोंपर छुरी चलाना घोर पाप और अन्याय है। इसी भयकर हृदय विदारक प्रथा को जो प्रति दिवस वृद्धि को प्राप्त हो रही है रोकने के लिए उन्होंने अपने देश में 'ह्युमेनिटेरियन लीग' अर्थात् दयाप्रचारक सभा, स्थापित की है, जिसके द्वारा मास भक्षणके विरुद्ध लाखों पुस्तक और लेख प्रकाशित हो चुके है, हो रहे है और विना मूल्य या अल्प मूल्य मे वितरण किए जाते है, इनमेंसे महाशय **सिडनी एच बियर्ड** लिखित एक पुस्तक The Testimony of science in favour of natural and Human diet अर्थात् 'वैज्ञानिक साक्षी कि मनुष्य का भोजन क्या होना चाहिए' है, जिस में अनेक अनुमान, प्रमाण, युक्ति, साक्षी, अनुभव और प्रत्यक्ष उदाहरणों द्वारा यह सिद्ध किया गया है कि मनुष्यका भोजन मास नहीं है, किंतु, फलाहार है। चूंकि हिन्दुस्तान में भी करोडों मनुष्य अज्ञानवश मांस भक्षण करते हैं और अंग्रेज़ी न जानने के कारण उक्त पुस्तक की स्वाध्याय नहीं कर सकते, अतएव उनको लाभ पहुंचाने के लिए श्रीयुत बाबू चैतन्य-

दासजी महामंत्री भारत जैन महामंडल ने उस पुस्तकका डॉक्टर प्यारेलाल साहेब गुप्त एल. एम. एस, असिस्टेंट सर्जन ललितपूरसे अनुवाद कराया था, उसी का संशोधन करके तथा यत्र तत्र घटा बढाकर अब उस पुस्तक का आशयानुवाद बमराना (ललितपूर) निवासी श्रीयुत सेठ लक्ष्मीचंद्रजी की आर्थिक सहायता से प्रकाशित किया जाता है। आशा है कि हमारे मांसभक्षी भ्रातृगण पक्षपातको त्याग कर एक बार अवश्य इस पुस्तकको आद्योपान्त पढेंगे और हमारे दया प्रेमी करुणाधारी सुहृद्गण जब तक यह निर्दयीय हिंसक प्रथा भारतवर्ष से सर्वथा न उठ जाय पुनः २ इस पुस्तकको प्रकाशित करावेंगे।

क्षेत्रपाल-ललितपूर
१९-४-१७

दयाधर्मका प्रेमी—
दयाचन्द्र जैन बी. ए.

धन्यवाद।

हम श्रीयुत सेठ लक्ष्मीचंद्रजी रईस व जमींदार, बमराना (ललितपूर) को कोटिशः धन्यवाद देते हैं कि जिन्हों ने हमारी प्रार्थना पर ध्यान देकर इस पुस्तकको निज व्यय से प्रकाशित कराके दयाधर्म का प्रकाश किया और अपनी लक्ष्मी को ऐसे महान् शुभ कार्य मे लगा कर उसका सदुपयोग किया तथा अपने यशस्वी नाम को सार्थक किया।

क्या और लक्ष्मीपति भी उक्त लक्ष्मीके चंद्रका अनुकरण करके अपनी चपला लक्ष्मी को अचपला करेंगे और असंख्यातो हा हा करते हुए दीन हीन पशुपक्षियोंकी रक्षा करेंगे?

दयाचन्द्र जैन
चैतन्यदास जैन

अहिंसा परमो धर्मः

मनुष्याहार।

अर्थात

"वैज्ञानिक साक्षि कि मनुष्य का भोजन क्या होना चाहिये"

मासभक्षण की प्रवृत्ति जो पश्चिमी देशों के नगरों मे चिरकाल से फैली हुई है, उसकी अधिकता इस कारण से हो गई है कि—मनुष्यमात्रका साधारण विचार यही है कि मनुष्य के लिये यह एक आवश्यक और स्वाभाविक भोजन है और यही एक कारण है कि मास जैसे भयकर भोजन मे प्रत्यक्ष हानिया और निर्दयता होते हुए भी इसका इतना अधिक प्रचार है।

कोई भी विचारशील वा दयावान् पुरुष जो इस बात को अच्छी तरह से जानता है कि मासभक्षण मे कैसी और कितनी निर्दयता होती है, कभी भी इस भोजन का पक्ष न लेगा, यदि उसके मन मे यह न हो कि इसके विना जीवन असभव है। और जब यह प्रगट कर दिया जायगा कि यह उक्ति कि मास मनुष्य का आवश्यक भोजन है निर्मूल और असत्य है तो यह तुरन्त मान लेना पडेगा कि यह क्रूरप्रथा ज्ञानवान् मनुष्यको सभ्यताके नियमानुसार भी वर्जनीय है।

अतएव जहा तक होसके शीघ्रताके साथ मासभक्षियोको समझा देना चाहिए कि मासभक्षण केवल अनावश्यक ही नहीं है किन्तु

प्रकृतीविरुद्ध भी है और इससे स्वास्थ्य और धर्म दोनोंकी मर्यादा टूटती है। यह बात पूर्णतया समझ में आने से यह परिणाम होगा कि हत्या व बलिदान जो ससार में अज्ञानता के कारण भयकर रूप में फैल रहे है और धर्मको कलकित कर रहे है अत को प्राप्त हो जायगे।

बहुत थोडे मनुष्य इस बात से परिचित होगे कि कितने पशु-पक्षी केवल ईसाई धर्मावलम्बियो के मासभक्षणार्थ प्रतिदिन बध किये जाते है। उन पक्तियो से जो कास्मोपोलिटिन समाचारपत्र मे एक बार जानवरों के बध के सम्बध मे छपी थी, यह विदित होता है कि एक बधगृहमे दस हजार पशु दोहरी पक्तियो मे पद्रह मील तक जा रहे है और उनके पीछे २० हजार भेड बकरिया २० मील की पक्ति मे जा रही है उन के पीछे २७ हजार सुअर १६ मील तक और तिन्होके पीछे ३० हजार कबूतर वगैरह पक्षी ६ मील तक दिखाई देते है। इस पूरे जीव समूह मे जो कि अनुमानसे ५० मील लम्बी जगह मे हो और जिसके निरतर चलने मे एक स्थान से दूसरे स्थान को २ दिन तुम्हारे सन्मुख होकर निकलने मे लगे, इतने जीवधारी 'स्विफ्ट एन्ड को' के बधगृहमे एक ही दिनमे बध किये जाते है।

महाशयो! इससे अनुमान कर सकते हो कि कितने अगणित प्राणी इस रीतिसे आमर्ससे लिप्टन आदि बडे २ बधगृहो मे प्रति दिन बधके लिये उपस्थित किये जाते होंगे अन्य छोटे २ बध-गृहोंका तो क्या ठिकाना है जिनकी सख्या केवल लन्दनमें ४०० है।

दयालु परमात्माके दयावान् भक्तो ! क्या इतनी घोर हिंसा और बध देखते हुए भी आप को इन दीन हीन पशुपाक्षियों पर करुणा नहीं आती और आपके कोमल हृदयोंमें यह विचार उत्पन्न नही होता कि परमेश्वर की प्रिय प्रजा पर जो यह महान् निर्दयता होरही है इसे दूर करें, अवश्य होता होगा।

अतएव यह परमा वश्यक है कि प्राणी मात्र का बध रोकनेके लिये यथाशक्ति यत्न किया जाय और मासभक्षियो और खास कर ईसाई धर्मा-वलम्बियों को स्मरण कराना चाहिये कि उनके पुरुषा महात्मा ईसाने क्या कहा था कि " तुम जाओ और सीखो कि इस का अर्थ क्या है कि मै दया चाहता हू न कि बलिदान" । अत हम उन महाशयो से जो कि ईश्वर की आज्ञानुसार अपना जीवन व्यतीत करना चाहते है और जहा तक उनसे हो सके ससार मे दु ख, कष्ट और निर्दयता को कम करना चाहते है, विनय करते है कि वे इस बात पर ध्यान देवें कि हमारे महान् प्रसिद्ध विज्ञानवेत्ताओंने क्या कहा है और इस के साथ २ हम उन को यह भी स्मरण कराते है कि मनुष्य के शरीर की बनावट स्पष्ट रीतिसे यह प्रगट करती है कि मनुष्य अपना जीवन किस तरह व्यतीत करे और यह बात ऐसी साफ और सन्देह रहित है कि साधारण से साधारण मनुष्य भी इसकी सत्यता को प्रत्यक्ष देख सकता है और जब ऐसा है तो तदनुसार करना और चलना भी अत्यत आवश्यक है ।

इस बातको एक क्षण के लिये भी मन में न लाना चाहिये कि प्राचीन समयके मनुष्योंने अपनी अज्ञानता और अनभिज्ञता के कारण इस विषयमें बहुतसे मिथ्या विचार फैलाए और लोगों को जैसे तैसे

समझाया। वर्तमानमें यह प्रत्यक्ष है कि मनुष्य शाकाहारी है और उसकी आतरिक बनावट, उसके दात और उसका बाह्य स्वरूप उन जीवधारियों से जो मासाहारी है, सर्वथा भिन्न है।

चाहे इस विषय पर कि मासभक्षण करते करते मनुष्य का शरीर इसका आदि (स्वाभावी) हो गया है, कितनी ही युक्तियें दी जाँय परन्तु जो बात ठीक है वह ठीक ही है और इस प्रकार कह देना केवल एक कपोल कल्पित और असत्य है क्योंकि हम नित्य बहुतसे मासाहारियोंको उन रोगोंसे दु खित और ग्रसित देखते हैं जिनसे शाकाहारी निपट निरोगी है।

इसलिये मासभक्षण करना प्रकृति के नियमोको उल्लघन करना है और इन नियमो के तोडने से प्रकृति का प्रकोप अवश्य होता है। जिस २ देशमे मनुष्यने प्रकृतिके नियमोको तोडा है वहा अनेक रोग कष्ट और धूर्तता फैली है। बहुतसे डाक्टर लोग जो समयानुकूल अपनी उन्नति करते जाते हैं और जिन्होंने इस बात पर ध्यान दिया है कि स्वास्थ्य अच्छा रखनेके लिये क्या भोजन करना चाहिये, वे भली भाति मासभक्षणके दोषोसे परिचित हो गये है और वे अपने रोगियोंको मासभक्षणका निषेध करते है न केवल गठिया आदि रोगोंके कष्टसे दूर होनेके लिये वरन् अनेक प्रकारके अन्य कष्ट और रोगोंके रोकनेके लिये भी जिन मे गठिया, रसौली, पथरी और शूल आदिके रोग भी सम्मिलित है।

मांसभक्षणका प्रकृतिके विरुद्ध प्रभाव।

प्रोफेसर बेरन क्यूवियर साहब लिखते है कि यदि हम जानवरोंकी बनावट को देखें तो यह स्पष्टतया विदित होता है कि मनुष्य फलाहारी जीवोंके हर बातमें समान है परन्तु मासभक्षियों के किसी भी बात में नहीं। केवल अग्निपर तपाकर नर्म करने और उसकी वास्तविक दशा छिपाने से मास दातों से चबानेके योग्य बनाया जाता है और इसके भयकर स्वरूप और दुर्गन्धी से उत्पन्न होनेवाली घृणा दूर की जाती है। मनुष्य जैसा हम पूर्वमें कह चुके है किसी भी मासाहारी जीव से समानता नहीं रखता है। आतो की बनावट में वह शाकाहारी जीवो के समान है। बन मानुस हर प्रकार से मनुष्य से समानता रखता है। यहा तक कि उसकी जाति और उसके दातो की सख्या भी वैसी ही है और उसका पद भी वैसा ही है। बन्दरो में जो सबके सब शाकाहारी है, सबसे अधिक बनमानस मनुष्य के समान होते है। ऐसे और कोई जानवर नही है जिनका भिन्न २ भोजनों पर जीवनाधार हो और इस रीति से समानता रखते हों।

प्रोफ़ेसर विलियम लारेन्स अपने एक व्याख्यान मे कहते है कि मनुष्य के दात मासाहारी जीवों के दातो से तनिक भी समानता नहीं रखते। सिवाय इसके कि उनके दातों की बाहरी झिल्ली जो निरी बाहर ही को होती है और किसी बात मे तनिक भी समानता नही है। निस्सन्देह उसके काटने के दात नौकीले होते है किन्तु न तो वे और दातोंकी बराबर बडे होते है और न वे उस कामके करनेके योग्य होते है जो मासभक्षी जीवोंके वैसे दात करते है।

डाक्टर पाचट कहते है कि मनुष्य शाकाहारी जीव है और इस बातको उसकी आतोंकी बनावट और उससे अधिकतर उसके दांत पूरी तौरसे पुष्ट करते है।

प्रोफ़ेसर सर चार्ल्स बैल कहते है कि इस बातके कहनेमें अत्युक्ति न होगी कि मनुष्यकी हर एक हिस्से की बनावटसे इस बात की पुष्टि होती है कि मनुष्य वास्तव में शाकाहारी ही बनाया गया है। यह बात विशेषतर इससे प्रगट होती है कि उसके दात, उसकी पाचन शक्ति, उसकी ग्वाल और हाथ पैरोंकी बनावट शाकाहारी जीवोंके समान है।

प्रोफ़ेसर सर रिचार्ड ओवेन लिखते है कि लगूर और बन्दर जिनसे मनुष्य दातोंमें करीब २ समानता रखता है, केवल फल फूल शाकपात बीज वगैरह खाते है। इनके और मनुष्योके दातोंकी समानता यह बात प्रगट करती है कि मनुष्य आदिसे शाकाहारी है।

हैकिल साहब कहते है कि मनुष्य और बन्दरका शरीर केवल समानता ही नहीं रखता वरन हर प्रकारसे एकसा होता है। वही २०० हड्डियों का बना हुआ शरीर, वही मास के तीन सौ टुकडों से हिलन चलना, वही खालपर बालों का होना, वही हृदय के भीतर ४ कोठरियोंका होना, वही ३२ दातों का जबडोंमें उसी भाति होना, वही थूक, पित्त, और पेट की गिल्टियोंसे पाचन शक्ति का होना, उन्हीं इन्द्रियोंसे सन्तान उत्पन्न होना, इन तमाम चीजोंसे मनुष्य और बन्दर में समानता पाई जाती है।

डाक्टर जोशिया ओल्डफ़ील्ड कहते है कि आज विज्ञान के बलसे यह बात स्पष्ट होगई है कि मनुष्य मासभक्षी नहीं है, किन्तु

शाकाहारी है । रसायन विद्या भी इसको पुष्ट करती है और इस पर किसीको किसी प्रकार विरोध नहीं हो सकता है, क्योंकि शाक और फलोंमें वे सब पदार्थ विद्यमान है जिन पर मनुष्य भले प्रकार जीवन व्यतीत कर सकता है । चूंकि मासभक्षण प्रकृति के विरुद्ध है इस कारण रोग पैदा कर देता है । वर्तमान समय मे जिस प्रकार मास खाया जाता है उससे बुरे २ रसौली, पथरी, ज्वर आतों में कीडे हो जाना वगैरह बहुतसे रोग पैदा हो जाते है । और इसमें कोई आश्चर्य नही कि मासभक्षणसे ऐसे भयङ्कर रोग पैदा हो जाते है जिनसे ९९ प्रति शतक मनुष्य मर जाते है ।

प्रोफ़ेसर जानरेका कथन है कि, मनुष्य नि सदेह कभी मांसाहारी जीव नहीं बनाया गया है ।

प्रोफ़ेसर पीरी गेसेन्डी लिखते है कि, मै इस पर विचार कर रहा था कि हमारे दातोंकी बनावटसे यह नहीं मालूम होता है कि प्रकृति ने हम को मासाहारी बनाया है, क्योंकि जितने जानवर मासाहारी है उन सबके दात लम्बे, तेज और विषम होते है और उनके बीचमें अन्तर रहता है । इस प्रकारके जानवर सिंह, बाघ, भेडिया, कुत्ता, बिल्ली वगैरह है, परन्तु जो शाक फल और जडी बूटियोंपर जीवन व्यतीत करनेके लिये बनाए गए है, उनके दात छोटे, बिना धारके, पास २ बराबर २ पक्तियोमें होते है ।

प्रोफ़ेसर बेरन क्युवियर पुन. लिखते है कि मनुष्यका प्राकृतिक भोजन यदि उसकी बनावटसे सोचा जाय तो फल, फूल, जडी, बूटी और शाक पात होना चाहिये । इन चीजोंके इकट्ठा करनेमें उसे बड़ी आसानी होती है इत्यादि ।

मांसभक्षण अनावश्यक है।

सर हैनरी टामसन साहबका कथन है कि यह विचार निर्मूल है कि मांसभक्षण करना जीवनके लिये आवश्यक है।

प्रोफेसर जी. सिम्स वुडहेड—कहते है कि स्वास्थ्य बनाए रखने के लिये मासभक्षण सर्वथा अनावश्यक है। शाकाहार से उत्तम से उत्तम काम किये जा सकते है और आयु भी दीर्घ होती है। शाकाहारी मनुष्योंने उस आनदमय आदर्श जीवनको प्राप्त करने में बहुत कुछ सफलता भी प्राप्त करली है, जिसके लिये सहस्रों पुरुष और विशेषतया मासाहारी जोर जोर से चिल्ला रहे है, किन्तु स्वप्नमें भी उसका अनुभव नहीं कर सकते। किसी जाति की शारीरिक दशा सुधारने के लिये डॉक्टर लोग रोगोंको अच्छा करने की अपेक्षा, उसके सर्वतया रोकनेपर विशेष लक्ष्य देते है। वर्तमान समयकी चिकित्सासम्बन्धी शिक्षाका झुकाव बीमारी को रोकने पर पहले की अपेक्षा अधिकतर है और यह बात मान्य होगई है कि बीमारी आनेपर, उसका इलाज करने की अपेक्षा जिस तरह हो ऐसे उपाय करने चाहिये जिससे रोग पैदा ही न हो। शाक पात खाने की प्रवृत्ति इस में बहुत सहायता देगी।

डाक्टर हेग साहब कहते है कि, बहुत से विद्वान् प्रतिदिन इस बात को सिद्ध कर ही रहे है कि शाकाहार से जीवन आसानी से व्यतीत हो सकता है, परन्तु यदि वे न भी करे, तो भी इसके सिद्ध करने की कोई आवश्यकता नहीं है। जहा तक मैने खोज की है, मुझे भी यही विदित हुआ है कि यह बात केवल सम्भव ही नहीं है किन्तु

सर्व प्रकार माननीय है कि शाकाहारसे शारीरिक और मानसिक बल दोनों की पुष्टि होती है ।

डाक्टर राजर्स कहते है कि मुझे शाकाहारी हुए क़रीब **१३ वर्ष** हुए है । इन तेरह बर्षोंमे मुझे विदित हुआ कि मेरी सम्पूर्ण इन्द्रियां पहले की अपेक्षा अच्छी है और मेरा स्वास्थ्य भी अच्छा है । शाकाहारी होनेसे मुझे कोई हानि भी नही जान पडी, वरन हर प्रकारके लाभ ही लाभ दिखाई पडे । विज्ञानवेत्ता इस बात को कहते है कि मास मे कुछ ऐसी वस्तुए मिली हुई होती है जो सर्वथा विषैली है । मै समझता हू कि मास अधिकतर मादक वस्तु की समान है । यह मनुष्यमे केवल बेग बढाता है, परन्तु जब तक मनुष्य अपने को शक्तिसे अधिक उपयोग में नही लाता है तब तक उसमें बेगता भी नहीं आ-सकती है । शाकाहारी मनुष्योंमें एक विशेष बात यह होती है कि उनमे सहन शक्ति अधिक होती है । अब जब कि मै शाकाहारी हू, यदि मुझे ठीक समय पर भोजन न भी मिले तो भी मुझे उस से कुछ कष्ट नही मालूम होता । भूत रूस और जापानके युद्धसे बहतर मेरी रायमे इस बात की असत्यताका उदाहरण कि मासभक्षण और मदिरापानसे युद्ध में लडनेवाले बलवान सिपाही पैदा होते है, कहीं न मिलेगा ।

डाक्टर जान वुड लिखते है कि डाक्टर होने के कारण मेरी इच्छा है कि मै अपना वह अनुभव, जो मै ने अपने रोगियो से प्राप्त किया है प्रकट करू । मेरी राय में मासभक्षण अनावश्यक है । यह केवल स्वास्थ्य को बिगाडनेवाला ही नहीं है किन्तु प्रकृति के विरुद्ध भी है । शाकाहारी पहलवानों की अद्भुत सफलताओं से तथा इस बात से कि

प्राचीन व वर्तमान काल के बडे २ विद्वान् तत्त्ववेत्ता शाकाहारी ही हुए है, यह बात सिद्ध होती है कि स्वास्थ्य और धारणाशक्ति की वृद्धिके लिये मास आवश्यक वस्तु नही है।

मासभक्षण का स्वभाव प्रकृति के विरुद्ध है क्योंकि यह हमारे अस्तित्व के नियमों को तोडता है। मनुष्य फलाहारी ही बनाया गया है और यह बात मनुष्य का शाकाहारी व मासाहारी जीवोके साथ मिलान करने से स्पष्टतया प्रगट होती है। अतरग की बनावट तथा दात और बाह्य स्वरूप में मनुष्य मासाहारी जीवो से सर्वथा भिन्न है, परन्तु बन्दर और लगूर से जो निरे शाकाहारी है पूर्णतया मिलता है और इस बातसे कि बध किए हुये जीवो के मृतक शरीर को खाना स्वास्थ्य को बिगाडनेवाला है, विदित होता है कि इसके भक्षणसे अनेक रोग पैदा हो जाते है।

प्रोफेसर साहब फिर कहते है कि शाकाहारियो के सम्बध में मुझको यह बात बहुत अच्छी जान पडती है कि उनमे उत्साह अधिक होता है। निसदेह वैद्यक विद्या के अनुसार शाकाहारी मनुष्य उत्तम और बल वर्धक भोजन प्राप्त कर सकते है। उत्तम फलाहार में प्रत्येक वस्तु जो शरीर के पोषण के लिये आवश्यकीय है पाई जाती है, किन्तु मासाहार में कुछ ऐसी वस्तुए है जो हमारे शरीर को हानि कारक है।

मांसभक्षण रोगोंका घर है।

डाक्टर किलाग साहबका कथन है कि वह मनुष्य जिसको गठियाका रोग होता है, इस कारणसे रोगी होता है कि वह ऐसे रोगों

को अपने भोजनकी साथ पेट में ले जाता है। जब तक मनुष्य गठिया के विष को मासाहार से पाता रहेगा तब तक उसके अगूठों के सिरेंमें भी पीड़ा बनी रहेगी। अनेक प्रसिद्ध फ्रामीसी और अग्रेज वैद्योंने वर्तमान समय में यह सम्मति प्रगट की है कि मनुष्यको बहुत से रोग यूरिक एसिड (एक प्रकारका मूत्र रोग) के कारण होते है। **डाक्टर हैग** जो एक प्रसिद्ध अग्रेज़ी वैद्य है, लिखते है कि बहुत से यूरिक ऐसिड के रोग इस कारण से ही नहीं होते है कि वह शरीर से नष्ट नही होता या निकाला नही जाता है किन्तु इस कारणसे भी कि भोजनके साथ यह नित्य पेट में जाता है। वे रोग जो यूरिक ऐसिड से उत्पन्न होते है, डाक्टर हैग की इस विषयकी प्रसिद्ध पुस्तक से उद्धृत कर लिखते है। गठिया १ बाइ २ सरदर्द ३ मृगी ४ सरमें गर्मीका चढ़ जाना ५ उन्माद ६ शारीरिक निर्बलता ७ चित्तभ्रम ८ आलस्य ९ सरका घूमना १० दिलकी कमजोरी ११ निद्राका न आना १२ लकवा १३ क्षयी १४ मन्दाग्नि १५ छाती की जलन १६ प्रमेह (पेशाब में वीर्य का गिरना) १७ अन्य प्रकार के प्रमेह १८ जलधर १९ पथरी २० हाथ पावकी पीडा २१ आखो की ज्योतिका जाता रहना २२ भेजेका घुलना २३ शरीर पर सूजनका आना २४ आतोंका सूज जाना २५। ये सब रोग यूरेक ऐसिड से उत्पन्न होते है और जब तक मनुष्य इसे खाता रहेगा तब तक वे अच्छे नहीं हो सकते है। यद्यपि जिगर और गुर्दे इस योग्य होते है के वे उस यूरिक ऐसिड को जो शरीर के भीतर ही पैदा होता है, शरीरसे बाहर कर दें, परन्तु उस समय जब कि निकालनेकी अपेक्षा पाच गुणा दश-

गुणा वा तीस गुणा शरीरमे विद्यमान हो वे निकालने में सर्वथा असमर्थ है।

डाक्टर राबर्ट पर्क्स लिखते है कि वे विषैली वस्तुएँ जो जीवधारियों के मास में मिली हुई होती है, अवश्य धीरे २ उनको जो मासभक्षण करते है, हानिकारक होती है। पहले तो वे इन्द्रियों के कार्य में बाधा डालती है फिर उन रगो की बनावट में भी जिनसे रुधिर शरीरके जुदे २ भागों में प्रत्येक इन्द्रिय की आवश्यकतानुसार दौडता है। जब इम रुधिर की गति में कुछ अतर पड जाता है तो जुदी २ इन्द्रियोमे भी रोग उत्पन्न हो जाते हैं। उनका और पृथक् २ विषों के एकत्रित होने का अतिम परिणाम यह होता है कि समय से पहले ही रोग बढ जाते है जिसके कारण शरीर से चैतन्यता और उपयोगिता जाती रहती है और शीघ्र अकाल मृत्यु आजाती है। जब ऐसी मृत्यु होती है तो प्राय: लोग कह दिया करते है कि दिल की कमजोरी, गुर्दे की बीमारी इत्यादि के कारण मृत्यु हुई है, परन्तु यह भ्रम है। मृत्युका वास्तविक कारण यह है कि मासभक्षण मे शनै शनै शरीर में विष प्रवेश होता रहा है।

डाक्टर विक्टर पाचेट माहेब आतों के सूज जाने के विषय में कहते है कि मासभक्षण से यह रोग कहा तक बढता है, पहले पहल **डाक्टर ल्यूकस** ने बतलाया था। इसके पश्चात् और देशों के डाक्टरोंने भी भोजन और आतों के सूज जाने का सम्बध जानने का प्रयत्न किया और अब उन की रिपोर्टसे यह बात स्पष्टतया प्रकट होती है कि जहा २ जितना अधिक मास का प्रयोग किया जाता

है उतना ही अधिक आंतों का सूजना भी पाया जाता है। जैसा कि अमेरिका, इंग्लैंड, स्विटजरलैंड और जरमनी में जहां के निवासी प्राय करके मांसाहारी हैं, यह रोग अधिक पाया जाता है परन्तु इसके विरुद्ध इटली में जहां अनाज अधिकता से काम में लाया जाता है, यह रोग बहुत कम होता है।

फौजी डाक्टरोंने यह अनुभव किया है कि यह रोग अरबके उन निवासियों में विशेष देखा जाता है जो अंग्रेजों की रीतिमें रहते हैं और मांसभक्षण करते हैं किंतु जो लोग अपने पुरुषाओं की रीतिपर चलते हैं और मांस तनिक भी नहीं खाते उनको यह रोग कभी नहीं होता है।

जिन जातियों में धर्मानुसार मांसभक्षणका निषेध है उन में भी यह रोग नहीं पाया जाता है। मैंने इस रोग के सैकड़ों रोगी देखे हैं, इसी कारणसे इस रोग के विषय में मेरा अनुभव ध्यान देने योग्य है। मेरा विशेष अनुभव बच्चों के सम्बंध में है और आशा है कि आप इसको ध्यान पूर्वक सुनेंगे। हम जानते हैं कि यह रोग बच्चों में अधिकतर होता है, परन्तु मुझे अब तक एक भी ऐसा अवसर नहीं मिला जिसमें यह रोग ऐसे बच्चों में हुआ हो जिन्होंने कभी मांसभक्षण नहीं किया है। अतएव हम यह निःसन्देह कह सकते हैं कि शाकाहारी लोगों में यह रोग नहीं पैदा होता किंतु मांसभक्षियों में ही होता है।

डाक्टर रोबर्ट पर्कस लिखते हैं कि डाक्टर ल्यूकस शेम्पनियर जो फ्रांसके डाक्टरों की सभाकी ओरसे इस रोगके कारण जाननेके लिये नियत किये गये थे उन्होंने

भी यह सम्मति प्रगट की है कि यह रोग विशेषकर मासभक्षणसे उत्पन्न होता है और मै भी अपने कई वर्षोंके अनुभवसे कह सकता हू कि मुझे एक भी रोगीका स्मरण नही आता जो मासभक्षी न हो। मेरे एक मित्रका अनुभव भी जो निपट शाकाहारियोमे वर्षोसे चिकित्सा करते है, मेरे अनुभव से मिलता है।

डाक्टर ल्यूकस शेम्पिनियर स्वय लिखते है कि केसर (एक प्रकारकी रसोली) से २० वर्षमे इग्लैड और वेल्समें मृत्यु दूनी होगई है और इतनी ही मासभक्षण में अधिकता हुई है। बडे २ प्रसिद्ध अनुभवी डाक्टरोने अपनी सम्मतिया प्रगट की है कि मासभक्षण के भयानक स्वभावसे यह रोग बढता है, किंतु मास त्याग और फलाहारसे घटता है और दूर होता है। उनमे से कुछ का यहा पर उल्लेख किया जाता है। लडनके केसर अस्पतालके सभापति **डाक्टर ए. मासडन एम डी.** लिखते है कि इस रोगकी जो वर्तमानमे बाहुल्यता पाई जाती है रोकनेके लिए सब से पहले यह आवश्यक है कि मृतकमास और अन्य हानिकारक भोज्य पदार्थोकी विक्री को बद किया जाय। मुझे विदित हुआ है कि बहुधा कृषक ऐसा करते है कि ज्यो ही उनको यह निश्चय हुआ कि उनके पशुओमे कोई रोग उत्पन्न हो गया है, उनको तुरन्त वध करके बाजारमे बेचनेको ले आते है और इस कामको ऐसी होशियारीके साथ करते है कि वे पशु भी जो असाध्य रोगोसे ग्रसित है नही पहिचाने जा सकते और यही कार्य जर्मनी आस्ट्रिया आदि देशोमे किया जाता है।

डाक्टर जे. एच. केलाग लिखते है कि एक महाशय जो इस शहर में रहते थे, उनकी गर्दन पर ४ वर्षसे कैंसर रिसोली थी । जब उनको यह ज्ञात हुआ तो उन्होंने मास खाना त्याग दिया और शाकाहारी होकर जीवन व्यतीत करने लगे । उनको शीघ्र आराम होने लगा और थोडे ही दिनोंमें वह रसौली शनै शनै नष्ट हो गई । अब वे सर्वथा आरोग्य दशामें है । उस रसौलीके स्थानपर केवल एक छोटासा चिन्ह शेष रह गया है । मैने इस रसौलीका नमूना कारनिल विश्वविद्यालयके एक बुद्धिमान् डाक्टरके पास भेजा था और उन्होने उसकी परीक्षा करके यह अनुमति प्रगट की कि यह एक मृत्यु उत्पादक असाध्य रसौली थी ।

आनरेबिल रोला रसल कहते है कि कैसर रसौली मेरे विचार मे सबसे अधिक मासभक्षण और चाय काफी आदि के पीने से होती है। इसी कारण जहा मास और चाय का अधिक प्रचार होता है वहा यह रसौली अधिकता मे पाई जाती है । उन देशोंमे जहा इन विष उत्पन्न करनेवाली वस्तुओका प्रयोग नही होता वहा यह रसौली दृष्टि गोचर नही होती ।

प्रसिद्ध **डाक्टर ट्रिचल** के होठपर कैसर रसौली थी। एक समय यह काटी गई व अनेक बार दग्ध भी की गई परन्तु किंचित मात्र भी आराम नही हुआ था, वह रोटी और मलाई के भोजनसे बिल्कुल जाती रही ।

जार्ज ब्लैक एम्. बी. कहते है कि फल अन्न और शाकके भोजन से कैसर रसौली के रोगियोको एक ऐसा सहारा है कि जिसके कारण वे इस भयानक रोग की पीडासे यदि बिल्कुल नहीं, बहुत कुछ तो अवश्य बच सकते है ।

डाक्टर फ्रैंकसी मैडन लिखते है कि मेरे विचार मे मेरा यह कहना सत्य है कि मिश्रके सब डाक्टर इस बातमें सहमत है कि इस मुल्कके काले मनुष्योंमे (जैसे बारबरी और सूडनके रहनेवाले लोग जो प्राय सब मुसलमान है, परन्तु शाकाहार पर अपना जीवन व्यतीत करते है) कैंसर रसौलीका रोग नहीं पाया जाता है, परन्तु इस के विरुद्ध अरब और कूपके लोगोमें जो मिश्रके सुफेद रगके निवासी है और जो बिलकुल अंग्रेजोंकी भात खाते पीते और रहते सहते है, यह रोग अधिकतासे पाया जाता है।

राबर्ट बेल ऐम्. डी. कहते है कि मेरा यह विश्वास है कि यदि विना पकाया हुआ शाक फल या मेवा वगैरह हमारे भोजनमे अधिक होजावे तो कैंसर का रोग दृष्टिगोचर नहीं होगा और संसारमें इसका चिन्ह भी न रहेगा।

डाक्टर बैलने अपनी पुस्तक कैंसर (रसौली) मे प्रगट किया है कि केंसरका मुख्य कारण रक्तमें विकार उत्पन्न होना है और यह अधिकतर मासाहार से होता है। उन्होंने भली भात समझाया है कि किस तरह जीवधारियो का मास, जो नहीं पचता है, (जैसा कि वर्तमान समय मे मासाहार की अधिकता से पाया जाता है) आतो म सडकर दुर्गन्धि युक्त वस्तु बन जाती है और वह दुर्गन्धि युक्त वस्तु रक्त में शनै २ प्रवेश होने लगती है और रक्त मे विकार उत्पन्न करने लगती है।

क्षयी रोग।

अनेक बार यह जाननेका यत्न किया गया है कि इस रोग का विष उदर द्वारा शरीर मे प्रवेश हो सकता है या नही। यह कई बार

ज्ञात हुआ कि यदि क्षयी रोग से ग्रसित पशु का जाहिरी अच्छा मांस दूसरे जीवधारियोंको खिलाया जावे तो उनको क्षयी रोग उत्पन्न होजाता है। यह मानी हुई बात है कि लगभग प्रति शतक ५० जीव जो भक्षणार्थ हनन किये जाते है, क्षयी रोगसे ग्रासित होते है। उनके मृतक शरीर क्षयी रोग से युक्त होते है और क्षयी रोग एक छुतैला रोग है। यह भी एक मानी हुई बात है कि क्षयी रोग उत्पन्न करनेवाले कीडे दश पद्रह मिनिट तक उबलते हुए पानी की गर्मी सह सकते है और यह कि एक बड़ी गाठके भीतर का मास उबालने मे उस गर्मी पर पहुचता भी नही। इस से यह शिक्षा प्राप्त करनी चाहिये कि क्षयी रोग के पशुओं का मासभक्षण करना, जिनके विषैले कीडे नेत्रो से नहीं दिखाई दे सकते, केवल भयकर ही नहीं वरन् स्वय अपने को मारने के तुल्य है। योग्य माता पिताका धर्म है कि अपने बालको को अकाल मृत्युसे बचावें। बुद्धिमान् डाक्टरो के निम्न लिखित वाक्य ध्यान देने योग्य है।

ब्रिटिश मैडिकल ऐसोसिएशन के सभापति डाक्टर जैक्सन कहते है कि क्षयीरोग पशुओंमे अधिकतासे पाया जाता है। मै पाठकोंको स्मरण कराना आवश्यकीय समझता हू कि जब महारानीके झुडके पशुओंका निरीक्षण हुआ था, उस समय ४० पशुओंमें ३६ रोगी थे। जब राजपशुओं की यह दशा है तो यह नि सन्देह सिद्ध है कि अन्य पशुओंमें तो जहा निरीक्षण वगैरह कुछ भी नही होता है यह रोग कम फैला हुआ नही है।

मुझे विलायत में यह बड़ी लज्जा जनक बात मालूम होती है कि बड़े नगरोंके सिवाय अन्य स्थानोंमें मासका निरीक्षण ही नहीं होता

शूकरका मास जो ग्राम से आता है, सम्भव है कि वह ऐसे शूकर का हो जो क्षयीरोग से ग्रसित हो।

फलाहार योग्य और उत्तम होनेके प्रमाण।

सर बिंजैमिन रिचर्डस कहते है कि यदि शाक पातकी अच्छी तरह छाट की जाय तो यह बात न्याय पूर्वक माननीय होगी कि उक्त शाक पातमे मासाहार की अपेक्षा अधिक उपयोगी और पाचक वस्तुए है।

डाक्टर जोशिया ओल्डफील्ड कहते है कि मैने सब अवस्थाके बालकों को देखा जो मास खाते थे और जो एकबारगी ऐसी दशामें रख दिए गए जहा मास नहीं मिल सकता था। मै ने फिर युवा और वृद्ध अवस्था के मनुष्योको भी देखा जिनका स्वभाव बहुत मास भक्षण का था और जिन्होने मासाहार सर्वथा त्याग कर दिया था। ये सब अच्छी दशा मे है। मैने उन मनुष्योंको अपने पास रखकर देखा है जो साठ सत्तर और पिछत्तर वर्ष की अवस्था तक मासभक्षण करते रहे थे, परतु फिर जिन्होंने बिलकुल अपने भोजन से मास निकाल दिया। ईनमेंसे एक को भी किसी प्रकार की हानि नहीं पहुची, उल्टा इनके शरीरमें अधिक बल ज्ञात होने लगा। वे एक प्रकारका हलकापन और स्वतंत्रता अपने शरीर में जानने लगे, मानों कि एक बडा भार उनके सरपर से उतार लिया गया है। यदि मुझसे यह प्रश्न किया जाय कि जिन्होंने मास त्याग दिया है, उनकी शारीरिक शक्ति और बल कम हुआ, तो मेरा उत्तर होगा कि बहुधा मास त्याग देनेवालोंने विश्वस्त रूपसे बयान किया है कि हम शरीरमें पूर्वसे अधिक पुष्ट और बलवान् है और हमारा मन अधिक स्वच्छ और बलवान् है।

डाक्टर राबर्ट पर्क्स ऐम. डी. लिखते है कि इस देश में मांस न खानेवाले बहुत थोडे है। यद्यपि ऐसे मनुष्यों की अब वृद्धि हो रही है, किन्तु जो है उनसे यह सिद्ध होता है कि उनकी शारीरिक व भौतिक शक्ति अधिक है। वे निरोगी रहते है और रोगोंका सामना कर सकते है और इसी कारण उस भोजन पर सन्तुष्ट है। यह स्वयं मेरा अनुभव है और यह बात स्वय मुझको नित्य देखनेमें आती है और इस विषय पर सब साक्षी मिलती है कि यदि मांस का भोजन त्याग दिया जावे और फल व शाक बुद्धिमानी के साथ उपयोग में लाए जावें तो अत्यत सम्भव है कि लोग निरोगी रहेंगे और रोगोका सामना कर सकेंगे। मासाहारी मनुष्य कभी न कभी अवश्य अपने भोजनके कारण रोग ग्रसित हो जाते है।

डाक्टर वाल्टर हाडबिन एम. डी. कहते है कि मेरा पचीस वर्षसे मछली और पक्षियोके मास भोजन के त्याग देनेका अनुभव अब तक चला जाता है। मेरे माता पिताने भी जब कि वे ६० वर्ष के थे यही अनुभव किया था। अब उनकी अवस्था ८० और ९० वर्षके बीच में है और उनका स्वास्थ्य बहुत ही अच्छा है। मेरे बाल बच्चे और चीजें खाना जानते ही नही और वे अपनी अवस्थाके नवयुवकों के समान ही निरोगी है। मैने इसको अपने रोगियोकी चिकित्सा में परीक्षा करके देखा है। अन्य औषधियोंकी अपेक्षा मै फलाहार को बहुत लाभदायक पाता हू। वास्तवमें बहुतसी दशाओंमें तो अन्य किसी औषधिकी आवश्यकता ही न पडी।

डाक्टर हारिस कहते है कि क्या मै भी कुछ साक्षी मास रहित भोजन की दे सकता हू, इस विचार से कि मैने सात वर्ष से किंचित्

मात्र भी मासभक्षण नहीं किया है। अंडा, दूध और पनीर तक भी नहीं खाता हूं और बिलकुल निरोगी हू और अब ८० वर्ष की अवस्था में भी अच्छी तरह से तीस चाळीस मील पैर गाडी पर चल सकता हू।

डाक्टर हूकर एम डी. कहते है कि पचीस वर्ष से जब से कि मै इलाज करता हू बहुधा मुझको उन रोगियों के प्रबध करने म बडी कठिनाइयों का सामना करना पडा है जो अपने मुटापे के कारण विवश थे और जिनके शरीर मे वर्षों के मिथ्या आहार के विष उत्पन्न हो गए थे। उस भोजन के विष से जो उन्होंने केवल अपनी मूर्खता के वश खाया था, वे दुष्ट रोग युक्त होगए थे क्योंकि वह विष उनके रुधिर में सम्मिलित नही हो सकता था और उनके रुधिर का भाग नही बन सकता था। बेचारे मासाहारी रोग ग्रसित होनेपर निरोगी होने की उनको क्या आशा हो सकती थी?

अनुभव की हुई साक्षियां।

कुछ परीक्षाए जो **प्रोफेसर चिडंडन** ने भोजन के सम्बंध मे की है भली भात यह सिद्ध करती है कि मास रहित भोजन पर मनुष्यका बल और स्वास्थ्य मासयुक्त भोजन की अपेक्षा अच्छा रह सकता है।

अमेरिका में सैनिकों को सामान्य रीतिसे, ७५ ओस भोजन दिया जाता है जिसमें से २२ औस बधक के यहा का मास होता है। इन सैनिकों का और पहलवानों का भोजन ५१ ओस कर दिया गया, वरन् उनके भोजन में से २१ ओंस मास और थोडासा और

पदार्थ निकाल दिया गया। वे इस भोजन पर ९ महीने तक रक्खे गए। इस निरीक्षण का यह परिणाम निकला कि इस परीक्षा के आरम्भ में यद्यपि वे बहुत बलवान् थे, किन्तु इन९महीनों के पश्चात् वे और भी बालिष्ठ और भली दशामें पाए गए।

हाथसे दबाने वाली कमानी से यह भी प्रकट हुआ कि उनका बल ५० शतक वृद्धि को प्राप्त हुआ और वे कार्य को सरलता और भले प्रकार से कर सके। उनका चित्त प्रसन्न प्रतीत होता था, उनका स्वास्थ्य उन्नति की दशा को प्राप्त था और जब वे स्वतन्त्र कर दिए गए तो एकने भी पहिले भोजन को पसंद नहीं किया।

पहलवानों की साक्षी।

कुछ परीक्षाए ऐल. यूनीवर्सिटीमें प्रोफेसर अरविङ्गफिशर महाशयने सन १९०६ और १९०७ ई० में मासाहारी और मासत्यागी मनुष्योंकी सहन शक्तिके विषय में की हे। ४९ मनुष्यों पर अनुभव किया गया था। मासाहारी मनुष्य पहलवान थे। बड़ी होशियारीसे वास्तविक परिणाम निकालनेका यत्न किया गया, तब यह स्पष्टतया विदित हुआ कि हाथ बिलकुल सीधा फैलाए हुए रखनेकी परीक्षा में मासाहारी मनुष्य अधिकसे अधिक २२ मिनट तक सीधा रख सके थे। यह समय सामान्य रीतिसे मास त्यागियोंकी अपेक्षा आधा था। उनमेंसे एकतो १६० मिनट और दूसरा १७६ मिनट और तीसरा २०० मिनट तक अपना हाथ सीधा रख सका। पावको बारम्बार सिकोडनेमें मासाहारी ३८३ बार और मासत्यागी ७३१ बार सिकोड सके। इसी प्रकार की अन्य परीक्षाए जो कि ब्रुसेल्स विश्वविद्यालयमें इन्हीं दिनोंमे की गई थीं, यही सिद्ध करती हैं

कि शाकाहारी मनुष्योंमें ५० प्रति शतक के हिसाब से परिश्रम और सहन शक्ति अधिक पाई जाती है, और हाथसे दबानेवाली स्पिरिंग (कमानी) यह प्रगट करती है कि श्रम हटानेके अर्थ शाकाहारियोंको मासाहारियों की अपेक्षा ½ भाग समयकी आवश्यकता होती है।

निम्न लिखित सफलताए जो शाकाहारी शूरवीरोंने वर्षों तक मांसभोजनसे घृणा करके प्राप्त की है, ध्यान देने योग्य है —

जार्ज ए. औले जो कि पैरगाड़ी पर चढने वाले बहादुर हैं, जिन्होंने इस विद्याके २०० निपुण पुरुषो पर विजय प्राप्त की है, जिन्होने कारवर्डन कप और डबल शील्ड जीती है, उन्होंने सन् १९०४ में निम्नलिखित कर्तव्य दिखाए। यद्यपि सडक बडी मटीली और चिकनी थी और वे तीन दफ़े गिरे, एक दफै टकराकर चोट खाई, रबर फट गई तथापि लदन से ऐडिनबरा तक ३८२ मील २७ घटे ११ मिनट मे गए। इस दौडमें ३४४॥ मील २४ घटे में पडे। दक्षिणी भागो पर १२ घटे में २०३ मील गए। एक बार ५० मील २ घटे १८ मिनट ३९ सेकड में गए। इस तरह १ घटेमें ३५ मील दक्षिणी मार्गो पर चले।

औले साहबने ही ६ से १२ घटे के भीतर २७१ मील की अनक दौड़ें जीतीं। सन् १९०५ के सितम्बर महीने मे वे 'जान ओग्रेट' से लैंड्स एंड तक ८५७ मील ३ रोड, ३ दिन २० घटे और १५ मिनट में दौडे। जून १९०८ में भी वै इतनी ही दूर ३ दिन २० घटे और १५ मिनट में दौडे। १९०७ की २३ जून को १००० मीलकी दौड में अन्य मनुष्यों की अपेक्षा ८

घंटे ५७ मिनट पहिले दौड़े और केवल ४ दिन ९ घंटे और ३ मिनट लगाए। **डब्ल्यू. डी. क्रुक्स हचिन्सन** महाशयने डोवर से लंदन तक जाकर लौट आने की दौड ९ घंटे १५ मिनिट और ४७ सेकड में जीती और डोवर से लदन तक १४ घंटे १९ मिनट ४० सेकड में पैदल पहुचे। श्रीयुत **लाट साहब बाईङ्ग** ने भारत-वर्ष में पैर गाड़ी की वीरता का पद सन् १८९७, १८९८ और १९०० में प्राप्त किया। श्रीयुत **ऐडन्यू महोदय** २०५ मील सन १९०७ में १२ घंटेमें और २०२ मील सन १९०८ में गए। डाक्टर हैरिस महाशय ८२ वर्ष की अवस्था में ३ पहिए की गाडी पर जुलाई सन् १९०० में लदन से ऐडिनबरा ८४९ मील जाकर २० दिन में लौट आए।पैरगाडी और असबाब का वज़न ७० पौंड था। **मिस रोज़ा सिमन्स** १९०४ में लैंड्स ऐंड से लन्दन होते हुए जान ओग्रेट गई फिर लैंट्स ऐंड अर्थात् १८६० मील १५ दिन २१ घंटे ३२ मिनिट मे लौट आई। ससार में इससे अधिक और कोई स्त्री नही गई। सन १९०७ में इन्होंने इसी फासले को १४ दिनमें तै किया था जिससे १३३ मील प्रति दिन का औसत पडता है। तीन वर्षमें उन्होंने विलायत के मार्गोंपर ३६९४१ मील की यात्रा की।

कारलमान महाशयने मई १९०२ में टहलने की दौड मे १२९ मील जाने में २६ घंटे ५८ मिनिट लगाए और सबसे आगे रहे। जार्ज ऐलिन साहबने १९०४ के सितम्बर में लैंड्स ऐंड से लेकर जान ओग्रेट तक जाने में जो ९०८½ मील है अन्य मनुष्यों-की अपेक्षा ७ दिन कम लगाए। वे प्रथम सप्ताह में ४५ मील प्रति

दिन चले, द्वितीय सप्ताहमें ५३ मील प्रतिदिन, तृतीयमें ६६½ मील और अंत के दो दिनों में ८८½ मील प्रतिदिन चले और वज़न में किंचितमात्र भी न घटे और निज स्थानपर पहुंच गए। सन् १९०८ में उन्होने इससे भी कम दिन लगाए। श्रीयुत ओियाल्ट साहबने २४ घंटे की दौड मे ३६२½ मील बाइसिकिलके द्वारा तै किये और लंदनसे ब्राइटन तक जाकर लौट आने में भी जीते और ३ पहिए की गाड़ीसे ५० मीलकी दौड जीती। श्रीयुत वाट्ट महाशयने पैदलकी ५ मील की और ४ मील की दौडे जीतीं। महाशय हारवुड साहिबने बोझ उठानेकी बाजी जीती। श्रीयुत नाट महोशयने क्लब और आक्सफर्ड विश्वविद्यालयके बीच की दौड जीती और फ्रान्स की १५०० मीटर की दौड जीती। श्रीयुत मिल महाशयने १९०२ ई० मे टेनिस और रैकेट की बाजियां जीतीं और वे १९०५ व १९०६ मे भी जीतते रहे। ये सब जीतनेवाले शाकाहारी थे।

अपनी साक्षी।

१२ अक्तूबर सन १९०५ को लंदनके मेमोरियल हाल में लन्दन की शाकाहारी सभाकी ओरसे एक बडा जलसा हुआ था। इस अवसर पर समस्त व्याख्यान दाता वे महाशय थे जिनकी अवस्था ८० वर्ष या उस से भी अधिक थी और मांसके सर्वथा त्यागी थे। इनमें श्रीयुत न्युकोम्ब प्रोफेसर मेयर, मिसवार्डलो, जौजिफ वैलेस, मिस्टरवाइल, और मिस्टर साडर्स भी थे। मिस्टर न्यूकाम्बने अपने अपूर्व प्रभावशाली व्याख्यान में वृद्धावस्थाके आनंदका जो प्रकृतिके नियमानुसार साधारण रीतिसे जीवन व्यतीत करनेसे प्राप्त होता है, वर्णन

किया था और साक्षीमें टामस मैडम प्रूआर्डस व अन्य शाकाहारी मनुष्योंका जिक्र किया था जो १५० वर्ष तक जीवित रहे।

प्रोफ़ेसर मेयरने कहा था कि थोड़ा खानेवाला दीर्घ आयुवाला होता है, इस पर सब लोग सहमत है।

मिस्टर हैनसिन ने एक मनोहर व्याख्यान दिया जो मनोरञ्जनसे भरा हुआ था। उन्होंने कहा कि यद्यपि मेरी टाग ३८ वर्षकी अवस्थासे लगडाती है तथा ७५ वर्षकी अवस्था मे एक टाग टूट गई और ८४ वर्षकी अवस्थामें दो पसलिया टूट गई, ये सब बातें हुई, तथापि ८६ वर्षकी इस अवस्था में भी, मै बिगुल बजानेके योग्य हू। मेरा विचार है कि शाकाहारी मनुष्य वृद्धावस्थामे अधिक सहन कर सकते है। जब मै मासभक्षण करता था, मुझको जिगर का कष्ट रहा करता था, परन्तु अब मै उस कष्ट को जानता भी नहीं।

मिस्टर सांडर्सने कहा कि मास त्यागे हुए मुझे ६० वर्ष होगए, मेरे कभी भी सिरमें दर्द नही हुआ। अब ९१ वर्षकी अवस्था में मुझे वृद्धावस्था का आगमन दिखाई पडता है और अभी तक इग्लिस्तान के पश्चिमी भागमें एक बहुत बडे कार्यका प्रबध करताहू। **मिस्टर बालेसने** कहा कि जब मैंने युवावस्थामे मास खाना छोड दिया, तो मेरे मासाहारी सम्बधियोने कहा कि मास त्याग करके क्यों वृथा अपने प्राणोका घात करते हो, परन्तु वे सब कालके मुखमें चले गए और मै अभी तक अच्छा और प्रसन्न चित्त हूं। **मिस्टर बाइलने** ऐसा उत्तम और प्रभावशाली व्याख्यान दिया कि उन्होंने समस्त सभाको इतना प्रसन्न किया कि जब उन्होंने बोलना बन्द किया, तो सब मनुष्योंने ताली बजाकर प्रार्थना की कि

अभी कुछ और कहिए। व्याख्यानोंके पश्चात् एक शाकाहारी स्त्रीका चित्र दिखलाया गया जिसकी अवस्था १०९ वर्ष की थी परन्तु उसके चेहरे से बल और पुष्टता प्रगट होती थी।

शाकाहार के उत्तम गुण और लाभ की अत्यत उपयोगी और ध्यान देने योग्य साक्षी मिस्टर माइल्स एम ए, (जो शारीरिक और मस्तिष्क उन्नतिके विषय में विख्यात और अनुभवी है. जो सन् १८९९ से १९०३ तक और फिर १९०९ में सबसे बढकर खेलनेवाले थे) की प्रसिद्ध पुस्तक में मिलती है और वह इस प्रकार है कि जब मैने शाक आदिका प्रचार किया तो मुझको बहुतसे शत्रुओका सामना करना पडा। न केवल उनके साथ जो इस विषय में कुछ ज्ञान नही रखते थे, किन्तु बहुतसे डाक्टरोंके साथ भी जिनसे कि मुझे बाद विवाद का अवसर मिला। केवल यही नहीं वरन मेरे मित्रोंने मुझे उन्मत्त (पागल) समझ लिया था। ऐसे समय में मुझे जो कठिनाइयॉ पडी उसका अनुभव आप स्वय कर सकते हैं परतु जब यह निश्चय होगया कि ढाई वर्ष तक मेरी शारीरिक व भौतिक शक्ति वृद्धि करती रही. जब मै अपने मस्तक और शरीर को साथ २ उन्नति देता रहा. जब मै कठिन से कठिन टैनिस के मैच खेलने के लिये कटिबद्ध रहा और प्रति दिन ८. ९ घटे तक विना थके हुए सख्त दिमाग का काम करता रहा, जब मेरी खेलों में सफलता और अन्य कार्यों में कुशलता और विजय उन्नति ही करती रही, तो शनै. २ मेरे प्यारे मित्रों व सम्बधियों को यह मानना ही पडा कि मै भूल पर न था।

मुझ को ज्ञात हुआ कि खाने पीनेमें मेरा पहले की अपेक्षा बहुत थोड़ा व्यय होता है और अनेक प्रकार से मेरा समय बचता है और मेरी बहुत सी व्यर्थ मज्जा लुप्त होगई, मेरा वदन पुष्ट निरोगी प्रतीत होने लगा और खेल व व्यायाम व दृश्यों में मेरी आखों की सफाई, मेरी होशियारी, मेरी सहनशक्ति और मेरी फुरती शनै २ बढती गई और मेरा दिमाग बहुत सी बातो पर पहले की अपेक्षा देर तक और अच्छा काम करने लगा, मेरी स्मरण शक्ति विशेष करके इतिहास और आमबातो के लिए बढ गई, मुझ मे विचार शक्ति उत्पन्न होगई और अपने विषयोको शीघ्र सज्जित करनेकी शक्ति पैदा होगई. मै एक विषयसे दूसरे में नवीन नवीन समानताए जानने लगा, और एक स्थानमे बैठकर बिना आराम किए हुए बहुत समय तक काम करने लगा। वास्तवमें दिमाग का काम सिवाय रातके समय के मेरे वास्ते ऐसा ही साधारण होगया जैसा कि श्वासका लेना। मै जब छुट्टी लेताहू तब भी अपने दिमागको आराम नही देता। एक काम की बदली होना ही काफी आराम समझता हूं।

ये सब स्वप्न की बाते जान पडेगी। लोग कहेगे कि तुम ये कहते हो, परन्तु इनका प्रमाण क्या है ? इसके उत्तर मे मै गोशवारे पेश करता हू। प्रथम तो यह कि मैने पहले वर्ष मे १०० के स्थान में १५० विद्यार्थियों को शिक्षा दी। १० पुस्तको से अधिक लिख कर छपने को भेजी। ये पुस्तके उस अल्प कालमें लिखीं जो लडको को पढाने से बचा। पुस्तको के अतिरिक्त बहुत से समाचार पत्रो में लेख भी लिखे। मै इन के प्रमाण भी दे सकता हूं। इन का प्रमाण देना

कि पहलेकी अपेक्षा अधिक प्रसन्न हू, मुझे काममें ऐसा उत्साह और प्रसन्नता कभी भी नहीं हुई जैसी कि अब होती है, हर प्रकार पहलेकी अपेक्षा अच्छा हू और मेरे जीवनके उद्देश पहलेसे बढे हुए हैं, किस प्रकार हो सकता है, केवल पाठकोसे यह प्रार्थना कर सकता हू कि इन सब बातोको सत्य समझें।

एक अस्सी वर्षके बूढ़ेका अनुभव।

जुलाई सन १९०४ के हैरेल्ड आफ दी गोल्डन एज में एक ८० वर्षके अनुभवी शाकाहारी **मिस्टर सेमवल सामडर्स** ने लिखा है कि मै मच्छी और पशु पक्षियो का मास ६२ वर्षसे नही खाता हू और स्वास्थ्यके नियमोंका भी साथमे पालन करता हू। मेरे कभी सरमें दर्द नही हुआ,कभी बीमारी के कारण शय्या पर एक दिन भी नही पडा रहा। सूक्ष्म कष्टोंको छोड कर कभी बडे २ कष्टोको सहन नही करना पडा। मेरा जीवन अति आनन्द मय और उपयोगी रहा अब ८८ वर्षकी अवस्था मे भी मै ऐसा निरोगी दिखाई देता हू और नवीन बातोंके सीखनेके वैसा ही योग्य हू, जैसा कि मै २० वर्षकी अवस्थामें था। श्रीयुत **कैपटेन डाइमंड** महाशय की भी, जो १०६ वर्षकी अवस्था में दिसम्बर सन १९०२ मे कुछ नवयुवको को निरोगी और स्वच्छ रहनेके सम्बधमें व्याख्यान दिया करते थे, यही साक्षी है। स्वास्थ्य सबंधी समाचारपत्रेक एक अक मे इस वृद्ध महाशयके ६ चित्र दिए हुए है। किसीमें मुष्ट युद्ध कर रहे है, किसीमे पैरगाडीपर चल रहे है, किसीमें सीधे खडे है और एक मे अनेक प्रकार की कसरत कर रहे है। उन्होने ६३ वर्षसे बिलकुल मास नही खाया है। वे १०० वर्ष की अवस्था में भी एक दिनमें २० मील विना थके

हुए जा सकते थे। सन १९०७ में १११ वर्ष की अवस्थामें डाक्टरोंने उनका निरक्षिण किया था और यह लिखा था कि उनका स्वास्थ्य ऐसा अच्छा है और उनकी शारीरिक व्यवस्था ऐसी उत्तम है कि कोई कारण नही दिखाई देता कि वे अधिक काल तक क्यों न जीवित रहें।

साक्षियोंका दल।

यदि अब और साक्षियोंकी भी आवश्यकता हो, तो मैं यही कहूंगा कि शाकाहार जो मनुष्यका प्राकृतिक भोजन है, उसकी उपयोगिता और उत्तमता पर सहस्त्रों साक्षिया ऐसे मनुष्यो की है, जिन्होंने मासभक्षण नही किया और पवित्र जीवन व्यतीत करनेका मार्ग प्रकट किया। उनमें से कुछ प्रसिद्ध व्यत्तियो के नाम ये है— फीसागोरस, अफलातून, अरस्तु, सुकरात, हिफेशिया, डयाजनीज, प्लूटार्क, सिनेका, बुद्ध, जोरेस्टर, जेम्स, मैथिव, पीटर, ईसामसीह, औरिजन, क्लीमेंट, मिल्टन, इजाक, बैनजमिनफ्रैकलिन, शैली, पैले, वेसली, स्वीडनबर्ग, न्यूमेन, मिचलेट, विलियमबोथ, एडासनब्रैम्बैलबोथ। इन मे प्रत्येक भाति के उदाहरण सम्मिलित है। फिलासफर, तत्ववेत्ता, धर्मोपदेशक, इसाईयोके गुरू, हिन्दुओंके अवतार, कवि, वैज्ञानिक, शूर, सैनिक, अधिपति।

मनुष्यका भविष्यत् भोजन।

सन १९०९ के जनवरी के 'हेरल्ड आफ दी गोल्डन एज' में ब्राम्ले के डाक्टर जोशिया ओल्डफिल्ड महाशयने स्पष्ट रीतिसे लिखा है कि प्रत्येक मनुष्य के चित्त में शाकपात से प्रेम,

और हरयाली और लता की इच्छा पाई जाती है। प्रत्येक बुद्धिमान मनुष्यके हृदयमें मास की दुर्गन्धि और इसके भयङ्कर रूप से घृणा भी पाई जाती है । प्रत्येक बालक फल लेनेके लिये स्वभावत उसी प्रकार दौडता है, जिस प्रकार बिल्ली अपने रक्त युक्त शिकारके लिए। अब कहिए भविष्यमें क्या आशा है। भूत कालमें जो भोजन किया वह आवश्यकताके कारण किया। भविष्यमे जो भोजन किया जायगा, वह इच्छा और रुचिके अनुसार किया जायगा। प्राथमिक अवस्था मे मनुष्यने वह भोजन किया जो उसको प्राप्त हो सका, उसके पश्चात् उसने वह खाया जो उसके चित्त को भला जान पडा और अब उस प्रकार का भोजन करेगा जो लाभदायक और स्वच्छ होगा और उसको अपने स्वाद के अनुकूल बनाना होगा।

जब मनुष्य मासके भोजनको परित्याग करके प्राकृतिक स्वास्थ्योपयोगी और अच्छी तरह से पकी हुई वस्तुए फल, अन्न, शाक वगैरह को उनमें दूध पनीर मिलाकर अपने काम में लाएगा, हम देखेंगे कि बहुत से रोग इस ससार से उठ जायगे, काम करने की भी शक्ति बढ जायगी, सहन शक्ति अधिक हो जायगी, आयु भी दीर्घ हो जायगी और मुझे भरोसा है कि इसके साथ ही जिस प्रकार जीव हिंसा की कमी होती जावेगी उसी प्रकार मनुष्य के हृदय में सुख की वृद्धि होती जायगी और दु ख दूर होते जायगे। इस कारण मनुष्य का आहार भविष्य में प्राकृतिक भोजन होगा।

हमारी ज़िम्मेदारी और मौका।

उपर्युक्त साक्षियों पर, जिनको जितनी चाहें बढ़ा सकते है, दृष्टि डालने से और उस अपरिमित असह्य और अनावश्यक

दु.ख का जो बेचारे दीन पशु पक्षियों को प्रतिदिन सहन करना पडता है, विचार करने से और मनुष्य की दीनता, निर्धनता और दुर्दशा का जो मासभक्षण से किसी न किसी प्रकार उत्पन्न होती है, अवलोकन करने से प्रत्येक दयालु धर्मात्मा और बुद्धिमान पाठक से सहायता चाहता हू कि यह निर्दयता,घोर बध और रक्त धारा का बहाना रोकना चाहिए। यह प्रकृति और शिष्टाचार के नियमों का उल्लघन करना अपने उदाहरण व प्रभावसे हटाना चाहिए और उस आदर्श दयामें आत्मिक समय का, जो अति निकट है, हृदयसे स्वागत करना चाहिए।

ईसाइयोंके प्रत्येक नगर व ग्राममे असख्यात जीव मनुष्योंकी निर्दयता व क्रूरता से विवश होकर असह्य दु खके कारण ईश्वरसे प्रार्थना कर रहे है कि हे परम दयालु पिता! हमारी इन पापियों और जिह्वा लोलुपियोसे रक्षा कर। हा! सहस्त्रों छूरी और गराटेरे रातदिन लाखों मकानोमें जो ग्वास इसी घोर हृदय बिदारक हिंसाके लिए बने हुए है, सन २ इन बेजबान जीवोकी गर्दन पर चल रहे हैं। इस महान पापका ही फल है कि सहस्त्रों स्त्री पुरुष अनेक प्रकार के असाध्य रोगोसे ग्रसित और दु खोसे पीडित औषधालयों, कारा-ग्रहो, पागलखानो और अनाथालयोंमें पाए जाते है।

यह भयानक रक्त प्रवाह, यह निर्दयतासे पशुओंका वध करना, केवल इसी भाति रोका जा सकता है कि उन पुरुषोंके चित्त पर जिनमें दयाका कुछ भी अकुर है, ऐसा प्रभाव डाला जावे कि वे भयङ्कर विषैले मासके भोजन को त्याग देवें और उनकी सहायतासे प्रत्येक देशमें मासभोजनसे घृणा उत्पन्न कराई जावे, परंतु, किस

संसार ये मनुष्य जो अन्धकार में पड़े हुए हैं इस बातकी सत्यता को स्वीकार करेंगे जब तक कि मैं और आप ईश्वर की इस इच्छाके, कि यह घोर कष्ट दूर होजाय, सदा प्रचार और पूर्ण करने में अपने आपको सर्वथा न भुला दें अर्थात् पूर्ण रीतिसे अपने आपको इस कार्यके अर्थ अर्पित न कर दें। हम सब लोग उस पवित्र और स्वास्थ्य युक्त जीवन के लाभकी साक्षियां दे सकते हैं जो सरलता दयालुता और अनुभवसे प्राप्त होता है और जब हम अपनी जिम्मेदारीके भार को पृथक करें और इस संसारको छोड़ें तो हम को यह जानकर आनन्द प्राप्त हो कि हमसे जो कुछ हो सका हमने उस स्वर्णमय समयके लानेके लिए प्रयत्न किया जो वर्तमानमें आनेवाला है और जब दुःख, दरिद्रता, दुष्टता, और निर्दयता हमारी पृथ्वी और उस पर के निवासियोंमें न पाइ जाएँ।

इति।
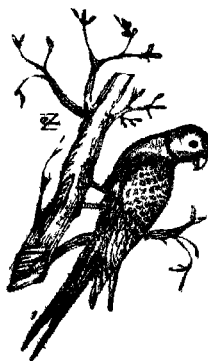
भारत जैन महामंडलके उद्देश।

१. जैन समाज की भिन्न २ आम्नायों तथा जातियों में सामाजिक तथा लौकिक एकता और मैत्री भाव का प्रचार करना।

२. जैन समाज में प्रचलित कुरीतियों का सुधार करके, उत्तमोत्तम रीतियों का प्रचार करना।

३. जीव दया का प्रचार करना।

४. स्त्री शिक्षा का प्रचार कर जैन स्त्री समाज की मानसिक शारीरिक तथा लौकिक उन्नति करना।

५. जैन जाति में लौकिक (औद्योगिक आदि) तथा धार्मिक विद्या का प्रचार करना, और सभासदोंमें जैन शास्त्रोंके अध्ययन का प्रचार करना।

६. जैन शास्त्रोंका उल्था करना तथा उसे प्रकाश करके मूढत्व का दूर करना और तीर्थंकरोंके कहे हुए सत्य मार्ग का प्रकाश करना।

७. जैन जाति में व्यापार की उन्नति करना।

चैतन्यदास, मंत्री–

भारत जैन महामंडल.

ललितपूर.

मांस-भक्षण-निषेध

बाबू कृष्णजी सहाय (कायस्थ)

लिखित

मांस-भक्षण-निषेध ।

हरिपुर (ज़िला आरा) निवासी

बाबू कृष्णजी सहाय (कायस्थ)

लिखित

—:o:—

जिसे

जैन यंगमेन्स एसोसिएशन आफ् इण्डिया

के 'जीवदया विभाग' ने

अभ्युदय प्रेस प्रयाग में

छपाकर प्रकाशित

किया ।

५०० प्रति] १९०८ ई० [मूल्य -)॥

मांस भक्षण।

परब्रह्म परमात्मा की दया से संसार में कैसे २ जीव और कैसे २ पदार्थ उत्पन्न हुए हैं। ध्यान पूर्वक विचार करने से जान पड़ेगा कि देवता और बड़े २ ज्ञानी महात्माओं से लेकर कीट पतंग वरन् वनस्पतियों तक सब में परस्पर सम्बन्ध है। सब में उसी सर्व-व्यापी भगवान की जोति परिलक्षित है और सब में उसी के गुण विद्यमान हैं। सब एक महासागर के सोते, एक ही पथ के पथिक, एक ही नियम के अनुगामी और एक ही निर्दिष्ट स्थान के जाने वाले है। सब एकही उद्देश्य से एकही कार्य्य के लिए कटिबद्ध होकर काम कर रहे हैं। वह उद्देश्य या कार्य्य क्या है?—उसी महासागर में मिलना, मोक्ष, निर्वाण, ईश्वर-प्राप्ति या नित्यानन्द जो कहिये। अतएव इस कार्य्य में एक दूसरे की सहायता अवश्य ही करनी चाहिये, क्योंकि इसके बिना किसी का काम नहीं चलने का है। प्राकृतिक नियम भी यही है। पृथ्वी वनस्पतियों और अन्न के पौधो के बढ़ने में सहायता करती है,

लतादि पशुओं को भोजन देती हैं, और ये सब मनुष्य को सहाय्य प्रदान करते है। देवता जल बरसाकर मनुष्य को भोजन देते है, और मनुष्य होम यज्ञादि द्वारा देवताओ को भोजन पहुचाते है। थोड़ा विचार करने से ज्ञात होगा कि संसार का यही नियम है और हम लोगो का एक काम भी दूसरे की सहायता बिना नही चल सकता, और उपर्युक्त नियम के तोड़ने से हम लोग पाप के भागी होते है। अतएव न्याय यही कहता है कि किसी को हानि नही पहुंचानी चाहिये। किन्तु हम लोग ऐसे मूर्ख हैं कि इस पर ध्यान नही देते और क्षणभंगुर जिह्वा के स्वाद के लिये पशुपक्षियो को बध करते वा कराते हैं, किन्तु विचार नहीं करते कि ऐसा करने से उनको कैसी हानि पहुचाते हैं। उस हानि के उल्लेख करने के पूर्व हम को यह कहना आवश्यक है कि जड पदार्थ, पशु और मनुष्य सभी धार्मिक उन्नति (Spiritual develope ment) कर रहे हैं और ऐसी ही उन्नति करते जांयगे जब तक ईश्वर में न मिल जाय, एवम् तन्मय न हो जाय। लता वृक्षादि उन्नति करके कीट, कीट से पशु, पशु से मनुष्य होते हैं और इसी प्रकार मनुष्य सहस्त्रों जन्म ग्रहण करता है, और उन्नति करता चला जाता

है। अन्त में पूर्ण ज्ञान प्राप्त करके मोक्ष पद को पाता है।

मनुष्य का समूचा ढाचा पाच भागो मे विभक्त है।

१—अन्नमय कोष (हड्डी चमड़े का बना स्थूल शरीर)।

२—प्राणमय कोष (वायु का शरीर, लिङ्ग शरीर)।

३—मनमय कोष (अर्थात् वह शरीर जिससे मनुष्य दु:ख सुख इच्छा क्रोधादि अनुभव करता है)।

४—वैनमय कोष (मनस Soul जहा जन्म २ के अनुभव इकट्ठे होते हैं जो कभी मरता नही और अनेक जन्म ग्रहण करके ईश्वर में लीन हो जाता है)।

५—आनन्दमय कोष (आत्मा अथवा ईश्वर की योति)। लता वृक्षादि के जन्म में पहले अर्थात् स्थूल शरीर की और लिङ्ग शरीर के कुछ अश की उन्नति होती है। कीट पतङ्ग और पशु के जन्म में दूसरे अर्थात् लिङ्ग शरीर और तीसरे अर्थात् अनुभव शक्ति के विशेष अंश की उन्नति हो जाती है और तब मनुष्य शरीर मिलता है। लतावृक्ष से लेकर मनुष्य तक सब इसी उन्नति के पथ के पथिक हैं।

प्राकृतिक नियमानुसार हम लोगों को चाहिये कि पशुओं की उन्नति में सहायता दें, किन्तु हम लोग ऐसे

जड़ हैं कि इस के प्रतिकूल उनको बध करके उनकी उन्नति के मार्ग में काटे बोते हैं। क्योंकि जो अनुभव वह इस जन्म में प्राप्त करता, और उन्नति करता, वह असमय वध हो जाने के कारण नहीं कर सकता, और इसके लिये उसको फिर जन्म लेना पड़ेगा। अतएव एक जीव के हिंसा करने से उसको उन्नति के मार्ग से पीछे फेरते हैं जिसकी सहायता करनी हम लोगों का कर्तव्य है। जो लोग जीव बध करते हैं और जो मास खाकर दूसरों को उत्तेजित करते है कि वे स्वार्थसिद्धि वा क्षणिक स्वाद वा पेट भरने के लिए अपने चैतन्य साथियों को क्लेश दें, और वध करें, उनको समझना चाहिये कि ऐसा करने से वे उस मार्ग में बाधा डालते हैं जिसके लिए सब पैदा हुए हैं।

(२)

पूर्व कथनानुसार पशुओं ने भी अपनी अनुभव शक्ति सुधार ली है, अतएव ये भी हम लोगों के सदृश्य सुख, दुःख, आनन्द और पीड़ा का अनुभव करते हैं। उन्हें भी भूंख लगती है, पानी नहीं मिलने से प्यास मालूम होती है, चोट लगने से कष्ट पाते हैं प्यार करने से वा भोजन पाने से हर्षित होते हैं। मनुष्य की तरह खाते हैं, पीते हैं, हँसते हैं, रोते हैं, बोलते हैं, सोते हैं और अन्य कार्य करते हैं। फिर इससे बढ़ कर निष्ठुरता और निर्दयता क्या हो सकती है कि उनकी हिंसा करें। धर्म के सदृश्य हम लोगों का अन्तःकरण भी पुकार २ कर यही कहता है कि "अहिंसा परमो धर्मः" इस को भली भाति मनन करने से यह समझ पड़ेगा कि अहिसा ऐसा धर्म समस्त भूमण्डल में दूसरा कोई नहीं है। चाणक्य नीति-कार ने भी कहा है:– "त्यजेद्धर्मन्दया हीनं", अर्थात्–जिस धर्म में दया नहीं है उसे छोड़ देना चाहिये। मास खाने वाले कह सकते हैं कि "हम हिंसा नहीं करते। केवल मांस खाते हैं, अतएव हम पाप के भागी नहीं हैं"। किन्तु यह

उनकी भूल है। यद्यपि वे हिंसा नहीं करते तथापि मांस खाने से यथार्थ औरों को उत्तेजित करते हैं, क्योंकि यदि वे न खाते तो हिंसक हिंसा नहीं करता। पाठक! यदि आप एक महीने में एक खस्सी का मांस खा जाते हों तो आप कम से कम महीने में एक जीव हिंसा के पाप के भागी अवश्य हुए। यदि आप नहीं खाते तो कम से कम महीने में एक जीव वध होने से अवश्य बचता। मनुजी ने कहा है :—

"अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रय विक्रयी।
संस्कर्ता चोपहर्ता च स्वादकश्चेति घातकः ॥"

अर्थात् आज्ञा देने वाला, बोटी काटने वाला, क्रय करने वाला, बेचने वाला, खाने वाला, सब घातक हैं।

पाठक! हम तो समझते हैं कि जो अहिंसा धर्म नहीं मानता उसको ईश्वर में प्रेम नहीं है, क्योंकि जो ईश्वर से प्रेम करेगा वह उस से evolved उत्पन्न उस की सृष्टि को भी अवश्य प्रेम की दृष्टि से देखेगा। जिसको उस अनादि अनन्त ईश्वर में दृढ़ विश्वास, उत्कट प्रेम और अटल भक्ति है वह ईश्वर से अविर्भूत उसकी सृष्टि को विनष्ट करने का कैसे साहस कर सकता है। जो उसका

वास्तविक अनुरागी है वह सृष्टि के एक एक जीव में निर्विकार सर्वज्ञ परमेश्वर की महिमा और शक्ति का अनुभव करता है। यह विचार करने और सोचने की बात है कि सर्व शक्तिमान् जगदीश्वर से अविर्भूत एक छोटे से छोटे और तुच्छ से तुच्छ जीव में भी उसका समान तेज और अपूर्व सौन्दर्य दिखाई पड़ता है। प्यारे पाठक! ज़रा जङ्गल पहाड़ो की सैर कीजिये तथा पुष्पवाटिका में घूमिये। देखिये तो कैसी २ ख़ूबसूरत तितलिया उड़ रही हैं। एक से एक सुगन्धित पुष्प और एक से एक सुन्दर रंग के फल फूल शोभा पा रहे हैं जिन पर मदमत्त मलिन्द गुञ्जार कर रहे हैं, और आनन्द में लोट पोट हो रहे हैं। कैसे २ पशु स्वछन्द विचर रहे है कि देखते ही बन आता है। तो क्या पाठक वृन्द! इनको देखने और देख कर सोचने की अपेक्षा खाही जाने में अधिक सुख होता है? यदि आप को ईश्वर से प्रेम है तो उससे आविर्भूत उसकी सृष्टि को देखकर आनन्द प्राप्त कीजिये। पाठक! यदि आपका मन किसी को पूर्ण रूप से प्यार करता हो जिस को देखने से आपकी आखें नही अघार्ती वरन् सदा देखते ही रहने की लालसा बनी रहती है तो आप एक बार सोचिये तो कि आप उसकी किसी वस्तु को विनष्ट करने

की इच्छा कर सकेंगे? कदापि नहीं। इससे आप विचार सकते हैं कि ईश्वर का यथार्थ प्रेमी मांसाहारी नहीं हो सकता। दैविक प्रेम सब धर्मों का सार है। अहङ्कारी पश्चिमी पादरी जब तक मांस खाना नहीं छोड़ते तब तक उनका ईश्वर प्रेम की शिक्षा देना मानों नक़ल बनानी है। जो लोग अपनी सभ्यों में गणना करते हैं उनका यह विचार असत्य है कि पशु मनुष्य के;सुख अर्थात खाने के लिये हैं।

(३)

मैं तो यही समझता हूं कि पशु पक्षी मनुष्य के खाने के लिये नहीं हैं। सब जाति के लिये पृथक् पृथक् खाद्य पदार्थ उत्पन्न हुए हैं और उसी के अनुसार दांत और जिह्वा है। इस विषय में बैरन क्वीवर (Baron Cuvier) ने लिखा है कि, "मनुष्य के शरीर को देखने से हमें यही कहना पड़ेगा कि मनुष्य का स्वभाविक भोजन शाक फल आदि है"। प्रोफेसर रे (Professor Ray) की मति है कि "मनुष्य मांस भक्षण के लिये कभी नही बना है"। प्यारे पाठक! मनुष्य, पशु, पक्षी आदि जीवों के दांतों की बनावट पर ध्यान देने से जान पड़ेगा कि किसका दांत किस लिये है। भैंस, बैल आदि को अवलोकन करने से दीख पड़ेगा कि इनके दांत चौड़े चौड़े और ऊपर नीचे वाले सामने २ होते हैं जिससे प्रकट है कि ये पीस कर खाने के लिये हैं। इनके द्वारा वे घास भूसा पीस कर खाते हैं। इसी प्रकार कुत्ते बिल्ली शेर आदि के दांत नुकीले होते हैं। नीचे और ऊपर के दांत ऐसे स्थान पर होते हैं कि कल्ला दबाने से एक ऊपर का दांत दो निचले दांतों के बीच में घुस जाता है, अतएव ये जीव मांस और हड्डी

सुगमता से तोड़ कर खाते हैं, मनुष्य के दांत कदापि मास खाने के लिये नहीं हैं। मेरे इस कथन को प्रोफेसर डब्लू लौरेन्स एफ.आर.एस. (Professor W Laurence F R S) भी समर्थन करते है। उन्हों ने लिखा है कि "मनुष्य के दांत मांसाहारी पशुओ से बिलकुल नही मिलते, किन्तु शाक भोजन करने वालो से मिलते हैं। हमारे आगे के दात तोड़ने के लिये और पार्श्ववर्ती दांत चबाकर खाने के लिये है। इन दातों से मास खाकर हम लोग प्राकृतिक नियम के प्रतिकूल काम करते हैं। विश्व ब्रह्माण्ड में कोई ऐसा जीव नही है जो प्राकृतिक नियम के प्रतिकूल आचरण करता हो, किन्तु हम लोग जिनको सोचने की शक्ति है वेही इस नियम का उल्लंघन करते हैं। क्या यह लज्जा की बात नही है? इसके अतिरिक्त और भी कई चिन्ह हैं जिनसे बोध होता है कि मनुष्य का भोज्य पदार्थ मास नही है। मासाहारी जीवो मे ऐसी शक्ति रहती है कि वे कच्चा मास पचा सके, और वे स्वभाविक कच्चा मास खाते भी है। ऐसे जीव प्रायः जिह्वा से पानी पीते है और उनकी आंखें बहुधा गोल होती हैं। इससे भी ज्ञात होता है कि मनुष्य मासाहारी नही है।

—o—

(४)

पशु और मनुष्य में भेद केवल यही है कि मनुष्य विचार-शक्ति-सम्पन्न होता है। इसको ज्ञान और दया है, और पशुओं को नही है। यदि यह शक्ति नहो तो दोनों मे भेद नहीं है। किन्तु प्यारे पाठक ! क्षणिक स्वाद के लिये मनुष्य भी कैसी निर्दयता करते है। चलिये हमलोग बूचर खाने (कसाई की दूकान) मे देख आवें। देखिये कितने भेड बकरी बिना अन्न पानी के बन्द की गई है, और सब क्षुधा तृष्णा से छटपटा रही हैं। बधिक के फाटक खोलते ही सब भोजन पाने की आशा मे ललक कर चले आ रहे है और पूछ हिलाते, उत्कण्ठित आखों से ताकते, शीघ्रता से पैर बढ़ाते चले जाते हैं। विश्वास, भरोसा और खाने की आशा उनके मुख मण्डल की प्रत्येक पक्ति में लिखी हुई है। पर हाय! तुरन्त वे अपनी अवस्था समझ गये। विपद की आशंका अब पैर बढ़ाने से रोकती है। बहुत मारने पीटने पर एक पैर विवस होकर बढ़ाते हैं। वह देखिये उनमें से एक बकरी बध के लिये आगे की गई। बिचारी निःस-

हाय भयभीत होकर चिल्लाती है और चिकरती है। ओफ ! किस मर्मभेदी चिल्लाहट से आकाश फाड़ रही है। ओह ! देखिये तो कैसी भयभीत दीख पड़ती है और निकल भागने के लिये किस व्याकुलता से चेष्टा कर रही है। किन्तु दुष्ट बधिक ने निष्ठुर हाथ से उसे दृढ पकड़ लिया है। वह चमचमाती हुई छुरी बिचारी के कंठ के निकट ले आता है। अब तो बिचारी और अधिक विलाप करती है और दया के लिये प्रार्थना करती है। कैसी दया ? उसका अपराध क्या है ? अपराध यही कि बकरी की योनि में पैदा हुई और खाने वालों की क्षुधा जगाई। पाठक ! इस समय बधिक का अन्तः-करण कुछ कहता होगा ? अवश्य कहता होगा कि ओ हत्यारे, कैसी बकरी विलख रही है ! किस प्रकार तुम्हारी आखों से भीख चाहती है। क्या इसकी गगन भेदी चिल्लाहट से तुम्हारा हृदय नहीं पिघलता ? क्या यह तुमसे पिता के सदृश्य प्रेम की भागिनी नहीं है। ओह ! तुम तो अबभी उसी निष्ठरता से घूर रहे हो। मैं देखता हूं कि तुम अपनी भूख बुताने के लिए इसके जीवन दीप का अवश्य निर्वाण किया चाहते हैं। इस पर दया करो। तुम्हारे खाने के लिए अन्न आदि बहुत

से भोज्य पदार्थ हैं। मांस मत खाओ। इसका असर बुरा होता है। यह हृदय को कठोर बनाता और दया को नष्ट करता है। तुम्हारी कार्रवाइयों से तो यही शिक्षा मिलती है कि तुम्हारे सिवाय इन छोटे पशु पक्षियों को जीव धारण करने का अधिकार नही है। सब के जीव बराबर हैं। मेरे प्रमाण की सत्यता जाच कर देख लो। उसी छूरी से अपने हाथ का चमड़ा ऐसा काटो कि रुधिर प्रकट हो। देखो तुम्हे कष्ट होता है वा नहीं। अब एक उंगली उसमे गड़ा दो। देखो तो तुम चिल्लाते हो वा नहीं। अब उसी छूरी से उसी आसानी से अपना गला तो काटो जिस आसानी से उस बिचारी बकरी का गला काटने पर तत्पर हुए हो। क्यों? डरते क्यों हो? क्यों सहमते हो, और क्यो थंमते हो? क्योंकि तुम्हे अपनी जान प्यारी है और मरना नही चाहते। यदि तुम्हारी जान तुम्हें प्यारी है तो क्या उसको भी यह बात प्यारी नही है, कि वह भी स्वछन्दता पूर्वक ससार मे विचरण करे और आनन्द से जीवन का लाभ उठावे? फिर तुम उसे क्यों मारते हो? क्योंकि तुम बलवान् हो। यदि तीन चार मनुष्य तुम पर एक साथ आक्रमण करें और तुम्हारे हाथ पैर बाध कर तुम्हें बध करना चाहें तो क्या तुम चीख़ पर चीख़ नहीं

मारोगे ? तुम किस प्रकार अपनी बेबसी पर छटपटा कर ईश्वर से मुक्ति पाने के लिए प्रार्थना करोगे। इसी प्रकार तुम्हें समझना चाहिए कि वह बकरी भी रो कर ईश्वर को विनय और तुमसे दया के लिए प्रार्थना करती है। यदि तुम इसे प्यार करो तो यह भी तुम्हे प्यार करेगी। क्या तुमने पालतू पशुओ को नही देखा है कि किस प्रकार वे अपने स्वामी को प्यार करते है और उसके पीछे पीछे चलते है (मानो वे अपने प्रभु का वियोग सहन नही कर सकते है) और उसके दु:ख से दुखित होते हैं। अहा! वे किस भाति कृतज्ञता, प्रेम और भक्ति दिखाते हैं कि मनुष्य कदाचित् ही दिखा सकता है। तुम क्षणिक स्वाद के सुख की अपेक्षा और अधिक आनन्द लाभ कर सकते हो यदि तुम उसे छोड दो और उसे प्यार करो। किन्तु हाय! यह बे पीर नही मानने का। अब देखो वह छुरी निकट लाया। बिचारी बकरी अधिक विकलता से में में करने लगी, मारे भय और कष्ट के आंखें टँग गई हैं सास फूल रही है। हाय! हाय! सब रग तन गये हैं, बाल खड़े हो गये है, और वह स्वेत बूद से भीग रही है। ओह! कैसा हृदय विदारक दृश्य! अन्ततः छुरी कंठ पर रख दी गई। कैसी छटपटाहट है, किन्तु अब

व्यर्थ के उद्योग से क्या होता है। हरे ! हरे ! हे ईश्वर दया कर ! ऐं यह लो अब तो छुरी कंठ में पैठ गई। हाथ पैर पटकना कुछ काम न आया। एक गरगराहट के बाद बोलना बन्द होगया। सांस रुक गई। जीवन दीप निर्वापित हुआ। गर्म लोहू के फौआरे चलने लगे और सर धड़ से अलग होगया। बिचारी बकरी का प्राण पखेरू तन पिञ्जर से उड़ गया। ऐसे दृश्य पर भी जिसको दया का उद्भावन न हो, करुणा रस का सञ्चार न हो, उसकी मनुष्य में गणना कैसे हो सकती है? अन्तःकरण आदमी को ऐसा करने से अवश्य रोकता है, पर खेद यही है कि कोई सुनता नहीं। देखिए आप के प्रसिद्ध धर्म के प्रणेता मनुजी मास खाना निषेध करते हैं यथा श्लोकः—

"नाकृत्वा प्राणिना हिंसा मास मुत्पद्यते क्वचित्।
नच प्राणि वध· स्वर्ग्यस्तस्मा संविवर्जयत्॥
समुत्पति च मासस्य वध बन्धौ च देहिनाम्।
प्रसमीक्ष्य निवर्तेत सर्व मांसस्य भक्षणात्॥"

(५)

सुहृद् पाठक वृन्द ! अब यह विचारणीय है कि मास खाने से क्या हानि और क्या लाभ है। बहुत लोगों का ऐसा विचार है कि मास खाना बहुत लाभदायक है तथा शरीर को बल प्रदान करता है। किन्तु यह विचार युक्ति सङ्गत नही है। मांस रहित शाक भोजन मांस भक्षण से बहुत ही उत्तम और शुद्ध होता है क्योंकि शाक में लाभदायक परमाणु विशेष होते हैं। विचारना चाहिये कि शरीर रक्षा के लिये भोजन में ४ मुख्य वस्तुओं की आवश्यकता है जिससे अंग प्रत्यङ्ग में पुष्टी पहुचती है। (१) Nitrogens, वह भोज्य पदार्थ जिसमें नाइट्रोजन (एक प्रकार की बलवर्धक वायु) अधिक हो—जैसे दूध बादाम आदि। (२) Hydro Carbons, वह वस्तु जिसमें चिकनाई अधिक हो—जैसे घी, तेल, मक्खन आदि। (३) Carbo pydrates, जिस में शक्कर हो—यथा गेहूं, चावल आदि। (४) Inorganic or Mineral, जिस में नमक की विशेषता हो। इन चार के अतिरिक्त पानी भी आवश्यक है। शारीरिक स्वास्थ्य रक्षा के

विद्वान डाक्टरों ने भोजन के उपर्युक्त ४ विभाग किये हैं, और यह भी निश्चय किया है कि मांस की अपेक्षा शाक वस्तुओं में ये पदार्थ विशेष पाये जाते हैं। तथा नमक एक ऐसी वस्तु है कि इसके शरीर में नहीं होने से बहुत सी बीमारियां पैदा होती हैं। अब हम लोगों को देखना चाहिए कि मांस में कौन २ परमाणु हैं। मास मे केवल दो चीजें हैं एक नाइट्रोजन और दूसरी चिकनाई। यद्यपि कोई कोई डाक्टर ऐसा कहते हैं कि इसमें नमक भी है किन्तु इसको बहुत कम लोग मानते हैं। इन दो उपस्थित वस्तुओं में चिकनाई का भाग तो घी तेल से अधिक मास में होही नहीं सकता। रही नाईट्रोजन वायु की बात सो इस वायु की उत्पति पौधों से होती है। इनमें बलकारक वायु बहुत शुद्ध रूप से भरी रहती है। शाक भक्षण करने से ही पशु पक्षियों के मास में यह वायु पाई जाती है। फिर शाक से मास में अधिक नाईट्रोजन कैसे हो सकती है। डाक्टर लोग लिखते हैं कि (Mutton) भेड़ी के मास में १०० अंस मे १५ अंस alluminate (नाईट्रोजन का किस्म है) होता है।(Becon) सूअर के मास में ८८। मछली में १८१। सूखे मटर में २२, और पनीर में ३३५। इससे यह स्पष्ट है कि मांस में इस वायु की भी अधिकता नहीं

रहती। यह बात बड़े २ डाक्टर भी मानते हैं कि बल वृद्धि के लिए शाक फल दूध आदि का भोजन बहुत ही उत्तम है। इस विषय में कुछ विद्वान डाकृरों की भी सम्मति लिखी जाती है—

सरवेन्‌जामिन वार्ड रीचर्डसन एम० डी० (Sir Benjamin WardRichardson M D) कहते हैं, "यह बात सत्य है कि शाक भोजन मास भक्षण से विशेष बलदायक है"। लार्ड प्रेफेअर सी० बी० (Lord Playfair C. B) ने कहा है कि "मनुष्य को मास भक्षण की आवश्यकता नही है"। डाकृर एफ० जे० साइक्स बी. एस. सी. (Dr F J Sykes B Sc) का कथन है कि "शरीर की रगों के बनाने के लिये मास भोजन अच्छे चुने हुए शाक भोजन के सम्मुख कुछ नहीं है" डाकृर फ्रान्सिस वाचर (Dr Francis Vacher F R C S,F C S) की सम्मति है, "मेरा विश्वास यह नहीं है कि मास भोजन किसी प्रकार से मनुष्य की शारीरिक और मानसिक शक्ति के लिये अच्छी चीज़ है"। "दी अमेरिकन प्याक्टिशनर एन्ड न्यूज" (The American Practitioner and News) के जुलाई १९०२ के अंक में डाकृर एफ० एम० कूम्स (Dr F M Coomes) ने एक विज्ञान सम्बन्धी लेख में लिखा है, "सब से प्रथम मुझको यह बात कह देनी चाहिये कि मनुष्य के शरीर

को पूर्ण स्वास्थ की अवस्था में रखने के लिये पशु मास की आवश्यकता नही है"। इन प्रमाणों से प्रकट है कि शाक भोजन मांस भक्षण से विशेष कार्य्यकारी है। अब मैं यह प्रमाणित करता हूं कि मास भक्षण से बड़ी बड़ी बीमारियां पैदा हो जाती हैं:—

डाकृर जोशिया ओल्डफील्ड(Dr Josiah Oldfield M.S C S L R C P)साहेब लिखते हैं, "मास प्रकृति विरुद्ध भोजन है अतः शारीरिक व्याधियों को पैदा करता है। ज्वर, क्षय, विस्फोटक आदि रोग इसी के कारण विशेष देखने में आते हैं"। पेरिस यूनिवर्सिटी के डाकृर किंग्स फोर्ड (Kingsford)कहते है "मास भक्षण से बहुत से दुःख-दायक रोग उत्पन्न होते हैं"। डाक्टर एफ० एम० कूम्स (Dr F M Commes)कहते हैं "मास से वात रोग और ऐसी ऐसी और भी बीमारिया हो जाती है। इस लिये मास छोड़ कर हमें रोग रहित भोजन करना चाहिए"। डाकृर जे० एच० कैलोग (Dr J H Kallogg) कहते हैं "यह बड़े हर्ष का विषय है कि संसार भर के वैज्ञानिक इस बात पर सम्मति प्रकट कर रहे हैं कि पशु-मास पवित्र भोजन नही है। इस में विष भरी और मैली बहुत सी चीज़ें हैं जो जानवरों के शरीर

में स्वभावतः पैदा होती हैं। शाक बल को जमा करता है और जानवर बल बखेरता है। भिन्न २ प्रकार की मैली और विष भरी वस्तु पशुओं में पैदा होती रहती है। रक्त सदा रगों के अन्दर से आया जाया करता है। और अपने बहाव में विष भरे पदार्थों को उनके बनने के साथही हटाता रहता है। रक्त द्वारा हटाये हुए विष स्वास, मूत्र, पसीना आदि के रूप मे बाहर निकला करते हैं। मृत पशु के मांस मे यह विष विशेष पाये जाते हैं। इन विषो का शरीर से निकलना मरने के साथ ही बन्द हो जाता है किन्तु इनका बनना मरने के बाद भी कुछ देर तक जारी रहता है। एक प्रसिद्ध फ्रांस के डाक्टर ने कहा है कि, 'यख़नी वास्तव में विष भरे पदार्थों का पुञ्ज है'। बुद्धिमान डाक्टर लोग इन बातों को पहचानते जाते हैं और अपने बर्ताव में भी ला रहे हैं"। यह बात याद रखने की है कि मास कभी अच्छी दशा में नही रह सकता क्योंकि जानवर के मरते ही सड़ने का कार्य्य आरम्भ हो जाता है। इस से रोगग्रस्त होने की अधिक सम्भावना रहती है। क्योंकि यह मेदे को मैला बनाता है और पचने में कड़ा होता है। हम लोगो के धर्माचार्य्य मनु जी भी कहते हैं।

"न भक्ष्यति यो मासं विधिं हित्वा पिशाचवत्
स लोके प्रियता याति व्याधिभिश्च नपिड्यते।"

अर्थात् जो मनुष्य कही हुई विधि को छोड पिशाच के समान मास को नही खाता है वह लोक का प्यारा होता है और रोगों से भी नही पीडित होता है।

बहुत मास भक्षक समझते है कि शाक फल आदि खानेवालों की अपेक्षा माम भक्षी विशेष बलवान होते हैं। किन्तु यह उनकी भूल है। मेरा विचार इसके प्रतिकूल है। किसी का बलिष्ट होना मांस खाने पर निर्भर नहीं है। जर्मनी मे जो अभी पैर गाडी वालों की दौड हुई थी उसमे अच्छे नम्बर पानेवालो का आहार शाक फल आदि था। डाक्टर जे० डी० क्रैग (Dr J D Craig) लिखते है मास भक्षी अपने शरीर की पुष्टता का घमड करते है यदि यह बात ठीक भी हो तौ भी शाक भोजन करनेवालों सी धीरता उनमे नही हो सकती। इसका कारण यह है कि मास भोजन का असर थोडी देर तक रहता है। इस लिए स्यात् यह सम्भव हो कि मासाहारी थोडी देर तक बहुत काम कर लें, किन्तु वे शीघ्र ही हार जाते हैं और उनका बल नष्ट हो जाता है। इसके प्रतिकूल दूध फल आदि भोजन जनित बल दृढ़ और चिरस्थाई

होता है। शीघ्र नष्ट नही होता, क्योंकि इसमें असली शक्ति होती है और विष नहीं होता। शाक भोजन से तृप्त पुरुष यदि काम पड़े तो बिना खाये हुए आराम के साथ देर तक काम कर सकता है। जर्मनी और इङ्गलैण्ड में प्रसिद्ध २ शाक भक्षी और मास भक्षी पहलवानों की कुश्तिया हो चुकी है जिनमे शाक भक्षियो ने जय पायी। यह बात प्रसिद्ध है कि यूनान की सब से बलिष्ट और सहनशील जाति शाक भक्षी स्पार्टन की थी। यूनान के उन पहलवानो को याद करना चाहिये जिन्होंने अपने को ओलिम्पिया और इस्थीमिया के खेलो के लिये तय्यार किया था। इनके चरित्र पढने से ज्ञान पड़ेगा कि ये लोग बादाम, अंजीर, पनीर जौ आदि भोजन करते थे। रोम के पहलवान जो अपने बल ही के कारण प्रसिद्ध थे वे जौ की रोटी तेल घी खाकर रहते थे। चार्ल्स डारविन (Charles Darwin) ने अपने एक पत्र मे लिखा है, "चीली की खानो मे काम करने वाले मजदूरो को जैसा परिश्रमी हमने देखा वैसा किसी को नही देखा था"। इन्हीं के बारे मे सर फ्रान्सिस हेड (Sir Francis Head) कहते हैं, "ये ढाई मन वजनी धातु के बोझे ८० गज तक १२ दफे दिन मे ले जा सकते हैं और इनका भोजन रोटी अञ्जीर, मटर और भुने हुए गेहूं है"।

एफ० टी० उड (F T Wood) अपनी पुस्तक 'डिस्कवरी औफ एफीसस' (Discoveries of Ephesus) में लिखते हैं कि स्मिर्ना के तुरकी मज़दूर बहुधा ५ से ७ मन तक बोझा अपनी पीठ पर ले जाते हैं। एक दिन एक कप्तान ने मुझे एक मज़-दूर को दिखाया जो १० मन का गट्ठा लाद कर ऊपर के गोदाम मे ले जा रहा था। ऐसा बल होने पर भी वे शाक अन्न आदि खाया करते थे। (C W Lead beater) सी० डब-लू० लीड बीटर साहेब कहते है, "मैने दक्षिण के तामीली कुलियो की शक्ति देखी है। इनका बोझा ढोना देखकर अचम्भा होता है। एक मज़दूर को बोझा ढोते देख एक बार एक कप्तान ने मुझ से कहा कि लण्डन में इसी बोझ के लिये ४ मज़दूरो की आवश्यकता होगी। ये सब मज़-दूर भात रोटी के खाने वाले थे। डाक्टर अलकजैण्डर पहले मास खाते थे किन्तु उनको यूरिक एसिड Uricacid नाम की एक मूत्र सम्बन्धी बिमारी हो गई डाक्टरों ने उनको इसका कारण मास खाना बताया। अतएव उन्हें मास छोड़ना पड़ा। उन्होंने लिखा है "शाकाहार करने से मैं इस बीमारी से रहित हुआ और मेरी शक्ति ऐसी बढ़ गई जैसा कि मैं १५ वर्ष पहले था"।

पाठक गण! आप उपर के दृष्टान्तों से समझ सकते

हैं कि मास खाने से कैसी २ बिमारियां पैदा होती हैं। बल वर्धन के लिये भी मास खाना कदापि आवश्यक नहीं है। यद्यपि इसके द्वारा अङ्गों में पुष्टता आती है और शरीर में कुछ बल भी होता है किन्तु मैं उपर कह चुका हूं कि यह आन्तरिक और असली नही होता। जैसे नशे वा क्रोध से मनुष्य को एक प्रकार की शक्ति हो जाती है और उस अवस्था में वह साधारण से कुछ विशेष बल का काम कर लेता है पर नशा या क्रोध हट जाने पर कुछ नही रहता बरन उस समय असली बल भी कम हो जाता है, मास भक्षण द्वारा प्राप्त बल की भी वही हालत है। फल, मेवा, दूध, घी से वास्तविक शक्ति मिलती है। दूध वीर्य्य को बढाता है और मस्तिष्क को बलवान बनाता है। मास से केवल (Muscles) हड्डी चमडे को लाभ पहुचता है। सिर्फ दूध खाकर मनुष्य जीवन व्यतीत कर सकता है, किन्तु मास खाकर कोई नही जी सकता। मै उपर लिख चुका हूं कि शरीर धारण करने के लिये ५ चीजों की आवश्यकता है'— नाइट्रोजन, हाइड्रोकार्वन (चिकनई) कार्वोहाइड्रेट (शक्कर) मिन्-रल (नमक) और जल। दूध मे ये सब वस्तुएं इस अन्दाज से हैं जितना मनुष्य को जीवन धारण करने के लिये

प्रत्येक चीज़ों की आवश्यकता है। मास त्याग की पुष्टता में मुझे यह भी कह देना चाहिए कि अत्योत्तम शाक भोजन मास से सस्ता पड़ता है। मि० बूथ कहते हैं कि "गेहूं बूट बादाम आदिका शाक भोजन मास से सस्ता पड़ता है। जिससे किसी व्यक्ति को विशेष लाभ नहीं उसके लिये वह क्यों अधिक व्यय करता है समझ में नहीं आता।"

---

(६)

मैं ऊपर यह दिखा चुका कि मास और शाक भोजन से शरीरिक हानि लाभ क्या२ पहुंचते है। अब यह विचार करना है कि इनसे मानसिक (mental) और आत्मिक (Spiritual) हानि लाभ क्या है। मासभक्षण मनुष्य को उसकी मानसिक और आत्मिक उन्नति (Mental and spiritual development) मे बहुत बाधा डालता है। शारीरिक लाभ कदाचित् कुछ हो जैसा गत प्रबन्ध में लिखा गया है, किन्तु इसके लिए तो बहुत ही हानिकारक है। मास खाकर आदमी आत्मिक उन्नति (Spiritual Developement) कुछ भी नही कर सकता। मास आत्माका सम्बन्ध अशुभ कर्म के परमाणुओं सेकराता है। प्राचीन और आधुनिक विद्वान् इस बात के सहमत है कि आत्मिक उन्नति के मार्ग पर चलने वालों के लिए शुद्ध भोजन की आवश्यकता है। आत्मध्यान के लिए मन का वश करना तथा इन्द्री-निग्रह करना आवश्यक है, किन्तु यह बात बिना मास त्याग किये नही हो सकती, क्योंकि मास मस्तिष्क को मैला करता है और वासना तथा इच्छाओं के तृप्त करने

की कांक्षा को बढ़ाता है। हम लोगों की भौतिक इच्छायें जो पूर्व ही से प्रबल हैं, और सदा रोक चाहती हैं, उन्हें और भी प्रबल बनाना कभी उचित नहीं हो सकता। मास खाने से मनुष्य के स्वभाव औरप्रवृति कुछ उसी ओर झुकती हैं, और वह उन्नति के बदले अवनति की ओर पीछे फिरता है। अतएव जो मनुष्य अपने को धार्मिक उन्नति Evolution के मार्ग पर रखकर मोक्ष की कामना रखता है उसको मास आदि खाकर अपने कोपशुवत नहीं बनाना चाहिये। इसके खाने से शरीर आत्मिक कार्यों (Spiritual work) के अयोग्य होजाता है क्यों कि उसकी वासना और इच्छाये ऐसी प्रबल हो जाती है कि दमन नही हो सकती। मासाहारी का चित्त एकत्रित होना तथा अचल रूप से पूज्य देव पर ध्यान लगना तो सर्वथा असम्भव है, क्योंकि आत्मविचार एक सूक्ष्म विचार है और ध्यान करना एक सूक्ष्म कार्य्य है और कोमल परणाम वाला ही अपने परणामों को उस ओर लगा सकता है। मास भोजन के समय वा उसकी ओर चित्त रहने से पशुओं की ओर निर्दयता का भाव रहेगा। यह भाव जैसे उसके बाहरी शरीर की अवस्था को बदलेगा वैसेही अन्दर की दशा में भी परिवर्तन करेगा। अर्थात् यह भाव कर्म के अशुभ

कर्मवाले परमाणुओं को अपनी ओर खींचेगा इस से जीव का कार्मांण शरीर खराब बनेगा। यह कार्मांण शरीर हमको दूसरे भव में खोटी गति में ले जावेगा। भोज्य पदार्थो में अपनी जाति की ओर प्रवृत करने की एक आकर्षण शक्ति होती है अतएव पशुओ के खाने से स्वभाव पशुवत हो जाते हैं। यह प्राकृतिक नियम है और इसे आधुनिक विज्ञान भी समर्थन करता है कि जिस पदार्थ के शरीर बने हैं उस मे सदा एक परिवर्तन होता रहता है। और सात वर्ष में शरीर के एक एक अणु बदल जाते हैं। यह भोज्य पदार्थ के अनुसार होता है। मास तथा अन्य तामसिक पदार्थ शरीर को सात ७ वर्ष मे मैला और अपवित्र कर देते हैं। और शरीर के अणुओ (Molecule) के अपवित्र होने से मनुष्य के सोच विचार आचार व्यवहार सभी बिगड जाते है। किसी अङ्गरेज ने कहा है.–

"The basis of all our actions, emotions and thoughts is vibration, whether on physical, astral or mental planes, that the nature of vibrations depends on the degree of and purity refinement of the matter composing it, also that vibrations are coming from without and stricking upon the vehicles till a responsive vibration is given by them"

सारांश यह कि हम लोगों का आचार विचार सब भोज्य पदार्थ पर निर्भर है क्योंकि जैसे पदार्थ का शरीर बनेगा वैसेही हम लोगों के आचरण कार्य्य विचार और चित्त विकाश होंगे।

अतएव हम लोगो को ऐसी चीज नही खानी चाहिये जिससे अगों की बनावट में गन्दगी आवे और उससे बुरे असर हों।

इति

मांस-भक्षण पर कुछ सम्मतियां।

"Behold I have given you every herb bearing seeds and trees yuuing, fruits they shall be your meat."

Bible

"लँइ यनाल अल्लाह, लहुमहा वलादिम।
ओहा वलेकिन यना, लह्न अत्तक वामितकुम्"

कुरान

"मैं प्रधानता से शाकाहारी हूं, और वृथा अपने लिए किसी भी जीवधारी के प्राण हरण न करूगी। .. .. प्राणीमात्र की ओर से मैं समग्र स्त्री पुरुषों से अपील करती हू कि तुम अपनी थालियों को खून से कलंकित न करो"

मिसेज़ एनी वेसेन्ट

"हमारे भोजन के पदार्थों में पशुओं के मास की आवश्यकता नहीं है। .. सच्चे दयावान् मनुष्य केवल वही है जो मास भक्षण न करता हो"

रल्फ वाल्डो ट्राइन

"मनुष्य स्वभाव से शाकाहारी है; शरीर की आरोग्यता के लिए मांस की आवश्यकता नहीं"

हेनरी यस साल्ट।

६ "मेरा व्यवहार चाहे जैसा हो, परन्तु इस में मुझे ज़रा भी शक नहीं कि जैसे जंगली लोग ज्यों २ उनका सभ्य-जातियों के साथ संसर्ग होता जाता है त्यों २ वे एक दूसरे को भक्षण करना छोड़ते जाते हैं वैसे ही मनुष्य-जाति ज्यों २ उन्नति करती जायगी त्यो २ वह अन्य जीव-धारियों को भक्षण करना छोड़ती जायगी"

थारो

"तुच्छ से भी तुच्छ जीवधारी के दुःख के साथ हमें अपना सुख तथा गर्व मिश्रित नहीं करना चाहिए"

वर्डस् वर्थ

सूचना ।

यह पुस्तक मांस, भक्षण करने वाले हिन्दू, मुसलमान तथा अन्य भारतवासियों में बांटने के लिए प्रकाशित की गई है । जो दया धर्म के पालक जीव दया के प्रचार के लिए इसका प्रचार करना चाहें वे नीचे लिखे पते से मंगालें:—

सेक्रेटरी

जैनयंग मेन्स एसोसिएशन

इलाहाबाद

सेठी जी के मामले में

लोकमत

१

प्रकाशक

श्रीभारत-जैन-महामण्डल

मूल्य ।)

१९१५

सूचना

सेठीजी के मामले पर दुःख प्रकट करने और जयपुर-महाराज और श्रीमान् वाइसराय महोदय से उनको मुक्त करने की प्रार्थना करने के लिये भारतवर्ष भर में जो जैन अजैन सभायें हुई हैं उनकी कार्यवाही की तथा उनके भेजे हुए तार, प्रार्थनापत्र, प्रस्तावादि को संगृहीत रिपोर्ट शीघ्र प्रकाशित की जायगी।

श्रीमान पण्डित अर्जुनलाल सेठी, बी. ए,

डाइरेक्टर, भारतवर्षीय जैनशिक्षाप्रचारक समिति

श्रीमान् पं० अर्जुनलाल सेठी, बी.ए., के मामले में

लोकमत

श्रीयुत जगमन्दरलाल जैनी, एम० ए०, बैरिस्टर एटला और जज हाईकोर्ट इन्दौर तथा श्रीयुत अजितप्रसाद, एम० ए०, एलएल० बी०, वकील हाईकोर्ट लखनऊ ने अपने सुप्रसिद्ध अङ्गरेज़ी जैन-गज़ट के दिसम्बर १९१४ के अङ्क में निम्न प्रकार लिखा है:—

> "गजभुजङ्गमयोरपि बन्धनं
> शशिदिवाकरयोर्ग्रहपीडनं ।
> मतिमतां च विलोक्य दरिद्रतां
> विधिरहो बलवानिति मे मतिः ॥

जैनसमाज में केवल एक ही पुरुष था जो कि वास्तव में ग्रेजुएट-पण्डित कहला सकता है, गत ९ महीनों से जैन-समाज उन्हीं पण्डित अर्जुनलाल सेठी से वंचित है। गत वर्ष दिसम्बर मास में बनारस के स्याद्वाद महोत्सव पर उनके अंतिम दर्शन हुए थे और तब उन्होंने टाउनहाल में धार्मिक विषयों पर प्रशंसनीय व्याख्यान दिये थे। गत मार्च

महीने में आप इन्दौर-निवासी रायबहादुर श्रीमान् सेठ तिलोकचन्द कल्याणमल द्वारा स्थापित प्रथम जैन हाई स्कूल के प्रिंसिपल थे और उक्त स्कूल ही में वे दिल्ली षड्यन्त्र और आरा के हत्या वाले अभियोग से सम्बध रखने के सन्देह में पकडे गये थे। ये मुकदमे तो शनैः २ होते रहे और सेठी जी जून मास तक इन्दौर ही के कारागृह में रक्खे गये और तब वे जयपुर भेज दिये गये। वहाँ वे अभी तक कारागृह ही में कष्ट भोग रहे है। दोनों मुकद्मो का फैसला हुए बहुत समय हो चुका और दोनो में से किसी में भी ऐसी कोई बात नही मिली कि जिसमे सेठी जी का कैद में रखना ठीक समझा जा सके। जैनसमाज को इससे बहुत कष्ट हुआ है और हमे ज्ञात हुआ है कि उन्होंने भारत सरकार और जयपुर महाराज के पास नम्र प्रार्थनायें और तार भेजे हैं परन्तु परिणाम किञ्चिन्मात्र भी सन्तोषजनक नही हुआ। किसी मनुष्य को विना अभियोग जेल मे रखने के लिये ६ महीने तो बहुत अधिक समय है। इसके अतिरिक्त-हमे पता लगा है कि उनका कारागृहवास एक प्रकार निर्जन कारावास से भी अधिक कष्टप्रद है उन्हें किसी मित्र अथवा सम्बधो से मिलने की आज्ञा नही। यहाँ तक कि उनकी पत्नी और बच्चो को भी उनसे भेंट नहीं करने देते। साथियो से मिलने जुलने की मनाही इतना कडा दण्ड समझा जाता है कि दण्डधाराविधायक लोग किसी भी मनुष्य को लगातार एक सप्ताह से अधिक के लिये यह दण्ड नही देने देते और सब मिलाकर भी तीन महीने से अधिक नही हो सकता। (देखो ताज़ीरातेहिन्द धारा ७३-७४)

हमें देशी राज्यों के क़ानून और नियमों से विशेष परिचय नहीं है परन्तु यह हम अवश्य कह सकते हैं कि ब्रिटिश सरकार का कोई भी मजिष्ट्रेट बिना अभियोग और बिना दोष लगाये किसी मनुष्य का ६ महीने तक हवालत में रखना सहन नहीं कर सकता था।

हमे विश्वास है कि जयपुर के रेज़ीडेंट महाशय इस मामले की जाँच करेंगे और उन्हें मुक्ति प्रदान कराके अथवा उनके मामले के तय करने के प्रस्तावों के प्रकाशित करके पं० अर्जुनलाल जी सेठी की पत्नी और बच्चों और समस्त जैन समाज की चिन्ता के दूर कर देंगे।

हमें यह भी मालूम हुआ है कि जेल में सेठीजी का स्वास्थ्य बहुत बिगड गया है और यदि बहुत शीघ्र इस ओर ध्यान न दिया जायगा ते ६ महीने से जे कष्ट वे सह रहे हैं वे शीघ्र उनके शरीरपात के कारण हो जावेंगे। यदि उनका अपराध हे भी ते चाहे वह कैसा ही घोर क्यों न हे हमें आशा और विश्वास है कि दया के नियम और मनुष्यत्व के आदेश अवश्य ही अपना प्रभाव दिखावेंगे और तुरन्त ही सेठी जी के अब कोई शारीरिक कष्ट न पहुँच सके इसका उचित प्रबध हो जायगा।

\+ + + +

परन्तु हमे आशा है कि प० अर्जुनलाल जी सेठी बी० ए० को उस जेल से जिसमे वे गत मार्च से बिना दोष लगाये बिना अभियोग चलाये बन्द है छुड़ाने का जे बृहत् प्रयत्न हो रहा है उसमे शीघ्र ही सफलता प्राप्त होगी।

क्या हम आशा कर सकते हैं कि हमारे न्यायप्रिय और सहानुभूतिपूर्ण वाइसराय इसका बहुत शीघ्र प्रबन्ध कर देंगे कि यह दुःखमय और शोकपूर्ण गृह जिसमें सेठीजी की पत्नी और बच्चे रहते हैं अवश्य ही बड़े दिन पर जब कि सारा ख्रीष्टीय संसार आनन्द मनाता है सुखमय और आनन्दपूर्ण बना दिया जायगा ॥"

बनारस के स्याद्वाद महोत्सव पर मिस्टर अजितप्रसाद, एम० ए०, एल०एल०बी०, वकील लखनऊ और भारतजैनमहामण्डल के जेनरल सेक्रेटरी ने अपनी वक्तृता में पं० अर्जुनलाल सेठी बी० ए० के मामले के सम्बन्ध में निम्न लिखित कहा था :—

"और मुझको इस बात से बहुत दुःख हुआ है कि हमारे एक मात्र ग्रेजुएट-पण्डित महाशय अर्जुनलाल सेठी बी. ए. जिनकी कि इस हाल में दी हुई धार्मिक वक्तृताओं से जैनियो और अजैनियो दोनों को बहुत कुछ शिक्षा मिली थी और जो कि सब को आनन्द देनेवाली और सब के लिए बहुत अमूल्य थी, आज जयपुर राज्य की जेल में बिना किसी मुकद्दमें के, बिना किसी चार्ज के सड़ाये जा रहे हैं। जिस अपराध के कारण कि उनको कारागृह में रहने की आज्ञा हुई है उसको असत्य साबित करके अपने आप को निर्दोष प्रमाणित करने का तो

क्या उनको तो इस बात का भी कोई तनिक सा अवसर नहीं दिया गया है कि वह उन चार्जों को अच्छी तरह स्वयं जानें भी। हम जैनी लोग जो कि सेठीजी को जब से उन्होंने कालिज छोड़ा है और जब से उन्होंने जैनसमाज में विद्या-प्रचार का कार्य आरम्भ किया है तब से जानते हैं; हम जो कि उनसे अच्छी तरह गूढ़ परिचित हैं, हम जिनको कि उनसे मिलने का रात्रि दिवस काम पड़ा है, हम जिन्होंने कि उनके साथ कार्य किया है और जिन में कि उन्होंने काम किया है, हम जैनी लोग इस बात को अच्छी तरह कह सकते हैं कि राजनीति उनके कार्य के सीमान्तरित नहीं थी। वह राजनैतिक कार्यों से सम्बन्ध नहीं रखते थे। उनका कुल समय तो पीछे पड़ीहुई जैनसमाज को उठाने के कार्यों के स्कीमों में ही लग जाता था। वह कभी भी किसी बड़े जैन उत्सव को नहीं छोड़ते थे, चाहे वह दक्षिणी मैसूर, अथवा उत्तरीय इटावा, अथवा पूर्वीय हजारीबाग़ या पश्चिमीय लाहौर में कही क्यों न हो।

हम नौ ६ मास से अधिक बराबर चुपचाप बैठे हैं। हमने अभी अपने दुःख को प्रकट नही किया है। हम कर्म के अटल और आवश्यक सिद्धान्त में विश्वास रखते हैं। परन्तु हम सुस्त पड़े रहने वाले भी नहीं हैं। हमें पुरुषार्थ में भी श्रद्धा है और हमको यह भी विश्वास है कि कर्मों की शक्तियों का परिणाम, उनकी दिशा और उनका काल और उनके फल की प्रकृति में हमारे यत्नों से अदलबदल हो सकती है। शोकग्रसित जैनजाति सेठीजी के लिये बराबर प्रार्थना कर रही है, उनके लिये बराबर कुछ न कुछ अपने आप को कष्ट दे रही है; वह आत्मसंयम

सम्बन्धी विशेष नियमों का पालन कर रही है जिससे कि उन बुरे कार्यों का प्रभाव कुछ कम हो जावे जिनके कारण उसको आज पण्डित अर्जुनलाल सेठी की सेवाओं से वञ्चित होना पड़ा है। जैनजाति ने श्रीमान् महाराजा जयपुर और मान्यवर वाइसराय साहिब की सेवा में प० अर्जुनलाल सेठी के छुटकारे के लिये प्रार्थना करने का राजभक्ति से परिपूर्ण कार्य किया है और बराबर कररही है। हमको आशाहै और विश्वास है कि हमारे यत्नों का फल अभी शीघ्र अवश्य मिलेगा।

यह "न्याय" का पत्र भारतवर्ष के प्रायः सभी हिन्दी, अँगरेज़ी, उर्दू आदि भाषाओं के पत्रों में प्रकाशित हुआ है।

सेठीजी का मामला

महाशय,—क्या मुझे इन बातोंकी ओर सर्वसाधारण और सरकार का ध्यान आकृष्ट करने को स्थान देंगे ? क्या सर्व-साधारणको ज्ञात है कि, जैन-शिक्षा-प्रचारक जयपुर के पण्डित अर्जुनलाल सेठी गत मार्च में इन्दौर में गिरफ्तार हुए थे ? क्या यह गिरफ्तारी दिल्ली और आरे के मामले के बारे में हुई थी ? क्या उनपर कोई अभियोग लगाया गया था ? यदि नहीं, तो क्या यह ठीक है कि, वे किसी अपराध के अपराधी सिद्ध नही हुए और इससे छोड़ दिये गये ?

(२) क्या यह ठीक है कि वे फिर गिरफ़्तार हुए थे ? क्या भारत सरकार ने उन्हें गिरफ़्तार किया था या इन्दौर राज्य ने अपनी जिम्मेदारी पर ?

(३) क्या यह सच है कि, तब वे जयपुर राज्य को सुपुर्द कर दिये गये और तब से प्रायः ६ महीनो से वे काल कोठरी में हैं ? क्या दुबारा वे जयपुर राज्य के कहने से गिरफ्तार हुए थे ? या जयपुर राज्य को वे इसलिये सुपर्द किये गये थे कि, वह उन्हें भारत सरकार के लिये कैद रक्खे ? क्या यह कार्य इस सन्देह पर आवश्यक हुआ था कि, दिल्ली और आरे के मामलो की पेशियों मे उनके विरुद्ध कोई बात निकले ?

(४) दोनों मामले अब खतम हो चुके। क्या यह सच है कि, उनके विरुद्ध कुछ प्रमाणित नहीं हुआ ? क्या यह भी सच है कि, वे अब तक जेल में हैं ? यदि हा, तो क्या किसी सरकार के लिये न्याय्य है कि, किसी प्रजाजन की स्वाधीनता हर ले, जिससे उसकी असहाय पत्नी और बालबच्चों को बहुत कष्ट और समाज को चिन्ता हो ?

(५) क्या यह सच है कि, अब उन्हें मन्दिर में जाने की भी मुमानियत है ? क्या यह सच नहीं है कि, पहले वे मन्दिर जाने पाते थे ? क्या इधर कोई ऐसी घटना हुई है, जिससे यह आज्ञा निकालनी पडी ? क्या उनके विरुद्ध कोई साक्ष्य मिला है ? या उन्होंने उस स्वतन्त्रता का दुरुपयोग किया है जो उन्हें दी गयी थी ?

(६) क्या यह सच है कि, इस नयी आज्ञा के निकलने के बाद आठ दिनों से प० अर्जुनलाल ने भोजन नहीं किया है,

क्योंकि पक्के जैन बिना मन्दिर गये (और जिन देवता के दर्शन किये) भोजन नहीं करते? क्या अब उन्हें मन्दिर जाने की परवानगी मिल गयी है या राज्य ने किसी दूसरे उपाय से उनको भोजन कराने की व्यवस्था की है? जब इंगलैण्ड में मताभिलाषिणियाँ भोजन करना अस्वीकार करती हैं, तब गवर्नमेण्ट भोजन करने के लिये उन्हें समझाती है। क्यों कि, वह किसी क़ैदी को तब तक मरने नहीं देती, जब तक वह ऐसे भयङ्कर अपराध का अपराधी न हो, जिसमें फांसी की सज़ा दी जाती हो। यदि ऐसीही दशा रही तो क्या पं० अर्जुनलाल सेठी की जान जोखिम न होगी? क्या उन भयङ्कर परिणाम का रोकना गवर्नमेंट का कर्त्तव्य नहीं है जो प्रकृति के नियमानुसार होंगे?

(७) और क्या यह ठीक नहीं है कि उन्हें ५ वर्ष की जेल की सजा का हुक्म हुआ है? यदि हां, तो क्या उनके विरुद्ध अब कुछ प्रमाण मिला है। क्या कोई मामला चला है, जिसमें यह हुक्म सुनाया गया है? किस अदालत में विचार हुआ? क्या अदालत में सब के सामने विचार हुआ था? क्या अभियुक्त को अपना पक्ष समर्थन करने का अवसर दिया गया था? यदि विचार नहीं हुआ तो किस क़ानून से यह हुक्म सुनाया गया? क्या यह जयपुर राज्य ने किया है या भारत सरकार का हुक्म है? यदि जयपुर राज्य ने किया है तो क्या यह भारत सरकार का कर्त्तव्य नहीं है? कि, ब्रिटिश साम्राज्य के अधीन राज्य में ऐसा अन्याय न होने पावे? क्या गवर्नमेण्ट ने इसका कोई उपाय किया है? क्या वह कोई उपाय करना चाहती है?

(६) यदि यह सच हो कि, उनपर कोई अभियोग नहीं लगा तो क्या सामान्य बुद्धि के नाम पर, न्याय के नाम पर और मनुष्यत्व के नाम पर गवर्नमेंट से यह आशा करना अनुचित है कि, वह उन्हें तुरत छोड़ दे? पर यदि उनके विरुद्ध कुछ भी साक्ष्य हो तो न्यायालय में उनका विचार हो और वे दोषी पाये जांय तो उन्हें दण्ड दिया जाय, और प० अर्जुनलाल पर भक्ति और श्रद्धा होते हुए भी हम अपना मत बदलने को तैयार होंगे।

मैंने जान बूझ कर प्रश्न के ढङ्ग पर लिखा है और कोई बात नहीं कही है, क्योंकि गवर्नमेंट इस मामले में बराबर चुप्पी साधे रही है। मुझे आशा है कि, गवर्नमेंट उस पर प्रकाश डालेगी और एक राजभक्त समाज की बढ़ती हुई चिन्ता दूर करेगी।

"न्याय"

पौष कृष्ण, ८,१९७१ के भारतमित्र की टिप्पणी

नोट—"न्याय" का न्याय चाहना अन्याय नहीं है। अब तक सेठीजी के साथ जो बर्ताव हुआ है, वह न्याय नहीं है। इस लिये सरकार से न्याय की भिक्षा मांगी जाती है। यदि वे दोषी हों, तो कोई उनका पक्ष ग्रहण करने को तैयार नहीं है। परन्तु हमें इसका विश्वास होना चाहिये कि, वे दोषी हैं। क्या सरकार विश्वास दिलाने को तैयार है?

—सम्पादक"

लीडर के सम्पादकीय नोट का अनुवाद।

(२० । १२ । १६१४)

हम सरकार का ध्यान एक पत्र की ओर लाना चाहते हैं जो कि इसी अङ्क के दूसरे पृष्ठ में छपा है और जिस में कि प० अर्जुनलाल जो सेठो के मामले का कुछ ज़िक्र है। पं० अर्जुनलाल कई मास से कारागार में हैं और अब उनको जैसा कि हमको मालूम होता है कुछ सजा का हुक्म हो गया है। इस पत्र मे लेखक ने बहुत से आवश्यक और उचित प्रश्न किये हैं जो कि सरकार से उत्तर की प्रार्थना करते हैं। यदि पं० अर्जुनलाल पर कोई दोष साबित हो गया है तो यह अत्युत्तम ही नही किन्तु आवश्यक है कि उनको दण्ड मिलना चाहिये, परन्तु किसी न्यायालय में उचित रीति से मुकदमा बिना चलाये किसी को दोषी नही ठहराना चाहिये। अगरेज़ी राज्य की सबसे बडी महत्त्व को यही बात है कि इसमें प्रजा न्याय के शासन में रहती है न कि किसी विशेष व्यक्ति की इच्छा के अधीन। न्याय का शासन ही प्रजा को रक्षा की सब से बडी गारन्टी है। वह समय गया जब कि प्रजा की स्वतन्त्रता किसी को इच्छा अथवा अनिच्छा के अधीन रहती थी। यह दृढ नियम किसी विशेष कारण के हेतु तोडा जा सकता है, केवल ऐसे असाधारण समय में जब कि राजा पर कोई विपत्ति आती है। कोई भी मनुष्य चाहे वह किसी विचार का क्यों न हो इस बात का निषेध कभी नही कर सकता कि अब भारत में इस नियम के उलङ्घन को समर्थन करने के लिये किञ्चित् मात्र भी कारण नहीं है। हम उस असा-

धारण कार्य को भी समझ सकते हैं जो कि युद्ध के विशेष नियमों के अनुसार किया जावे। परन्तु हम किसी प्रकार भी यह नहीं समझ सकते कि क्यों ऐसे मामले का न्याय जो कि न्याय की सीमा के बिलकुल अन्तर्गत है और जिस का कि सम्बन्ध युद्ध से किसी प्रकार भी नहीं है, ऐसी असाधारण रीति से किया जाव कि न्याय के साधारण नियमों की ओर भी कुछ ध्यान न दिया जावे ? यदि इनमें से किसी प्रश्न के लिये भी जो कि हमारे संवाद-दाता ने किये हैं कोई तनिक सा भी हेतु है तो प० अर्जुनलालजी के मामले में निःसंदेह ही लार्डहार्डिङ्ग की सरकार को तुरन्त ध्यान देना चाहिये, जैसा कि हम पहले भी कह चुके हैं। हमको पं० अर्जुनलाल से तनिक भी सहानुभूति न रहेगी, यदि उन के ऊपर तनिक सा भी अपराध साबित हो जाय। तब तो हमारा यही विचार होगा कि यह राज्य तथा देश दोनो के लिये उचित ही है कि उनको बुरा कार्य करने से रोका जावे। परन्तु यह अत्यावश्यक है कि अपराध पहले किसी न्यायालय में साबित हो जाना चाहिये। हमको आशा और विश्वास है कि भारत सरकार शीघ्र ही सर्व साधारण की सूचना के लिये इस मामले-सम्बन्धी प्रश्न का उत्तर प्रकाशित करेगी।

अभ्युदय

(२९ । १२ । १४)

"पं० अर्जुनलाल सेठी।

अन्यत्र हमने उक्त पण्डित जी के सम्बन्ध में एक सज्जन का पत्र प्रकाशित किया है। पत्र को देखने से विदित होता

है कि पं० अर्जुनलाल सेठी जयपुर में कारावास भोग रहे हैं। जहाँ तक विदित है आज तक न उनपर कोई अभियोग लगाया गया है और न कोई सिद्ध ही हुआ है। दिल्ली और आरे के मुक़द्दमें में एक दो स्थानों पर उनका नाम आया था किन्तु कदाचित् उससे उनके विरुद्ध कोई बात सिद्ध नहीं होती थी इसी कारण से उनपर कोई अभियोग नहीं चलाया गया।

अब इधर कितने ही दिनों से खबर है कि वे जयपुर की जेल में सड़ाये जा रहे हैं। २०वीं शताब्दी में सहसा इस बात पर विश्वास नहीं होता। न्याय की दृष्टि में जबतक किसी के विरुद्ध कुछ प्रमाणित न हो जाय वह निर्दोष समझा जाता है। ऐसी अवस्था में किस कारण से पं० अर्जुनलाल सेठी जेल में रक्खे गये हैं? यदि उनके विरुद्ध कोई अभियोग है तो मुक़दमा चलाना चाहिये और उन्हें अवसर देना चाहिये कि अपने पक्ष में उन्हें जो कुछ कहना हो वे कहें। हम ब्रिटिश गवर्नमेंट का ध्यान इस धींगाधींगी की ओर आकर्षित करते हैं। बेलजियम के हेतु वह अपना खून बहा रही है, क्या एक दीन जेल में सड़ते हुए मनुष्य के लिए वह कलम चलाकर जयपुर राज्य से कुछ पूछने का कष्ट न स्वीकार करेगी?"

प्रताप

(१)

"किसी पिछले अङ्क में हम जैन-समाज के पं० अर्जुनलाल सेठी बी० ए० के विषय में कुछ लिख चुके हैं। आज हमें उन के विषय में हर्दा के श्रीयुत सूर्य्यमल जैन का एक पत्र मिला

है, उससे पता चलता है कि सेठी जी अभी तक जयपुर राज्य की हिरासत में हैं, इसके पहिले वे तीन मास तक इदौरराज्य की हिरासत में भी रहे थे। सर्वसाधारण को सन्देह था कि वे शायद दिल्ली, आरा और कोटा के मुकदमों में से किसी के अभियुक्त हैं और इसी लिए वे क़ैद हैं और जरूरत के वक्त कहीं पेश किये जाँयगे, परन्तु सूर्य्यमल जी के उद्योग से यह बात स्पष्ट हो गई है कि सेठी जी राजनैतिक अपराधी नहीं हैं। उनके विचार, उनका चरित्र इतना शुद्ध और इतना उच्च, इतना निस्पृह और इतना उज्ज्वल रहा है कि हम कह सकते हैं कि वे किसी भी ऐसे काम के करने वाले नहीं हो सकते, जिसे सभ्य समाज की दृष्टि से समाज के लिए अहितकारी कहा, और उन्हें अपराधी ठहराया जा सके। फिर, हम नहीं जानते, कि आज महीनों से सेठी जी हिरासत में क्यों सड़ाये जा रहे हैं? देशी राज्यों के प्रबन्ध और शासन के कुढंग की इन सनदों की महिमा गाने से विशेष लाभ नहीं। ज़रूरत इस बात की है कि जैनसमाज, जिस की सेठी जी ने बहुत सेवा की है, और जो धन का बल भी रखता है, और वे लोग जो अपने सजीव हृदय में अत्याचार के विरुद्ध सजीव भाव रखते हैं, इस धींगा धींगी के विरुद्ध अपनी जोरदार आवाज़ उठावें। जैनसमाज के लिए तो यह शरम की बात है कि उसका एक खास सेवक निर्दोष जेल में सडता रहे, और वह हाथ पर हाथ रखे बैठ रहे। पटियाला के मामले में आर्य्य-समाज ने आकाश और पाताल एक कर दिये, पर यहाँ तो अभी कुछ भी नहीं हुआ। हम पटियाला में दो आर्य्यसमाजी सज्जनों की हिरासत से सेठीजी की हिरासत इसलिए कहीं

अधिक भयंकर समझते हैं कि इसमे महीनों इस तरह हिरासत में सड़ाने पर भी दोष और रिहाई का कुछ भी पता न देना व्यक्तिगत स्वाधीनता का कहीं अधिक पददलित करना है।"

प्रताप

(२)

"इस अङ्क में लार्ड हार्डिञ्ज के नाम एक खुली चिट्ठी प्रकाशित हुई है। कलकत्ते के एक सज्जन ने उसे भेजी है। पाठकों को याद होगा कि आज से पहिले भी कई बार प्रताप में श्रीयुत अर्जुनलाल सेठी बी० ए० के विषय में लिखा जा चुका है। कौन कह सकता है कि यह सरासर अन्याय नहीं है कि उन्हे जेल में सड़ाया जाय, उन्हें अपने बच्चो से अलग रक्खा जाय, उन्हें संसार से अलग कर दिया जाय, और तो भी उन्हें यह न बतलाया जाय कि ये सारे कष्ट तुम्हें इस क़सूर पर भोगने पड़ रहे हैं। यदि सेठी दोषी हैं तो दोष प्रकट करो, उसे सिद्ध होने दो, और फिर उन्हे सज़ा दो, दुनियाँ चूँ तक न करेगी, परन्तु इसके विपरीत यदि मनमानी की जायगी, कानून और न्याय को उठाकर ताक पर रख दिया जायगा, तो चाहे हो कुछ भी नहीं, भरे हुए हृदयों से आह अवश्य ही निकलेगी, और उसे संसार की कोई भी शक्ति नहीं रोक सकती। हमें विश्वास है कि यदि यह मामला यहाँ होता-यहाँ से हमारा मतलब अँगरेजी इलाके से है-तो चाहे पुलिस कितनी ही धींगा धींगी करती, चाहे फैसले के प्रका-

शित में कितनी ही देरी क्यों न लगती, परन्तु अन्त में बात के निपटारे का रूप इस प्रकार का अवश्य होता कि उसमें किसी को भी इस प्रकार की मीन-मेख निकालने की जगह न मिलती। पर, दुर्भाग्य से ही, और उनके हितैषियो के दुर्भाग्य से ही नही, किन्तु कानून और न्याय के दुर्भाग्य से, देश में ऐसे स्थल आज भी मौजूद हैं, जिन में कहा जाता है, कानून भी है और न्यायालय भी है, हाकिम भी है और हुकूमत भी है, पर जिनमें केवल एक इसी मामले मे नही, किन्तु और भी अनेक उदाहरण मिल सकते हैं-और पटियाला का मामला उनमें से एक है-किसी भी व्यक्ति की स्वाधीनता बिना कारण हर लेना कोई बात ही नही। हमे विश्वास है कि लोगो की इस पुकार पर भारत-सरकार का ध्यान अवश्य जायगा, और वह इस प्रकार का अन्याय अब अधिक न होने देगी।

इन पक्तियों के लिख चुकने पर पता लगा कि जयपुर राज्य ने सेठो जी को सजा दी है। कितनी? इस विषय पर हम आगामी अङ्क मे लिखेंगे, परन्तु यह सज़ा किसी प्रकार भी उस समय तक न्याय-युक्त नही कही जा सकती जब तक सजा पाने वाले का दोष प्रकट न किया जाय। और यदि जयपुर के अधिकारी लोग दोष को प्रकट किये बिना ही किसी को दोषी बना और उसे सज़ा दे सकते हैं, तो इस में सन्देह नहीं कि कानून और न्याय उनकी इच्छा के अनुसार नाचने वाली चीज़ों के अतिरिक्त और कुछ भी नही हो सकते।"

प्रताप

(३)

"श्रीमान् लार्ड हार्डिंज के नाम खुली चिट्ठी

श्रीमान्, क्षमा कीजिए हमारी इस धृष्टता को, कि इस नाज़ुक समय में भी हम आपको कष्ट देने के अर्थ उद्यत हुए हैं। यद्यपि हम जानते हैं कि इस महायुद्ध के समय जब कि आप अनेक विचारों में तन्मय हैं आपको कष्ट देना हमारी महान् धृष्टता है परन्तु श्रीमान्, यह भी तो विचारिए, कि इस समय आप ही तो हमारी भाग्यडोर के कर्त्ता, धर्त्ता, विधाता हैं। हमारी, हमारे देश की, भाग्यडोर इस समय आपके ही हस्तगत है। तब हम अपना, अपने देश का, अपने समाज का दुःख और किस को सुनावें ? यही विचार कर आज यह चिट्ठी अपनी टूटी फूटी भाषा में लिखकर आपकी सेवा में उपस्थित करते हैं। आशा है, हमारी यह प्रार्थना अरण्यरोदन न होगी।

श्रीमान् जानते होंगे कि जैनसमाज में शिक्षाविस्तार के लिए अपने स्वार्थ को ठोकर मार कार्यक्षेत्र में अवतीर्ण होने वाले पण्डित अर्जुनलाल सेठी, बी० ए०, आज से प्राय. ८-६ महीने पूर्व आरा-नीमेज में महन्त के खून के मामले में सन्देह की दृष्टि में गिरफ्तार हुए थे, परन्तु उस मामले में प्रमाण न मिलने के कारण उन्हें कुछ न हुआ। इसके बाद अधिकारियों ने कहा कि दिल्ली-षड्यन्त्र में सम्मिलित होने का सन्देह उन पर किया जाता है। परन्तु श्रीमन्! उसमें भी

प्रमाणाभाव से उन्हें कुछ न हुआ और फिर उन्हें जयपुर की जेल मे भेज दिया गया।

श्रीमन्! सेठी जी एक कुलीन कुलोत्पन्न, सदाचारी, विद्वान् ग्रेज्युएट हैं। उन्होंने अपना पवित्र जीवन जैन धर्म के प्रचारार्थ अर्पण कर दिया है। उनके जीवन का मुख्य सिद्धान्त था प्राणीमात्र पर दया करना, वे जैनसमाज के प्रत्येक धार्मिक तथा सामाजिक कार्य्यों में सम्मिलित हो कार्य्य करते थे। उन्होंने धार्मिक, तात्त्विक, तथा सामाजिक व्याख्यानो के प्रभाव से जैन-समाज के बालक, युवा, वृद्ध सब के ही हृदय मे स्थान पाया है। जहाँ तक हमें स्मरण है उन्होने कभी ब्रिटिश राज्य के विरुद्ध जबान भी नही हिलाई है। निःसन्देह पण्डित अर्जुनलाल ब्रिटिश राज्य के सच्चे हितैषी और जैनसमाज के नेता है।

श्रीमन्! आज उन्ही पण्डित अर्जुनलाल सेठी की पत्नी अपने प्राणाधार पति को निष्कारण आफ़त मे फसा देख घबरा गई हैं और ज्वर से पीडित हैं। श्रीमन्! आप तो जानते ही हैं कि भारती स्त्रियो का यदि ससार मे कोई है तो वह उनका एक प्राणाधार पति ही है। पति के दुःख में दु.खी और पति के सुख से सुखी भारतीय स्त्रियो की विशेष परिचय देने की आपको आवश्यकता नही है। आज अपने प्यारे पिता की अनुपस्थिति में उनके छोटे छोटे बालक महान् कष्ट पा रहे हैं।

श्रीमन्! जब कि अर्जुनलाल के विरुद्ध प्रकाश्यरूप से कोई भी प्रमाण अधिकारियो को नहीं मिला तब कहा गया था कि

जयपुर राज्य उनपर पुरानी रीति रिवाज तोडने का मामला चलावेगा। परन्तु हा! वह भी तो नहीं हुआ, जिससे कि उन्हें किसी प्रकार अपराधी देख उनकी स्त्री, बच्चे और हितैषी सन्तोष धारण करते। न मालूम इतने दिनो से एक निर्दोषी व्यक्ति को अधिकारियो ने क्यो जेल की जञ्जीर से जकड़ रखा है। निर्दोषी हम इस कारण कहते हैं कि, अभी तक उनपर प्रकाश रूप से कोई भी अपराध नही लगाया गया है। यह देख कर हमें सत्य के सहारे लज्जा, दुःख और आश्चर्य से कहना पडता है कि आपके नीर क्षार-सदृश शान्तिमय शासन मे यह भयानक अन्धेर क्यो?

यद्यपि हमारा दृढ़ विश्वास है कि अभी तक आपकी दृष्टि इस मामलेपर नहीं पहुँची है परन्तु निष्कारण एक प्रतिष्ठित व्यक्ति का अधिकारियो द्वारा जेल मे सडाया जाना श्रीमन्! क्या न्याय के साम्राज्य मे अनुचित नही है? जब कि, बजबज के भयानक दङ्गे जैसे मामले का अन्त प्रायः १॥ महीने मे ही हो गया और उसके अभियुक्त सब छूट गये, जब कलकत्ते मे स्ट्रीट की मोड़ पर पुलिस इन्सपेक्टर की हत्या करने के सन्देह में गिरफ्तार होने वाले अभियुक्त निर्मलकान्त राय के भाग्य का निबटारा उसी समय हो गया, तब क्या कारण है कि नीमेज महन्त का खून और दिल्ली षड्यन्त्र, दोनों मामलों मे निर्दोष प्रमाणित होने वाले के भाग्यो का निबटारा अभी तक नही होता? क्या इसमें कोई गूढ़ रहस्य है? यदि है तो क्यों नही पबलिक को बताया जाता? क्या यह न्याय के विपरीत नहीं है?

श्रीमन् ! हमारी यह प्रार्थना नहीं है कि, दोषी होते हुए भी कोई छोड़ दिया जाये। हम तो आपसे केवल यही निवेदन करते हैं कि उक्त व्यक्ति दोषी है या निर्दोष इसका प्रकाश्य रूप से विचार क्यों नहीं किया जाता ? यदि वे न्यायतः दोषी हों तो अवश्य उपयुक्त दण्ड मिलना चाहिये और यदि न्याय की कसौटी पर वे निर्दोष प्रमाणित हों तो उन्हें रिहाई दी जाय।

आशा है कि श्रीमान् हमारी इस प्रार्थना पर उपयुक्त विचार कर चौदह लक्ष राजभक्त जैनप्रजा का आशीर्वाद ग्रहण करेंगे।

विनयावनत

परमेष्ठीदास लमेचू, मखनलाल लमेचू,

नं० ७७ बड़ताल्ला स्ट्रीट—कलकत्ता, "

नोट—यह खुली चिट्ठी बहुत से पत्रों में छपी है।

जैनधर्मभूषण ब्रह्मचारी श्रीशीतलप्रसाद जी अपने जैनमित्र में लिखते हैं—

\+ \+ \+

"इसके कुछ दिन बाद से सेठी जी को जो दर्शन करने के लिये खजाञ्ची की नशियां में जाने की आज्ञा थी सो बन्द कर दी गई। इससे सेठी जी को अकथनीय दुःख हुआ और जो आनन्द उनको श्रीजिनेन्द्रदेव की शांति-मुद्रा के दर्शन, पूजन

व भजन से होता था उसमें एकाएक महा अंतराय पड गया। सेठीजी ने दृढ प्रतिज्ञा की कि जब तक श्री जिनेन्द्रदेव के दर्शन न मिलेंगे मैं भोजन नही करूँगा। छः दिन बीत गये कोई सुनाई नही हुई। उनकी दु:खनी स्त्री ने इधर उधर अपने पति की बात सुनाई। बहुत से तार श्रीयुक्त महाराजा जैपुर की सेवा मे आये। महाराजा ने उन तारों पर कुछ दया तो की, पर इस दया से चित्त को संतोष बिलकुल न हुआ। जैसे पहले कई महाशयो के साथ सेठी जी को खजाञ्ची की नशिया में भेजा जाता था, वैसा नहीं किया गया, किन्तु जैनियो की ओर से एक प्रतिमा मंगवा कर उसे जेल के कमरे में विराजमान करवा दी। खैर, सेठी जी ने दर्शन करके भोजन किया। अब विचार यह करना है कि ऊपर जो हुक्म है वह न्याययुक्त है या नही ? जिस किसी पर जब कोई अपराध लगाया जाता है तब उस अपराधी को भी मौका दिया जाता है कि वह अपनी सफाई में भी बयान करे। परन्तु खेद है कि सेठी जी को अपना दु:ख प्रकट करने के लिये कोई मौका नही दिया गया। राजकीय षड्यंत्रों मे सेठी जी का सम्बन्ध है-इस प्रकार की शंका जो राजकीय हुक्म ने बतलाई है, वह अपना कोई आधार नही रखती। सिवाय आरा और देहली के मुकद्दमो के चलते हुए चलाने वालो ने इस बात मे किसी प्रकार की त्रुटि नही रक्खी कि यदि किसी भी प्रकार सेठी अर्जुनलाल कोर्ट के सामने अपराधी ठहराये जा सकें, तो उनको अपराधी ठहराया जाय। परन्तु अच्छी तरह छान बीन कर देख लिया गया कि उनके ऊपर कोई अपराध किसी भी तरह प्रमाणित नही होता। विना प्रमाण के किसी को अपराधी

प्रमाणित समझना किसी भी तरह न्याययुक्त नहीं हो सका। जब वे उन मुकद्दमें में बरी हैं तब उनको फिर भी अपराधी समझ कर हिरासत में रखा जाना किस तरह ठीक है, यह बात बिलकुल समझ में नहीं आती।

+ + +

एक तो सेठी जी ने अपने जीवन के दसों वर्ष जैन-जाति में शिक्षा-प्रचार करने व धार्मिक व समाज-सुधारक व्याख्यानों के देने में व आम तौर से जैनधर्म की प्रभावना करने में बिताए हैं। यह बात जैनियों का बच्चा २ तो जानता ही है, परन्तु अजैन भाई भी अच्छी तरह जानते हैं। सैकडो राज-कर्मचारियो ने उनके व्याख्यान सुने हैं और मनन करके आनन्दलाभ किया है।

+ + +

इस समय पर हम ब्रिटिशराज के न्यायी शासक लार्ड हार्डिङ्ग से भी अनुरोध करेंगे कि वह सेठी अर्जुनलाल की तडफन पर दया कर और वृथा के कष्ट से मुक्त करें। इनके स्त्री व बच्चे आर्त्तनाद से अपनी आँखें लाल कर रहे हैं। इनके उपदेशों के बिना जैन जाति के जलसे फीके हो रहे हैं। शिक्षा के प्रचार में भारी धक्का लग रहा है। क्या सर्कार हमारी पुकार पर ध्यान नहीं देगी ?"

जैनहितैषी

(दिसंबर १९१४)

\+ + +

इसके सिवाय सेठी जी एक अनुभवी और विद्वान् पुरुष हैं, जैन धर्म पर उनकी दृढ श्रद्धा है, परोपकार के लिए इन्होंने अपना जीवन दे डाला है। इसलिए उनके विषय में हमको क्या, किसी को भी स्वप्न में विश्वास नहीं हो सकता है कि उन्होंने कोई घृणित राजद्रोह का काम किया होगा। अवश्य ही किसी बडे भारी भ्रम में पड़ कर सरकार उन्हें राजद्रोही समझ रही है।"

अभ्युदय

(२८। १। १५)

"श्रीयुत अर्जुनलाल सेठी की घोर आपत्ति।

पाठको, मुझे आशा है कि अब आप श्रीयुत अर्जुनलाल सेठी बी० ए० (जयपुर निवासी) के मामले से अवश्य परिचित हो गये होंगे, क्योंकि इसी पत्र में एक लेख इस विषय पर २१ दिसम्बर को प्रकाशित हो चुका है। मुझको भी यहाँ इसी पर कुछ निवेदन करना है।

श्रीयुत अर्जुनलाल सेठी पहिले जयपुर राज्य में एक बड़े पद पर नियुक्त थे। परन्तु देशभक्ति, जातिसेवा और शिक्षा-प्रचार के उच्च भाव उनके हृदय में इस दृढ़ता के साथ स्थान

पकड़े हुए थे कि अपने जीवन की इस स्थिति से वे सदा असंतुष्ट रहते थे। आखिर उनको सेवावृत्ति छोड़नी ही पड़ी। तब से लगभग दश वर्ष हुए होंगे कि वे बराबर एक भाव से अपनी जाति में शिक्षाप्रचार करने के कार्य में लगे हुए थे। उन्होंने अपने परिश्रम से बहुत सी शिक्षा-सम्बन्धी संस्थाएँ स्थापित कर दी हैं जिन्होंने देश को बड़ा लाभ पहुँचाया है और अब भी पहुँचा रही हैं। गत वर्ष ही वे इन्दौर में एक हाई स्कूल स्थापित करने के महान् कार्य में लगे हुए थे कि बीच में ही पकड़ लिये गये और तब से आज तक वे बराबर जयपुर के कारागार में असह्य यन्त्रणाओं की चक्की में पीसे जा रहे हैं। शोक है कि वह भावी स्कूल भी अब तक स्थापित नही हो सका और हो भी किस प्रकार सकता था? जब उसके प्यारे पिता ही सकट में फँस गये तो उसका भी जन्म लेना अति दुष्कर हो गया।

जब हमको यह मालूम हुआ था कि श्रीयुत अर्जुनलाल सेठी दिल्ली षड्यन्त्र तथा आरा के मुकदमों के सबन्ध में पकड़े गये हैं तो हमको वास्तव में ही बड़ा आश्चर्य हुआ था। परन्तु हमको विश्वास था कि जब न्यायालय मे न्याय की दृष्टि से इस मामले पर विचार किया जायगा तब स्वयं ही दूध का दूध और पानी का पानी अलग हो जायगा। इसी कारण हमने उस समय अपना यह आश्चर्य प्रकट करना उचित न समझा था। यद्यपि उनके ऊपर कोई दोष न लगाया गया था और यद्यपि बराबर नौ मास वे कारागार में आपत्ति सह रहे थे परन्तु हमने इसी कारण कुछ कहना ठीक न समझा

था कि शायद इन दोनों।में से किसी मुकदमे की कार्रवाई के बीच में सेठी जी पर कोई दोष साबित हो जाय।

अब ये दोनों मुक़दमे समाप्त हो गये हैं और न्यायाधीशों का न्याय भी प्रकाशित हो चुका है। यद्यपि इन दोनों मुक़दमो के फैसलो से यह स्पष्टतया प्रकट है कि सेठी जी पर किसी प्रकार का दोष नही साबित हुआ परन्तु तब भी हम देखते हैं कि सेठी जी पूर्ववत् ही अब भी कारागार में सड़ाये जा रहे हैं। अब जयपुर दरबार की ओर से पाँच वर्ष के कारागार की उनको आज्ञा हो गई है। नही मालूम कि किस कारण से और किस अपराध के दण्ड में उनको यह आज्ञा हुई है। न तो किसी न्यायालय में किसी प्रकार का उन पर मुकद्दमा ही चलाया गया है और न अन्य ही किसी प्रकार से उन पर कोई अपराध साबित किया गया है।

क्या कोई समझ सकता है कि अब २० वी शताब्दी में किसी समय देश मे इस प्रकार एक व्यक्ति की स्वतन्त्रता पर कुठार चलाया जा सकता है? हम तो समझते थे कि अब वह समय गया जब कि राजा की इच्छा ही से किसी प्रजा-जन को बिना किसी प्रमाणित अपराध के फाँसी पर चढ़ा दिया जाता था।

अधिक शोक मुझको यह देख कर होता है कि यद्यपि इस प्रकार का अन्याय आज हो रहा है परन्तु सब लोग आँख बन्द किये और कानो पर हाथ रक्खे सो रहे हैं। मैं मानता हूँ कि हमारे ऊपर लड़ाई की काली घटा छा रही है और इससे हमको अब ऐसी कोई बात न उठानी चाहिये जिससे

कि सरकार को कोई तनिक सा भी विरोध होने की सम्भावना हो। परन्तु हम एक व्यक्ति का इस प्रकार अन्याय से कुचल जाना नहीं देख सकते। हम यह नहीं सह सकते कि जिस नीव पर आज सभ्यता के न्याय का महल खड़ा हुआ है उस नींव ही पर कुठार चलाया जाय। न्यायालय में रीत्यनुसार मुक़दमा चलाये जाने के पश्चात् दोषी साबित किये जाने ही पर किसी को कोई दण्ड दिया जा सकता है। उसी अवस्था में प्रजा को भी सन्तोष हो सकता है।

फिर हम नही समझ सकते कि सरकार को इससे तनिक भी विरोध हो सकता है। यदि हम अपनी प्रार्थनाओं द्वारा भारत-सरकार का ध्यान इस अन्याय की ओर आकर्षित करेंगे तो हमको दृढ विश्वास है कि सरकार को इससे अप्रसन्नता होने के विरुद्ध और प्रसन्नता ही होगी और वह शीघ्र जयपुर राज्य से लिखा पढ़ी करके इस दुःख को दूर कर देगी, क्योंकि ब्रिटिश राज्य सदा से ही न्यायप्रिय है। हमको तो विश्वास है कि ब्रिटिश राज्य के अन्दर भारत में कभी ऐसा नहीं हो सकता था और अब भी यह तब ही तक है जब तक कि ब्रिटिश सरकार इस ओर ध्यान नहीं देती। अब यह हम लोगो का कर्त्तव्य है कि इस मामले के सम्बन्ध में अपनी प्रार्थनाएं किसी प्रकार प्रजावत्सल वाइसराय लार्ड हार्डिंग के कानो तक पहुँचा दें। मुझको तो दृढ़ आशा है कि मेरे देशवासी भाई कभी इस आवश्यक कार्य से मुख न मोड़ेंगे। मुझको यह भी आशा है कि लार्ड हार्डिंग की सरकार अवश्य ही इस अन्याय की ओर ध्यान देगी। मुझको ब्रिटिश सरकार की प्रजावत्सलता तथा न्यायप्रियता में पूर्ण विश्वास है।

प्रत्येक मनुष्य का धर्म है कि जहाँ तक उससे हो सके वह अपने सामने अन्याय न होने दे। बिना विचार के एक जैन-नेता को कठोर दण्ड दे दिया गया है इससे जैनियों में असन्तोष फैल रहा है। एक देशी राज्य के कार्य में हस्तक्षेप करने का अधिकार सरकार को प्राप्त है और उस अधिकार का प्रयोग ऐसे ही अवसर पर किया जाना चाहिए।

एक दुःखी हृदय।"

सत्यवादी

(दिसबर १९१४)

"अर्जुनलालजी सेठी, बी० ए०

अभागे जैन समाज के लिये अपने जीवन को कष्ट में डालने वाला इस बीसवीं सदी में सब से पहला कोई नररत्न हुआ तो वह सौभाग्य श्रीयुत अर्जुनलाल जी को प्राप्त है। उन्होंने हमें यह पाठ सिखाया है कि जैनसमाज के लिए अपने जीवन को अर्पण करने वाले जब तक उनके सरीखे कुछ वीर तैयार न होंगे तब तक वह उन्नति के मार्ग पर चलने के लिए समर्थ नहीं हो सकता। यह साहस अर्जुनलालजी में ही था कि जो अपनी गिरी कौम के लिए उन्होंने अपनी कमाई छोड़ी, घर बार छोडा, भाई-बन्धुओं का मोह छोड़ा और अपने जिगर के टुकडो—प्रेम के पुतलो—बाल-बच्चों-से प्यार करने के समय में वे उनसे जुदा हुए। जो समय सन्तान-प्रेम को हृदय में जगह देने का था उसमें उन्होंने समाज-सेवा के

प्रेम को जगह दी। यह उनकी उदारता! स्वार्थ त्याग की हद! इसके सिवा घर में दूसरा कोई कमा खिलाने वाला नहीं, ऐसी दशा में अपनी प्यारी सन्तान की क्या दशा होगी! कौन उनकी ख़बर लेगा? इसका विचार न कर जो समाज के लिए एक अदना फ़क़ीर बना, द्वार द्वार जाकर जिसने भीख माँगी, भीख देने के स्थान में हज़ारों ने जिसे गालियाँ सुनाईं, सैकड़ों ने जिसका अपमान किया, जिसे इस फ़क़ीरी-पन में कष्ट पर कष्ट उठाने पड़े, पर तब भी जिस वीर ने इन सब बातों की कुछ परवा न कर अपना कर्त्तव्य बराबर बजाया।

× × ×

जयपुर की सरकार कहती है अर्जुनलाल एक बड़ा ही ख़तरनाक मनुष्य है, इसलिए उसे पाँच वर्ष तक या जब तक दूसरा हुक्म न निकले तब तक वे हिरासत में रक्खे जायँ। पर जिस पर किसी तरह का अपराध साबित नहीं और केवल सन्देह पर उसे इस प्रकार क़ैद रखना यह न्याय है क्या? और क्या सब सन्देह सच ही हुआ करते हैं। हम नहीं समझते जयपुर सरकार का यह कार्य कहाँ तक उचित है। उसे उचित तो यह है कि वह या तो अर्जुनलाल जी के जिम्मे कोई अपराध साबित कर उन्हें दण्ड दे या अपने सन्देह की सब तरह भरपाई कर उन्हें मुक्त करे। व्यर्थ किसी को कष्ट पहुँचाना राजनीति नहीं किन्तु अन्याय है। हमें अपनी यह पुकार सारे जैनसमाज की ओर से न्यायशीला गवर्नमेंट तक पहुँचानी चाहिए। हमें विश्वास है कि सरकार हमारी प्रार्थना को सुनकर सेठीजी के विषय में उचित व्यवस्था

करेगी। जैनसमाज को अब सुस्त नहीं बैठना चाहिए। उसे अपने एक दुखी बन्धु के लिए कुछ न कुछ यत्न अवश्य करना उचित है। अपने बन्धुओं के प्रति उसे कितना प्रेम है यह बतलाने के लिए समय उपस्थित है। इसी समय अपना उसे कर्त्तव्य पालन करने में पीछा पग नही देना चाहिए।"

जैनमित्र

\+ + +

"पाठकों को यह निश्चय रखना चाहिए कि जब किसी अपराध में फँसे मनुष्य की रक्षा के लिए उपाय करना राज्यविरुद्ध नहीं है तब केवल शका पर पडे हुए निरपराध एक जातिहितैषी की रक्षा का उद्योग करना किसी भी तरह से राज्यविरुद्ध नही हो सकता। इससे सर्व ही अहिंसा धर्मपालक इस मौके पर अपना और खर्च कमकर इस परमावश्यक काम में पूरी मदद देवें। जब एक पक्षी को जाल से छुडाना परम पुण्य है, तब एक जातिसेवा की रक्षा करने में कितना महान पुण्य होगा। पस भाइयो, पत्र देखते चन्दा करके रुपया भेजो। यदि सेठी जी जेल में ही प्राणान्त हुए तो हम सब के लिए बडे भारी दोष की बात है।"

जैनतत्त्वप्रकाशक

× × ×

"हम नही समझते कि यह कहाँ तक न्याय हुआ है। पहले तो आठ नौ महीने बिना कोई जुर्म लगाये कैद मे रखे गये

बाद में जब चारों ओर से पुकार मची कि बिना जुर्म लगाये किसी को यो कैद में रखना ठीक नहीं। तब यह आर्डर जारी किया गया है तिस पर भी इसका न तो कोई सबूत ही है कि इन्होने कौन सी साज़िश की है हमारी दृष्टि मे सेठी जी का आज तक न तो ऐसा कोई लेक्चर ही हुआ है और न कोई ऐसा लेख ही प्रकाशित हुआ है जिससे कि पोलिटिकल साजिश पाई जावे। दूसरे यह नही कहा गया है कि वह खुद कोई साजिश करते हैं परन्तु सम्बन्ध बताया गया है।"

दिगंबर जैन

"पं. अर्जुनलाल जी असह्य अफातमां पांच वर्ष सुधी

गया अकमा, आपणी कोमने जीवन अर्पण करनार तेम उँची केलवणी पामेला वीर नर प० अर्जुनलालजी सेठी बी. ए. ने जैपुरनी जेलमा वगर गुन्हाए नजरकेद राखवाना, तेमज दर्शन करवाना बंध करवा थी प० अर्जुनलाल ८ दिवस सुधी भोजन लीधु नहोतुं ए समाचार जाणी आखी जैन कोममा हाहाकार वर्ताई गयो छे छता पण अजब जेवुं छे के कोण जाणे शां कारणे प० अर्जुनलाल जी पर कंइ पण गुन्हो साबित थया वगर एमने मात्र शंका रुपे पाँच वर्ष सुधी नजरकेद राखवानो हुकम नीकली चुक्यो छे!

जो केजैपुर महाराजाए पाँच वर्ष सुधी नजरकेद राखवानो हुकम प्रकट कर्यो छे पण ते हुकम नामदार वाइसरोयनी सूच-

नाथीज थयो होवो जोईए केमके ए राज्य ब्रीटीश राज्यनो छत्रछाया नीचेज छे."

अभ्युदय

(२८ । १ । १५)

"जयपुर राज्य में अंधेरखाता ।

"फलक चले ज़ालिमाना चालें ।
मचायें अंधेर जितना चाहें ॥
जमाना लेहीगा कोई करवट ।
नसीब बेकस का सो चुकेगा ॥"

आज कितने ही दिनों से भारतवर्ष के समस्त क्या अङ्गरेजी, क्या हिन्दी, क्या बङ्गाली और क्या उर्दू, देशी पत्रों में श्रीयुत अर्जुनलाल सेठी बी० ए० के सम्बन्ध में लेख निकल रहे हैं। पाठकों को यह विदित है कि सेठी जी जयपुर के जेलखाने मे पीसे जा रहे हैं और उनकी रिहाई की कोई सूरत नहीं दिखाई दे रही है। लोगो को यह नहीं बतलाया जा रहा है कि उनका अपराध क्या है? उन्हें भी यह अवसर नहीं दिया जा रहा है कि वे अपने पत्त में कुछ कह सकें। इन बातों को सुनकर यह भ्रम होने लगता है कि हम २०वीं शताब्दी की बातें सुन रहे हैं या १५वीं सदी के तुर्की या मुग़ल हर्मों की गाथा। आज पर्यन्त ऐसी गाथाएं शाही ज़माने में महलों की चहारदिवार के अन्दर ही सुनाई देती थी किन्तु आज हम सुन रहे हैं कि ज़नाने महलों मे नहीं वरन अर्जुनलाल सेठी जी जयपुर नरेश के महल, नहीं नहीं कारागार, में सड़ रहे हैं।

यह क्यों ?

आज दिन भी "राजा करे सो न्याव" वाली बात ठीक समझी जाती है या यह कि राज्य को इतनी फुर्सत नहीं है कि वह एक निरपराध—क्योंकि जब तक कोई अपराध प्रमाणित न हो जाय हम सबको निर्दोष समझते हैं-मनुष्य को अत्याचार के बोझ से दबाने से बचावे। जयपुर से जितनी ख़बर आती हैं, उनसे यही पता चलता है कि अर्जुनलाल सेठी जी का स्वास्थ्य नित्य प्रति ख़राब होता जा रहा है और यह कि यदि दशा ऐसी ही रही तो फिर बहुत दिन उनके चलने की आशा नहीं।

ऐसी अवस्था मे यह गवर्नमेंट का धर्म है, उसका कर्तव्य है कि वह जयपुर राज्य से इस सम्बन्ध से कुछ लिखा पढ़ी करे। वह राज्य से कहे कि यदि वह अर्जुनलाल जी सेठी को अपराधी समझता है तो वह मुकदमा चलावे, सेठीजी को बतावे कि उनका अपराध क्या है और उन्हें अपने को निर्दोष प्रमाणित करने का अवसर दे।

राष्ट्र का पहिला उद्देश्य यह है कि वह प्राणियो की रक्षा करे, जहाँ प्राणियो की रक्षा नहीं, जहाँ निर्दोष, निरपराधी मनुष्य बिना कारण केवल शासक की स्वेच्छा से सताये जा सकें वह राष्ट्र प्रजावत्सल, उदारहृदय लार्ड हार्डिंग का प्रेमपात्र नहीं हो सकता।

जयपुर राज्य की ऐसी व्यवस्था को देखकर चित्त व्यथित होता है, इसलिए नहीं कि वह अर्जुनलाल सेठी पर अत्याचार कर रहा है किन्तु इस विचार से ही कि वहाँ पर

जेल में एक ऐसा मनुष्य गल रहा है जिसे अपने पक्ष में ज़बान खोलने का अवसर नही दिया गया।

श्रीमान् लार्डहार्डिंग अपनी दयालुता और न्यायपरता के कारण भारतवासियो के हृदय मे घर कर चुके हैं। आज जैन समाज और समस्त भारतवासी उनकी ओर चातक दृष्टि से देख रहे हैं। ब्रिटिश राष्ट्र की सब से बड़ी महिमा यही है कि उसमें जान-माल की रक्षा का पूरा प्रबन्ध है। यदि उसकी छाया मे रहकर कोई अन्य पुरुष अन्यायी हो जाय तो भी सम्बन्ध से कलक गवर्नमेंट को लग जायगा। इसके सिवा जैन-समाज से भोले समाज को किसी प्रकार से उत्तेजित न होने देना राजनीति है। एक भोलीभाली जाति को आन्दोलनकारी और उद्दंड बनाना कभी भी श्रेयस्कर नही हो सकता। हम आशा करते हैं कि श्रीमान् वाइसराय का ध्यान इस ओर आकर्षित होगा और वे अन्याय को अधिक दिन न चलने देंगे।

हम इतना ही चाहते हैं कि श्रीयुत अर्जुनलाल सेठी को यह बतलाया जाय कि वे किस अपराध के दोषी है और उन्हें अवसर दिया जाय कि वे अपने पक्ष मे कुछ कह सकें।

श्रीमान् वाइसराय के लिए यह काम कठिन नही। उनकी एक चिट्ठी से यह सब कुछ हो सकता है और हम आशा करते हैं कि अर्जुनलाल सेठी की पत्नी और उनके पुत्रों पर दया कर वे इस सम्बन्ध में कुछ जाँच करने का कष्ट उठायेंगे।

अबला की पुकार।

(सेठीजी की धर्मपत्नी का पत्र)

(जयपुर ता० १९। १। १५)

मान्यवर महोदय,

क्या आप अपने अमूल्य समय का कुछ भाग आप मुझ दुःखिनी की कथा सुनने मे दे सकेंगे? क्या मेरे पति पर आई हुई विपत्ति को दूर करने की चेष्टा करेंगे? क्या मेरे बच्चों पर दया करके पितृ-वियोग-जनित दुःख को निवारण करेंगे? क्या एक व्यक्ति को अन्याय से बचाने का प्रयत्न करेंगे? मुझे विश्वास है कि यदि आप मेरी दुःख-कहानी सुनेंगे तो मेरी सहायता करना अपना परम कर्त्तव्य समझेंगे।

मेरे पति इस समय जयपुर की जेल मे हैं। दस महीने हुये जब वे इन्दौर मे पकडे गये थे, तब से दो चार दिन छोड कर आज तक वे कारागृह ही मे हैं। और अब उन्हें पाँच वर्ष की सजा का हुक्म हो गया है। इससे आप यह न समझिये कि उन्होने कुछ अपराध किया था, क्योंकि आज तक यह तो कभी बतलाया ही नही गया कि अमुक अपराध के कारण यह दण्ड दिया गया है। आज तक उन पर कोई अभियोग भी नहीं चलाया गया जिससे कि यह प्रमाणित हुआ हो कि वे अपराधी हैं। हाँ, यदि कुछ अपराध हो तो यही हो सकता है कि उन्होंने अपना जीवन जैन-समाज के अर्पण कर दिया था, शिक्षा-प्रचार को अपना मुख्य कर्त्तव्य समझते थे, जैन-धर्म के प्रचार के उपाय सोचा करते थे, और इनके अतिरिक्त

और सांसारिक झगडों से दूर रहना ही प्रसन्द करते थे। सुना गया था कि वे देहली और आरा वाले मुकद्दमों के सम्बन्ध में पकडे गये हैं, परन्तु यह विश्वास कैसे हो, ये मुक़द्दमे तो थे राजनैतिक और मेरे पति राजनीति के झगडों से कोसों दूर। क्या जो आत्मा जैनधर्म के लिये जीवन अर्पण करने की शक्ति रखती है वह उसी जैनधर्म के मूल मन्त्र का तिरस्कार करने को उद्यत हो सकती है? क्या जिनका हृदय जाति के बालको को अशिक्षित देखकर द्रवित हो जाता था वे नरहत्या ऐसे मामले से सम्बन्ध रख सकते हैं? यह नही हो सकता। यदि सचमुच सम्बन्ध था तो क्यों नहीं सरकार ने अभियोग चलाकर प्रमाणित किया? जो हो, अपराधी थे या नहीं, उनको कारागृह में रहने का हुक्म हो गया है। कौन कह सकता है कि यह अन्याय नहीं? क्या इस २० वीं शताब्दि मे भी यह न्याय समझा जा सकता है कि किसी व्यक्ति को दण्ड दे दिया जावे और उसे यह भी न बतलाया जावे कि उसने अमुक अपराध किया है। महोदय, क्या इस अन्याय के विरुद्ध आपकी आवाज उठेगी? क्या आप सरकार से न्याय की प्रार्थना करेंगे? ऐसा करना यो तो आपका कर्त्तव्य है ही परन्तु इस मामले मे यह अनिवार्य्य कर्त्तव्य हो जाता है, क्योंकि उनकी तरफ से कोई प्रार्थना करने वाला नही—मैं दीन स्त्री हूँ, मेरी कौन सुनता है और विशेष कर जयपुर राज्य में।

यह हुई उनकी बात, अब बच्चो की बात सुनिये। मेरे पति कोई धनाढ्य पुरुष नही हैं और न उन्होंने व्यवसाय कर बहुत सा द्रव्य संचय ही कर रक्खा है। ऐसी अवस्था में

क्योंकर अपने बच्चे 'प्रकाश' की शिक्षा का प्रबन्ध करूँ? किस प्रकार छोटी बालिका को पढ़ाऊँ ? शिक्षा तो एक ओर, इन बच्चों को उचित भोजन भी किस प्रकार दूँ ? कैसे उनके शीत का निवारण करूँ ? आज दस महीने हुये किसी न किसी प्रकार काम चलाया, परन्तु अब नहीं चल सकता। मुझे इसकी पर्वाह नहीं कि मुझे भरपेट अन्न मिले, मैं पतिवियोग को भी सहन कर सकूँगी, परन्तु इन बच्चों का कष्ट मुझसे नही देखा जाता। मेरे पति को आशा थी और मेरा भी विश्वास था कि जाति और धर्म की सेवा करने के लिये मेरा 'प्रकाश' योग्य बन जायगा, परन्तु अब देखती हूँ कि यह सब स्वप्न मात्र है। न जाने ये पाँच वर्ष कैसे पूरे होंगे ? इस बीच में यदि शिक्षा का प्रबन्ध न कर सकी तो प्रकाश अशिक्षित रह कर दुःख उठावेहोगा परन्तु समाज और धर्म का एक सेवक खोया जायगा। जयपुर में यद्यपि सब मेरी सहायता करना चाहते हैं और जयपुर मे ही क्यो, मुझे विश्वास है, समस्त भारतवर्ष के मनुष्य मेरी सहायता करना हृदय से चाहते है परन्तु वे डरते हैं कि मुझ अभागिनी के साथ कहीं उनको भी कष्ट न उठाना पडे। इस से कोई मेरी सहायता नही कर सकता। यद्यपि नि.सहाया अबला का कष्टनिवारण करना कोई अपराध नही परन्तु पुलिस से डर लगता है। क्या आपको भी डर लगेगा ? क्या आप जैसे उदारहृदय भी बिना कारण भयभीत हो जावेंगे। तो फिर इन बच्चों को क्या मुझे अशरण-शरण के भरोसे छोड देना होगा ? हा ! यह कष्ट मेरे अपने दुःख के सहने के साहस को भी तोड़ देगा।

मेरे पति आज कल कारागृह में रोगग्रस्त हैं। प्रति दिन सुनती हूँ कि उनका कृश शरीर और अधिक कृश होता जाता है। उनके भोजन का प्रबन्ध ठीक नहीं। हे भगवन्, क्या उनको पाँच वर्ष इस ही प्रकार जेल में बिना अपराध सड़ना पडेगा। वे कैसे पाँच वर्ष निकाल सकेंगे? यद्यपि मानसिक दुर्बलता उनके पास न फटक सकेगी परन्तु इस शरीर के रोगों का वे क्या करेंगे? प्रभो, क्या अब मैं उनके पवित्र दर्शन न कर सकूँगी? क्या कभी उनकी चरणरज मस्तक मे लगाने का सौभाग्य मुझे न प्राप्त होगा? क्या कभी वे आकर 'प्रकाश' के शिर पर हाथ न रख सकेंगे? क्या नन्ही लडकी को वह छाती से फिर लगावेंगे? क्षमा करिये. हृदय के आवेग में आकर मैं यह लिख गई हूँ। हम स्त्रियों का हृदय आप ऐसा कठोर नही हो सकता।

महाशय, मैं अपनी राम-कहानी आपको सुना चुकी। मुझे अब इसके अतिरिक्त और कुछ नही कहना है कि यदि मुझ अभागिनी पर आपके हृदय मे दया का सञ्चार हुआ है तो कृपया इस मामले को हाथ मे ले लीजिये। यदि मेरे प्रकाश के अंधकारमय भविष्य से आपका पितृस्नेहयुक्त हृदय द्रवित हुआ है तो उसे शरण दीजिये। यदि मेरी लडकियो के आर्त्त-नाद से आपको अपनी प्रिय पुत्री याद आई है तो कृपा कर उसे असहाय न छोडिये। यदि मेरे पूज्य पति के सकट से आपको यह ध्यान आया है कि यह सकट उन पर नही, जैन-समाज पर,—समाज-सुधार, जैन-धर्म प्रचार और शिक्षा-प्रसार पर—पड़ा है तो शीघ्र कर्त्तव्य निश्चय कर लीजिये। यदि आप समझते हैं कि बिना मुक़द्दमा दण्ड देना अन्याय है

तो उसके विरुद्ध आन्दोलन और पुकार करने को प्रस्तुत हो जाइये। यदि मेरे पति के बिगड़े हुये स्वास्थ्य से आपके चित्त में डर उत्पन्न होकर बच्चों की क्रन्दनध्वनि सुन पड़ी है और समाज-सेवक के लिये दो बूँद आँसू निकले हैं तो इस समय सहायता कीजिये। और यदि जैनधर्म के एक सेवक की कमी से आपके चित्त को चोट पहुँची हो तो उसे बचाने का प्रयत्न कीजिये। मैं असहाया, अबला, दुःखिनी आप से और अधिक निवेदन नहीं कर सकती। राजपूत रमणी ने अपरिचित और परधर्मी युवा को राखी भेजी थी और वह उसके हेतु प्राण-विसर्जन करने को उद्यत हुआ था। यदि आज मैं अति क्षुद्र हूँ परन्तु इस विपत्ति से छुटकारा न देख मैं भी आज आपके पास राखी भेजने का साहस करती हूँ। क्या आप जैन-समाज तक भारत-सरकार और जयपुर-नरेश तक मेरी क्रन्दन पहुँचावेंगे।

दयाभिलाषिणी,
जैन-जाति के सेवक की सेविका,
गु ला ब बा ई

नोट—यह पत्र प्रायः सभी हिन्दी और अङ्गरेज़ी समाचार पत्रों में छपा है।

'अबला की पुकार' के साथ वाला जैनधर्म-भूषण ब्रह्मचारी श्रीशीतलप्रसाद जी के पत्र का अंश

महानुभाव, महाशय दर्शनविशुद्धिर्भवतु !

आज दश महीने न्याय की प्रतीक्षा करते हो चुके, परन्तु पण्डित अर्जुनलाल जी सेठी अब तक भी अन्यायवश कारागृह

ही में हैं। क्या जैन-जाति भी उनपर न्याय न करेगी? ऐसी आशंका भी हृदय में उत्पन्न होने लगी है। जानना है कि वह शंका कहाँ तक ठीक है। क्या आप बतला सकेंगे?

मुझे बतलावें या नहीं किन्तु श्रीयुत सेठी जी की धर्म-पत्नी को बतला देना आपका कर्त्तव्य है। लीजिये, उनका पत्र हाथ में लीजिये और हृदय को कडा कर जरूर आदि से अंत तक पढ जाइये। कैसा मर्मभेद क्रन्दन सुन पडता है। क्या उसमें से आपके कानों में अबला की आहों का शब्द नहीं आता? क्या उसमें से बच्चों के रोने की आवाज आपको नहीं सुनाई देती? सेठी-विहीन गृहांगण का हृदय-द्रावी दृश्य क्या आपको दृष्टिगोचर नहीं होता? इतना कष्ट होने पर भी क्या उस रुदन में जाति-सेवा की गंध नहीं आती? क्या दुःख के आँसुओं से भीगा हुआ यह भी आपकी आँखों में आँसु नहीं लाता? न सही, परन्तु क्या अन्तिम शब्द "यदि आज मैं अति क्षुद्र हूँ परन्तु इस विपत्ति से छुटकारा न देख मैं भी आज आपके पास राखी भेजने का साहस करती हूँ" भी आपके हृदय में नहीं चुभते! क्या बहिन की इस दीन पुकार ध्यान देने को भी आपका हृदय बाध्य नहीं होता? क्या हम उन महान् आत्माओं की सन्तान होकर भी, जिन्होंने निःसकोच संकटग्रस्तो की रक्षा के लिये प्राणविसर्जन किये हैं, उस मुसल्मान युवा की बराबरी नही कर सकते? नही नहीं, ऐसा नहीं हो सकता, बरन मुझे विश्वास होता जाता है कि आप मन में प्रतिज्ञा कर रहे हैं कि अबला की पुकार अवश्य सुनेंगे, बच्चों के दुःख को अवश्य दूर करेंगे, सेठी जी की विपत्ति अवश्य निवारण करेंगे, राखी का आदर अनिवार्य है,

भाई को बहिन के लिये प्राण तक दे देने में संकोच न होगा। धन्य आप की उदारता और धन्य आप की धर्मप्रियता को। तो क्या आप मुझे यह समझने की आज्ञा देते हैं कि आप इस कार्य के लिये प्रयत्न करेंगे ? क्या मैं आप को राखी के आदर करनेवाले पुरुषों में गिन सकता हूँ।

\+ + +

यही दो काम इस समय आपको करने हैं। एक तो मन्दिर में शास्त्र के बाद सब को यह पत्र सुना कर एक सभा करके चन्दे का प्रबन्ध कर दीजिये और सभा की कार्यवाही समाचार-पत्रों में भेज दीजिये, दूसरे डेप्यूटेशन में सम्मिलित होने के लिये स्वयं अपनी अनुमति भेज दीजिये और अपने यहाँ के दूसरे प्रतिष्ठित पुरुषों से भी भिजवा दीजिये। यह कार्य यथाशक्ति शीघ्र होना चाहिये। इसके अतिरिक्त जो कुछ आप को उचित जान पड़े करिये और मुझे भी लिख भेजिये ताकि मैं भी सहायता करूँ।

अन्त में आप से पुनः निवेदन है कि यह अवसर हाथ से न जाने दीजिये, जैनधर्म एक अत्यन्त अमूल्य वस्तु है, उसको अधिक काल तक संकट में न पड़ा रहने दीजिये। पण्डित अर्जुनलाल जी सेठी इस धर्म के उच्च कोटि के ज्ञाता थे और इसपर उनकी श्रद्धा इतनी अधिक है कि इस धर्म के अनुयायियों के लिये वे सब कष्ट सहने को प्रस्तुत रहे हैं। हमारा वात्सल्य अंग हमें शिक्षा देता है कि उनका संकट निवारण किये बिना हमें जैनी कहलाने का अधिकार नहीं। विशेष कहने की आवश्यकता नहीं। धर्म का पालन करिये और

विपुल पुण्य संचय कीजिये। आशा करता हूँ कि इस पत्र का उत्तर शीघ्र मिलेगा।

उत्तराभिलाषी,

ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद

जैनहितैषी

(पौष, वीर नि. स. २४४१)

श्रीमती गुलाबबाई की राखी।

एक राजपूतरमणी ने सकट के समय एक अपरिचित राजपूत युवा के पास राखी भेजो थी और उसका फल यह हुआ था कि उस युवा ने प्राणों की बाजी लगाकर उस रमणी की रक्षा की थी। श्रीयुत बाबू अर्जुनलाल जी सेठी बी० ए० की सहधर्मिणी श्रीमती गुलाबबाई ने भी इस घोर सकट के समय में अपने जैनभाइयो के पास राखी भेजी है और आशा की है कि वे उनकी सहायता करेंगे, उनके प्राणपति को विपत्ति से मुक्त करने के लिए कोई प्रयत्न बाकी न रक्खेंगे। राखी के साथ जो पत्र है उसे पढकर रुलाई आती है और हमें विश्वास नही कि उसे सुनकर किसी सहृदय की आँखों में दो चार आँसू आये बिना रह जावेंगे। अब देखना यह है कि अपने को राजपूतों की सन्तान बतलाने वाली दयापरायण जैनजाति इस राखी की पत कहाँ तक रखती है और अपने समाज के एक सेवक के छोटे बच्चों और स्त्री के प्रति उसकी सहानुभूतिका स्रोत कुछ काम कर सकता है या नही।

भारत मित्र

(२।२।१५)

"सिद्धान्त का झगड़ा

प० अर्जुनलाल सेठी की धर्मपत्नी श्रीमती गुलाब बाई ने जो पत्र जैनसमाज के नेताओं के नाम भेजा है वह अन्यत्र प्रकाशित किया गया है। प० अर्जुनलाल के विषय में हम कई बार लिख चुके हैं, परन्तु आश्चर्य है कि भारत सरकार का ध्यान हमारी टिप्पणियों की ओर आकर्षित नहीं होता। सेठीजी का विचार न्यायालय में नहीं हुआ इसी से स्पष्ट है कि जयपुर दरबार अथवा भारत सरकार के पास उसके विरुद्ध प्रमाण नहीं है। यदि होता तो समाचार पत्रों का मुंह बन्द करने के लिये अदालत की दुहाई अवश्य दी जाती। उनके निर्दोष होने में जिस प्रकार सन्देह कर के जयपुर दरबार में बिना विचार किये उन्हे ५ वर्ष की जेल की सजा दे दी है, उसी प्रकार सर्वसाधारण को उन के दोषी होने मे सन्देह है। ऐसी अवस्था में अङ्गरेजी कानून अभियुक्त को दण्ड नहीं देता और "सन्देह का लाभ" उठाने देता है। पर यहा तो न कोई अभियोग है और न अभियुक्त। कई देशी राज्यो में राजा की आज्ञा ही आज्ञा है और इसी मनमानी घरजानी का फल सेठी जी भोग रहे हैं।

इङ्गलैण्ड में एक समय था, जब लोगो को भयंकर पुरुष समझ राजा अपने कर्म्मचारियों से कहता था He is too dangerous a man to live इसे सुन वे अभागे का काम तमाम कर डालते थे। पर अब तो तनिक तनिक सी बात पर

यूरोप थर्रा उठता है। तुर्कों और जर्मनों के अत्याचारों की बात जाने दीजिये, किसी को एक दिन दाना पानी नहीं दिया गया और वह माल गाडी मे कही भेजा गया कि, "अन्याय, अत्याचार" की चिल्लाहट मच जाती है। यह "सभ्य" देशों की बात है, पर अङ्गरेजों की अधीनता में रहकर हमने जितनी "सभ्यता" सीखी है, उससे प० अर्जुनलाल के साथ जो जो बर्त्ताव हुआ और हो रहा है, उसे हम "न्याय" नहीं कह सकते। राज्यों की विचारपद्धति चाहे जैसी हो, पर वे ब्रिटिश छत्र छाया के नीचे हैं, इस लिये न्यायके ब्रिटिश सिद्धान्तों के प्रतिकूल उनका आचरण न होना चाहिये। यदि किसी समय वे न्याय पथ से हट भी जाँय तो यह भारत सरकार का कर्त्तव्य है कि, हस्तक्षेप करके उन्हें राह पर ले आवे। इसी कारण हमारा भारत सरकार से अनुरोध है कि, यातो अर्जुनलालजी को जयपुर जेल से छुडाइये या खुली अदालत में उनका विचार कराइये। यह अर्जुनलाल का नही, सिद्धान्त का झगडा है।

भारत सरकार अपना कर्त्तव्य पालन करे या न करे और जयपुर दरबार उन्हें छोडे या कैद रखे, पर हमे कर्त्तव्यच्युत न होना चाहिये। श्रीमती गुलाब बाई की चिट्ठी जैनसमाज के नेताओं के नाम है, पर हम उसे भारत, सत्य और न्याय के नाम समझते हैं। जिन्हें ये तीनों प्यारे हैं, उन्हे श्रीमती की सहायता करनी चाहिये। पात्र को दान देने से स्वर्ग और अपात्र को देने से नरक होता है। आशा है, इस तत्त्व को हिन्दू न भूलेंगे और यथाशक्त श्रीमती गुलाब बाई के कष्ट दूर करने की चेष्टा करेंगे। प० अर्जुनलाल के चिरजीव पुत्र 'प्रकाश' की सुशिक्षा में व्याघात न उपस्थित हो और उनकी

पत्नी को अर्थकष्ट न भोगना पड़े, इसकी व्यवस्था शीघ्र होनी चाहिए। हम समझते हैं कि, यदि इसके लिये एक कमिटी बना दी जाय तो विशेष लाभ की सम्भावना है। हमें विश्वास है कि, हिन्दू, विशेषकर हमारे जैन भाई, ऐसी कोई व्यवस्था शीघ्र ही कर देंगे।

भारतोदय

(फा० कृ० ८—७१)

अन्यत्र एक जैनविद्वान् प० अर्जुनलाल सेठी की धर्म-पत्नी की "अबलापुकार" छपी है। यह चिट्ठी जैननेताओं के नाम है, जो समाचारपत्रों में भी छप रही है, इस "अबला-पुकार" पर अवश्य ध्यान दिया जाना चाहिये, जिस जैनसमाज में हज़ारो लखपति और अनेक करोडपति हैं, जीवरक्षा जिसका मुख्य धर्म है, उसके नेताओ के सामने उसी समाज के एक सेवक की सेविका की यह मर्मस्पृक् पुकार व्यर्थ न जायगी, वे अवश्य प० अर्जुनलाल जी की सन्तान के शिक्षण पोषण का समुचित प्रबन्ध करके अपने औचित्य और कर्तव्य का पालन करेंगे। इसमें डर की कोई बात नहीं है, जयपुर राज्य कदापि इतना अनुदार नही हो सकता कि वह किसी को एक असहाय और निरपराध अबला की सहायता करने से रोके, उदार ब्रिटिशराज्य में अनेक बार अनेक व्यक्तियो पर राज-विद्रोह तक के अभियोग चले हैं, जिनमें अभियुक्त व्यक्तियों या उनके सम्बन्धियो की सहायता करने से गवर्नमेंट ने किसी को नहीं रोका, फिर समझ में नही आता जयपुर सा

"धार्मिकराज्य" क्यों ऐसा करेगा ? यह शका व्यर्थ है, जैन-समाज के समर्थ व्यक्तियों को निःसंकोचभाव से जी खोलकर पं० अर्जुनलाल के बच्चों की सहायता करना चाहिए, यदि ऐसा न हुआ—एक अबला की पुकार व्यर्थ गई, तो फिर जैनधर्म की "भूतदया" का क्या अर्थ समझा जायगा ? क्या जैनधर्म की "भूतदया" का सञ्चार कीडे मकौड और पशु-पक्षियों की रक्षा तक ही रहेगा ? अपने ही समाज की एक विपद्ग्रस्त साध्वी अबला उसकी अधिकारिणी नही समझी जायगी !

रही पं० अर्जुनलालजी के साथ न्याय की बात, सो उसके लिये भी सबको मिलकर, जयपुरराज्य, ब्रिटिशसरकार, और परमात्मा से प्रार्थना करनी चाहिए, कोई तो सुनेगा ही !

आनरेबुल बाबू सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी के दैनिक अँगरेज़ी 'बंगाली' के अग्रलेख का अनुवाद

(३।२।१५)

अन्यत्र हम प० अर्जुनलाल जी को पत्नी का एक पत्र प्रकाशित करते हैं। जैनसमाज का यह नेता इस समय जयपुरराज्य की आज्ञा से ५ वर्ष के लिये कैद कर दिया गया है। जयपुर की गणना समुन्नत देशी राज्यो में है। यहाँ के एक के पश्चात् एक सभी महाराजों ने सदैव न्याय से दृढ़ प्रेम रखा है। हमें विश्वास है कि हमारी इस प्रार्थना पर अवश्य ध्यान दिया जायगा,-हमें इस मामले की वह बातें नहीं मालूम हैं

कि जिन के कारण सेठी जी को जेल की आज्ञा हुई है और न जनता को ही यह मालूम है कि उन पर क्या क्या दोष लगाये गये हैं-परन्तु किसी मनुष्य को तब तक दण्ड नही देना चाहिये जब तक कि अभियोग न चल ले, जब तक कि पूर्ण जाँच के बाद उसे अपराध समझा न दिया जाय और उस जाँच मे उसे अपने पर लगाये हुए दोषो का जवाब देकर अपने को मुक्त कराने का अवसर न मिल जाय-'दण्ड दो परन्तु सुनो भी'। यह एक सार्वजनिक नैतिक शिक्षाही नहीं है किन्तु प्रत्येक सभ्य देश के राजनियम और रीतिरिवाज भी इस ही पर निर्भर हैं—जयपुरराज्य का स्थान सभ्य देशों में बहुत नीचा नही है यदि आज तक कभी कोई मामला ऐसा हुआ था कि जिसकी पूर्ण जाँच अनिवार्य थी तो वह प० अर्जुन-लाल का मामला है। वह किसी प्रकार भी एक साधारण पुरुष नहीं हैं। उनका जीवन शिक्षाप्रचार और जातिसेवा के अर्पण हो चुका है। वह भारतवर्षीय जैन-शिक्षा-प्रचारक समिति के अधिष्ठाता थे और इन्दौर के त्रिलोकचद जैन हाई स्कूल के प्रिन्सिपल भी नियत हुए थे-वह अपनी जाति में शिक्षाप्रचार करने से बढ़कर न कोई धर्म समझते थे और न कोई सुख। उनको विद्याप्रचार से इतना प्रेम था कि उनकी पत्नी अपने पत्र में उनके विषय मे लिखती है कि वे-"सांसारिक झगडो से दूर रहना ही पसद करते हैं।" यदि वास्तव मैं किसी के लिये सन्यासी शब्द का प्रयोग किया जा सक्ता है तो इनके लिये फिर ऐसी दशा में यह प्रायः असम्भव है कि उन्होंने राज्य के विरुद्ध षड् यंत्र रचा हो अथवा किसी बड़े अन्याय से उनका सम्बंध रहा हो। ऐसा ज्ञात होता है कि उनके

विरुद्ध यह दोष लगाया गया है कि उनका सम्बंध दिल्ली और आरा वाले मुकद्दमों में दोषियों से था। उनका अब फैसला हो चुका, परन्तु निस्सदेह किसी पुरुष को चाहें वह उच्च हो व नीच, वा धनी हो अथवा निर्धन केवल मात्र संदेह पर ही दंड नही दे डालना चाहिये-जब तक कि राज्य को बहुत बडी आशका न हो तब तक नीति न्याय के साधारण नियमों का उल्लंघन नही किया जा सक्ता-यह सच है कि राज्य की रक्षा हो सब से बडा नियम है परन्तु यह कहने का कोई कभी साहस नही कर सक्ता कि इस समय जयपुर रियासत को कुछ आशका है, अथवा भारत सरकार अपने को कुछ मुट्ठी भर मनुष्यों के षड्यत्रों के कारण आपत्ति में समझती है। किसी भी मनुष्य की स्वाधीनता न्यायविहित रीति से ध्यान पूर्वक जॉच किये विना नही छीनी जा सक्ती। जयपुर राज्य में अथवा ब्रिटिश भारत मे इस समय ऐसी कोई बात नहीं है कि जिससे विना अभियोग किसी को कैद कर देना ठीक समझा जा सके। ऐसा करना कमजोरी का निर्भ्रान्त चिह्न होगा। आज कल कोई भी राज्य लोकमत के विरुद्ध काय नही कर सक्ता क्योकि वह ही राज्य और राजाओ की शक्ति है। लोकमत और न्याय और समय की आवश्यकता के विचार इस बात को पुष्ट करते है कि अर्जुनलाल पर अभियोग चलाया जाय और उसके दण्ड के लिये नीति की आज्ञा हो न कि केवल अधिकारियों के मन की। यह प्रार्थना इतनी उचित है कि हमें विश्वास है कि जयपुर राज्य और भारत सरकार दोनों ही इस ओर न्याय का पक्ष देखकर उसे स्वीकार करेंगे।

हृदयोद्गार।

[श्रीयुक्त बाबू अर्जुनलालजी सेठी बी ए के बनाये हुए 'महेन्द्र-कुमार' नाटक से उद्धृत एक पद]

कब आयगा वह दिन कि बनूँ साधु विहारी ॥ टेक ॥

दुनिया में कोई चीज़ मुझे थिर नहीं पाती,
और आयु मेरी यों ही तो बीती है जाती।
मस्तक पै खड़ी मौत वह सब ही को है आती,
राजा हो चाहे राणा हो हो रंक भिखारी ॥ कब ॥१॥

संपत्ति है दुनिया की वह दुनिया में रहेगी,
काया न चले साथ वह पावक में दहेगी।
इक ईंट भी फिर हाथ से हर्गिज़ न उठेगी,
बँगला हो चाहे कोठी हो हो महल अटारी ॥कब ॥२

बैठा है कोई मस्त हो मसनद को लगाये,
माँगे है कोई भीख फटा वस्त्र बिछाये।
अंधा है कोई कोई बधिर हाथ कटाये,
व्यसनी है कोई मस्त कोई भक्त पुजारी ॥ कब ॥३

खेले हैं कई खेल धरे रूप घनेरे,
स्थावर में त्रसों में भी किये जाय बसेरे।
होते ही रहे हैं यों सदा शाम सबेरे,
चक्कर में घुमाता है सदा कर्म मदारी ॥ कब ॥ ४
सब ही से मैं रक्खूँगा सदा दिल की सफ़ाई,
हिन्दू हो मुसलमान हो हो जैन ईसाई।
मिल मिल के गले बाँटेंगे हम प्रीति मिठाई,
आपस में चलेगी न कभी द्वेष-कटारी ॥ कब ॥ ५
सर्वस्व लगा के मैं करूँ देश की सेवा,
घर घर पर मैं जा जाके रखूँ ज्ञान का मेवा।
दुःखों का सभी जीवों के हो जायगा छेवा,
भारत में देखूँगा न कोई मूर्ख अनारी ॥ कब ॥ ६
जीवों को प्रमादों से कभी मैं न सताऊँ,
करनों के विषय हेय में अब मैं न लुभाऊँ।
ज्ञानी हूँ सदा ज्ञान की मैं ज्योति जगाऊँ,
समता में रहूंगा मैं सदा शुद्ध विचारी ॥ कब॥ ७

नोट—जिस पुरुषश्रेष्ठ की ऐसी पवित्र उदार और शान्त भावनायें हों, उसकी राजद्रोह और नरहत्या जैसे नीच कर्मो से भी सहानुभूति होगी, इस बात की हम लोग तो कल्पना भी नहीं कर सकते हैं।

—सम्पादक।

ता. १० फ़रवरी के लीडर के अग्रलेख का अनुवाद।

बृटिश न्याय के प्रति फ़रियाद।

अन्यत्र पं० अर्जुनलाल जी सेठी के कठिन मामले पर लखनऊ के सुप्रसिद्ध वकील श्रीयुत अजितप्रसाद जी ने अभी हाल ही के बनारस के जैनमहोत्सव में दी गई वक्तृता में जो हृदयद्रावी शब्द कहे हैं, प्रकाशित किये जाते हैं—कुछ दिन हुए हमने पं० अर्जुनलाल सेठी की पत्नी की बहुत ही दयनीय फरियाद प्रकाशित की थी। हमें हर्ष है कि इस मामले पर बहुत से सहयोगियों ने लिखने की कृपा की है, जैसे बंगाली, न्यू इण्डिया, इन्दुप्रकाश, एडवोकेट और पञ्जाबी। हमें यह भी ज्ञात हुआ है कि देशी भाषाओं के पत्रों में भी इसपर बहुत ध्यान दिया गया है। यह होना ही चाहिये। पण्डित अर्जुनलाल की ओर से कोई एक शब्द भी न कहेगा यदि नियमानुकूल अभियोग के पश्चात्, लगाये हुए दोषों का उत्तर देने का अवसर मिलने के पश्चात् और अपनी निर्दोषता प्रमाणित करने का मौका पाने के पश्चात् भी वह दोषी ठहरे। और उनको दण्ड—कड़ा दण्ड—भी दिया जाय। उनकी पत्नी और बच्चों के प्रति जो पूर्ण सहानुभूति प्राकृतिक और उचित है वह भी न्यायप्रिय लोगों में से सब से अधिक कोमल हृदय मनुष्य को भी यह चाहने के लिये बाध्य न कर सकेगी कि सेठी जी को दण्ड नहीं मिलता तो अच्छा होता। परन्तु बिना अपराध लगाये किसी व्यक्ति को पांच दीर्घ और दुःख-

पूर्ण वर्षों के लिए जेल में डाल रखना और स्वयं उन्हें भी यह न बतलाना कि तुमने अमुक अपराध किया था, वह और चाहे कुछ हो, क़ानून नहीं हो सकता, न्याय नहीं हो सकता और मनुष्यत्व भी नहीं हो सकता। हमें यह कहने का अधिकार नहीं है कि जयपुर राज्य पर या भारत सरकार पर अर्जुनलाल जी के विरुद्ध कार्यवाही करने का दायित्व है। हमें समाचार मिला है कि सेठी जी इन्दौर में पकड़े गये थे परन्तु ब्रिटिश सरकारी अफसरों द्वारा और बन्दी बनाकर दिल्ली भेजे गये थे और जयपुर भेजने से पहिले वे दिल्ली में कुछ दिन रक्खे गये थे। हम यह नहीं कह सकते कि यह सम्वाद सच है क्योंकि कोई सरकारी कागजात प्रकाशित नहीं हुये हैं। परन्तु यदि वास्तव में यह सब सत्य है और यदि अर्जुनलाल जी पर दिल्ली और आरा वाले अभियोगों से सम्बन्ध रखने का सन्देह है तो ब्रिटिश सरकार इस गैरब्रिटिश कार्य के उत्तरदायित्व से बच नहीं सकती। यदि अकेले जयपुर राज्य ने ही यह कार्य किया है तो हमें उनसे प्रार्थना करना पड़ता है कि उन्हें अपनी शासनप्रणाली का सस्कार करना चाहिये क्योंकि २०वीं शताब्दी में पुरानी पद्धति से राजकाज करना किसी राजा या रियासत के लिये गौरव की बात नहीं है। क्या जयपुर रियासत पर भारत सरकार के दृष्टान्त का कुछ भी असर नहीं हुआ है? यदि महाराज और उनके अधिकारी स्वय ही इस मामले का निबटारा नहीं करेंगे तो हमें यह कहने में कुछ संकोच नहीं है कि यह मामला भारत सरकार के हस्तक्षेप करने के योग्य है। यद्यपि हम यह नहीं चाहते कि बड़ी सरकार किसी स्वतन्त्र रियासत की स्वाधीनता में हस्त-

क्षेप करे, किन्तु हम इस बात पर आंख नहीं मूँद सकते कि कितने ही अवसरों पर सरकार ने अन्याय और जुल्म को रोकने के लिये हस्तक्षेप किया है और करती है और हम इस की आवश्यकता के भी विरुद्ध कुछ नहीं कह सकते। परन्तु यह सदैव हमारी इच्छा है कि देशी रियासतें ऐसी सुसंस्कृत हो जावें कि ऐसे हस्तक्षेप की आवश्यकता हो न पड़े और भारत सरकार उन्हें नित्य अधिक २ स्वतन्त्रता प्रदान करे। यदि यह मान लिया जाय कि जो बातें प्रकट की गई हैं वे सच हैं तो अवश्य पं० अर्जुनलाल जी का मामला इस योग्य है कि ब्रिटिश सरकार हस्तक्षेप करे। और यदि भारत सरकार ही का इस में कुछ भाग है तो हम यह खुल्लमखुल्ला कह सकते हैं कि उसका यह कार्य कदापि क्षन्तव्य नहीं, और उसको सुनाम की रक्षा के लिए यह अनिवार्य है कि या तो सेठी जी तुरन्त छोड़ दिये जावें अथवा उन पर न्यायालय में अभियोग चलाया जावे-यह कभी राजनीति नहीं हो सकती कि किसी जाति के लिये वास्तविक असंतोष होने का अवसर दिया जाय। जो महानुभाव राजनीतिज्ञ इस समय भारत के भाग्य के कर्त्ता धर्त्ता विधाता हैं उन्हें इस नीति वाक्य के याद दिलाने की कदापि आवश्यकता नहीं हो सकी क्योंकि लार्ड हार्डिंग ने अपने न्यायपूर्ण और सहानुभूति-युक्त शासन से भारतवासियों के हृदय में बहुत अच्छी जगह बना ली है। क्या लाट साहिब से पं० अर्जुनलाल जी के मामले को जाँच करके उन पर और उनके द्वारा सब जाति पर न्याय करने के लिये हमारी प्रार्थना व्यर्थ ही जायगी?

श्रीवेंकटेश्वर-समाचार

"विचार बिना क़ैद ।

कौंसिल के मान्यवर सभासदों के लिये बड़े लाट के ध्यान में लाने योग्य और एक घटना जैनी शिक्षा-प्रचारक श्रीयुत अर्जुनलाल सेठी जी बी० ए० पर बीतती हुई वारदात है। "न्याय" के दस्तखत वाले ने जिस अन्याय का उल्लेख किया है, उसको पढ़कर विचलित होना पडता है। अर्जुनलाल के कैद किये जाने का मुकाम भले ही अङ्गरेजी राज्य न हो, पर इन्दौर वा जयपुर की तरह किसी देशी रजवाडे में यदि कोई अन्याय-किसी मनुष्य पर विधिविरुद्ध न्यायविरुद्ध तथा धर्म्म-विरुद्ध बर्त्ताव-खुलाखुली होता हो, तो अङ्गरेजी राज्य का अखण्ड प्रताप कब उसका समर्थन करता है? इसलिये अर्जुनलाल सेठी का पहले इन्दौर राज्य में गिरफ्तार होना और पीछे छोड दिये जाते ही फिर जयपुर में गिरफ्तार होना यदि अन्याय का सूचित करने वाला हो, तो अवश्य ही सम्राट् के प्रतिनिधि बड़े लाट के ध्यान देने योग्य घटना है। यदि अर्जुनलाल न्यायालय के विधिसङ्गत विचार से दोषी ठहराये जावे, तो उनके दण्ड पर कोई भी आह तक नही कर सकता। किन्तु नौ महीने हवालात में ही रखे जाने पर भी जब उनके अदालत मे खडे किये जाने योग्य प्रमाण नही मिले, तब उनके अब भी हवालात में ही रखे जाने का तो कोई भी समर्थनयोग्य कारण नही मालूम होता। और सब से बढ़ कर आश्चर्यजनक बात तो "न्याय" का दस्तखत वाले की चिट्ठी में यही जान पडती है, कि अर्जुनलाल को कई दिन पहले किसी भी

अदालती विचार के बिना ही पाँच वर्ष कैद की सजा सुना दी गयी। यह बात यदि सत्य हो, तो बड़े ही गहरे विरोध की है। बड़े लाट के ध्यान में लाकर ही इसकी पूरी पूरी सफाई करवा लेनी चाहिये। साथ ही यह सुनकर बड़ा ही विचलित होना पड़ा है, कि उस प्रकार कैद को सजा सुना दी जाने के पीछे से देवदर्शन बन्द हो जाने के कारण उन्होंने भूखों रहना आरम्भ किया है। चाहे जैसे बने, किसी भी सहृदय कौंसिलसभासद को बडे लाट की सेवा में इस शोचनीय विषय के पहुँचा देने का उद्योग करना ही चाहिये।"

कलकत्ता-समाचार।

(३।२।१५)

"कलकत्ता-समाचार में प्रकाशित "अबला की पुकार" शीर्षक पं० अर्जुनलाल सेठी की धर्मपत्नी के पत्र की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित हुआ है। उस सम्बन्ध में हिन्दू सभा के मन्त्री की जो चिट्ठी हमें मिली है वह स्थानान्तर में प्रकाशित की जाती है। जिस अग्रवाल सज्जन ने २१) रु० "सेठी जी के परिवार" की सहायता के लिये देने की उदारता दिखायी है उसके लिये उनको बहुत बहुत धन्यवाद है। अच्छा हो, हिन्दू सभा सहायतार्थ एक फण्ड खोलदे। जिससे सहायता के लिये एक बड़ी रकम एकत्र हो सके।"

कलकत्ता-समाचार ।

(४।२।१५)

"हिन्दू सभा की चिट्ठी ।

श्रीयुक्त सम्पादक जी,

निम्नलिखित लेख को कृपा करके अपने प्रतिष्ठित समाचार पत्र में स्थान देकर सर्वसाधारण में प्रकट कर दीजियेगा ।

प्यारे हिन्दू सज्जनो, ता० ३१-१-१५ के कलकत्ता समाचार के अङ्क में "अबला की पुकार" शीर्षक लेख को पढ़ते पढ़ते नेत्रों से अश्रुपात होने लगा । श्रीमती गुलाबबाई की दुःख कहानी को पढ़कर कलकत्ता समाचार के किस पाठक का हृदय न पिघला होगा ? किस हिन्दू ने दो चार आँसू न बहाये होंगे ? उसके चिरंजीव पुत्र प्रकाश और छोटे छोटे बच्चों के साथ इस महान् संकट के समय सहानुभूति प्रकट करना जैनसमाज ही का नहीं बल्कि हिन्दू मात्र का परम कर्त्तव्य है ।

मेरे एक परम मित्र अग्रवाल वैश्य ने ज्योंही कलकत्ता समाचार के 'अबला पुकार' शीर्षक, लेख को पढ़ा त्योंही २१) श्रीमती के बच्चों के सहायतार्थ देने का प्रण किया । यद्यपि यह दान बहुत ही थोड़ा है, परन्तु प्रेम से पूरित है । अतएव आशा है श्रीमती इसे अवश्य स्वीकार कर लेंगी । मेरे जैन-भाई भी इस अबला-पुकार को सुनकर उचित सहायता देने में तनिक विलम्ब न करेंगे । दान के लिये यह स्थान अत्यन्त ही श्रद्धास्पद है । मेरे जैन भाई दान देने में किसी से

पीछे नहीं हैं इसलिये मैं भी अश्रुपात करता हुआ विनय करता हूं कि श्रीमती के पति के घर वापिस आने तक उनके बच्चों की शिक्षा, पालन, पोषण का पूरा प्रबन्ध किया जाय, किसी सभा द्वारा उन्हें मासिक वृत्ति मिलती रहे।

मुझे आशा है कि मेरे हिन्दू भाई श्रीमती की पुकार व "क्यों कर अपने बच्चे प्रकाश की शिक्षा का प्रबन्ध करूं ? किस प्रकार अपनी बालिका को पढ़ाऊँ ? शिक्षा तो एक ओर इन बच्चों को उचित भोजन भी किस प्रकार दूं ? कैसे उनके शीत का निवारण करूं ?" आदि रोमाञ्चकारी शब्दों पर ध्यान देते हुए श्रीमती के प्रति अपना कर्त्तव्य पालन करें। कलकत्ता समाचार कृपा करके लिखे कि उक्त २१) किस पते पर श्रीमती की सेवा में भेजे जायँ।

विनीत

भोलानाथ शर्म्मा

मन्त्री—हिन्दू सभा, कलकत्ता।

हिन्दी-समाचार

(२ फरवरी सन् १९१५)

श्रीमान् लार्ड हार्डिञ्ज के नाम खुली चिट्ठी।

मान्यवर !

यह वह समय है जब कि हम बृटिश राज्य की चिरका-

मना के लिये ईश्वर से नित्य प्रार्थनाएं कर रहे हैं, अपने सम्राट् की विजय चाहते हैं।

२—श्रीमान् की धर्मपत्नी और पुत्र वियोग का शोक तक भूले नहीं हैं।

३—ऐसे ही समय में अचानक हमारे चित्त को आघात पर आघात पहुँचाने वाला कार्य जयपुर स्टेट की ओर से पंडित अर्जुनलाल जी सेठी बी० ए० को कारावास में देने का हुआ है। इससे हम खेद खिन्न हैं।

४—जयपुर स्टेट की "बिना जवाब लिये सजा सुना देने" वाली कार्यवाही ने हमारे चित्तों से न्याय की श्रद्धा को चूर चूर कर डाला है।

५—आज दश मास से हम अपने जातीय लीडर को जेलयातना भोगने मे केवल बृटिश न्याय की आशा पर मौन थे। उसका भी निपटारा हो गया।

६—इसलिये भी चुप थे कि जयपुर स्टेट उन पर कोई मुकद्मा चलाने वाला है। पर जयपुर स्टेट के अन्तिम सरसरी हुक्म ने यह सिद्ध कर दिया है कि मुकद्मा चलाने का बहाना केवल समय को टालने के लिये था। फलतः सेठी जी निर्दोष हैं।

७—दिल्ली और आरा के मुकद्मों ने भी यह साबित कर दिया है कि सेठी जी निर्दोष हैं। उन पर मुकद्मा चल नहीं सकता।

८—न्याय का यह अटल सिद्धान्त है कि जब तक किसी का अभियोग से सम्बन्ध सिद्ध न हो जावे कोई अभियुक्त

नहीं समझा जाता। फिर क्या कारण है कि सेठी जी का अभियुक्तों के साथ केवल मित्र सम्बन्ध होने से जयपुर स्टेट उनको सन्देह वश जेल में सड़ा रही है।

९—जिस असामी को वृटिश न्यायालयों ने निर्दोष जान कर मुक्त कर दिया है उसके उसी सम्बन्ध में बिना मुक़द्दमा चलाये सज़ा सुना कर जयपुर स्टेट ने सआदतमंदी काम किया है या नादानी का ? इसको श्रीमान् ही विचार लेवें।

१०—वृटिश राज्य के सुशासन काल में आज तक ऐसा नहीं सुना गया कि बिना चार्ज लगाये १० मास तक जेल में रख कर किसी को ऐसी लम्बी सजा दी गई हो ! फिर जयपुर स्टेट को यह अधिकार कहाँ से प्राप्त हो गया कि वह गवर्नमेंट से निर्दोष प्रमाणित व्यक्ति को भी सजा दे सके।

११—यदि जयपुर स्टेट सेठी जी को दोषी समझता है तो उसने आज तक इस विषय के जितने प्रमाण संग्रह किये हैं उन सब को प्रकाश कर देवे। अन्यथा जिस अधिकारी के दबाव से उसने यह नादिरशाही हुक्म जारी किया है उसका नाम प्रकाशित कर देवे ताकि हम उससे ही अपने उज़् पेश करें।

१२—"राजा करे सो न्याव" इस नीति को मानने के लिये हम तैयार हैं, पर न्याय हो जब न ! हमको यह बतलाया जा रहा है कि न्यायालय चोर डांकुओं के लिये है। स्वेच्छाचारिता के लिये न्यायालय बाधक है। जिस असामी को एक शक्तिशाली राज्य ज़मानत पर छोड़ सकता है उसी को वह जेल की कोठरियों में भी सड़ा सकता है, इत्यादि।

१३-अतः यह सब प्रमाण रख कर आज हम आपसे सेठी जी के लिये न्याय की प्रार्थना करते हैं।

१४-मान्यवर ! सेठी जी केवल धार्मिक पुरुष हैं, जैन समाज के उज्वल रत्न हैं। बहुत बड़े विद्वान् हैं। परोपकारी हैं। उनके इस प्रकार जेल में पड़े रहने से एक महोपकारी शिक्षा-संस्था भूमितल हो गई है।

१५-सेठी जी ने आज तक जितने व्याख्यान दिये हैं वे सर्व समाजिक थे उनमें कहीं भी अराजक मत की पुष्टि नहीं थी, यह सी० आई० डी० भी जानता है।

१६-श्रीमान् सेठी जी का निर्दोष सिद्ध होना हमको न्याय की प्रार्थना के लिये अधीर बनाये देता है और पुलिस की अयोग्यता के कारण निर्दोष व्यक्ति का सताया जाना रोषा-पन्न कराता है अतः श्रीमान् को युद्ध की चिन्ताओं से घिरे देख कर भी विवशतः यह खुली चिट्ठी लिखनी पडती है।

१७-छात्रों के राजनैतिक दोषी सिद्ध होने से आज तक बृटिश गवर्नमेंट में कोई भी प्रिन्सिपेल अभियुक्त नहीं बनाया गया। तब सेठी जी के साथ यह बदसलूकी क्यों ? क्या जय-पुर स्टेट अण्डर ब्रिटिश गवर्नमेन्ट नहीं है ?

१८-अराजक मत के सिद्धान्तो से पागल हुए बालकों को सन्मार्ग पर लाते हुए सेठी जी को इस लेख के लेखक ने स्वयं देखा है। इससे दृढ़ता के साथ कहता है कि वे विद्रोह-पूर्ण कार्यों के सदैव विरोधी रहे हैं।

१९-श्रीमन् ! एक वह स्थान है जहाँ बृटिश राज्य की छत्रछाया में राजनैतिक अपराधी दोष मुक्त किये जा रहे हैं।

क्या यह अभागा भारत इस योग्य भी नहीं कि इसमें निर्दोष अपराधियों की पुकार आपके चित्त को दयार्द्र कर सके।

२०—अर्जुनलाल सेठी के वियोग से हम विचलित हो उठे हैं अतः यह नहीं चाहते कि सम्पूर्ण समाज विचलित हो जावे और भारत सरकार को युद्ध कालीन सहायता में बाधा पहुंचे इसलिए भी सेठी जी का प्रश्न जैनसमाज का चित्त स्वच्छ रखने के लिए समयानुकूल है।

२१—जिन कारणों से भारतव्यापी जातियों में विद्वेष फैले उनको नहीं होने देना भारत सकार का काम है। इस नीति को नहीं समझने में जयपुर स्टेट ने अज्ञता की है।

जब जब स्टेटों ने बे समझी के काम किये हैं भारत सरकार ने हस्तक्षेप किया है, इसके सैकड़ो प्रमाण मौजूद हैं। अतः भारत सरकार अपनी जिम्मेवारी से बरी नहीं है।

विश्वम्भरदास गार्गीय } राजाप्रजाहितैषीः—
झाँसी } विश्वम्भर जैन

हिन्दी-समाचार की सम्पादकीय टिप्पणी

पाठक! अर्जुनलाल सेठी की विपत्ति की बात स्थानान्तर में प्रकाशित पढ़ेंगे। यदि उस चिट्ठी के लेखक की बातें सर्वथा सत्य हैं, और अर्जुनलाल सेठी को बिना किसी अपराध ही के कारावासयातना भोग करनी पड़ती है तो अवश्य ही जयपुर राज्य को अपने फैसले पर दुबारा दृष्टि डालना चाहिए। और अपनी भूल का प्रायश्चित्त करना चाहिए।

जिस ब्रिटिश राज्य में शेर बकरी एक घाट पानी पीते हैं वह अवश्य ही सेठी जी की विपत्ति का, यदि वे सचमुच ही निर्दोष हैं, अवश्य ही उद्धार करेगी।

श्रीवेंकटेश्वर-समाचार

"बड़े लाट को खुली चिट्ठी।

(६।२।१५)

श्रीयुक्त अर्जुनलाल सेठीने क्या अपराध किया है, जिसके लिये वे जेल में कैद हैं, यह अभी तक किसी को विदित नहीं। बार बार प्रार्थना करने पर भी यह विषय साफ नहीं किया गया। हम पूछते हैं, क्या सरकार को यह मालूम है, कि इस घटना से भारत के जैन समाज में कितना असन्तोष फैला हुआ है? हमारे पास जैनियो के कई पत्र इस विषय के आ चुके हैं और भी आ रहे हैं। परन्तु बडे खेद की बात है, कि हम ज्यो के त्यो उन्हें प्रकाशित करने के लिये स्थान नहीं पाते। सब पत्रों का सारांश यही है, कि क्यों भारत सरकार अर्जुनलाल सेठो के मामले में नही बोलती और क्यो साफ साफ यह नही बताती, कि आखिर उनका दोष क्या है। उनके परिवार को इस समय जैसा कष्ट हो रहा है उसका कुछ आभास सर्वसाधारण को अर्जुनलालजी की पत्नी की चिट्ठी से मालूम हो चुका है। ऐसे समय में उस परिवार की सहायता करना, उसका हाथ पकड़ना सब सहायको का कर्त्तव्य है। आज झाँसी से एक जैन सज्जन, श्रीयुक्त विश्वम्भर-

द्वारा गार्गीय की भेजी हुई श्रीमान् लार्ड हार्डिञ्ज के नाम एक खुली चिट्ठी हमको प्राप्त हुई है। उसमें भी वही प्रार्थना की गई है, जो इस समय सारा हिन्दू-समाज सरकार से कर रहा है। अन्त में उक्त गार्गीय महाशय श्रीमान् से विनय करते हैं-"मान्यवर! सेठीजी केवल धार्मिक पुरुष हैं, जैन-समाज के उज्वल रत्न हैं। बहुत बडे विद्वान् हैं। परोपकारी हैं। उनके इस प्रकार जेलमें पडे रहने से एक महोपकारी शिक्षा-संस्था भूमितल होगयी है। सेठ जी ने आज तक जितने व्याख्यान दिये हैं वे सर्व सामाजिक थे, उनमें कही भी अराजक मत की पुष्टि नही की, यह सी. आई. डी. भी जानती है। श्रीमान्! सेठीजी का निर्दोष सिद्ध होना हमको न्याय की प्रार्थना के लिये अधीर बनाये देता है और निर्दोष व्यक्ति का सताया जाना रोषापन्न कराता है अतः श्रीमान् को युद्ध की चिन्ताओं से घिरे देखकर भी विवशतः यह खुली चिट्ठी लिखनी पड़ती है। छात्रों के राजनैतिक दोषी सिद्ध होने से आज तक बृटिश गवर्नमेण्ट में कोई भी प्रिन्सिपल अभियुक्त नहीं बनाया गया। तब सेठीजी के साथ यह बरताव क्यों? अराजकमत के सिद्धान्तो से पागल हुए बालको को सन्मार्ग पर लाते हुए सेठीजी को इस लेख के लेखक ने स्वय देखा है इससे दृढता के साथ कहना है, कि वे विद्रोहपूर्ण कार्यों के सदैव विरोधी रहे हैं। श्रीमन्! एक वह स्थान है जहां बृटिशराज्य की छत्रछाया में राजनैत्तिक अपराधी दोषमुक्त किये जारहे हैं। क्या यह अभागा भारत इस योग्य भी नही, कि इसमें अपराधियों की पुकार आप के चित्त को दयार्द्र कर सके? अर्जुनलाल सेठी के वियोग से हम विचलित हो उठे हैं अतः

यह नहीं चाहते, कि सम्पूर्ण समाज विचलित होजाय और भारत-सरकार को युद्धकालीन सहायता में बाधा पहुँचे इसलिये भी सेठीजी का प्रश्न जन-समाज का चित्त स्वच्छ रखने के लिये समयानुकूल है। जिन कारणों से भारतव्यापी जातियों में विद्वेष फैले उनको नहीं होने देना भारत-सरकार का काम है।" हमें दृढ़ विश्वास है कि सरकार इस प्रार्थना पर शीघ्र ध्यान देगी।

जैनहितेच्छु, बंबई के सम्पादक का अग्रलेख

"जयपुरराज्य, अँगरेज़ सरकार और सेठीजी का मामला।

पाचोरा (खानदेश) में सेठ बच्छराज रूपचन्दजी एक उदार धनिक हैं। आप स्थानकवासी जैन हैं। आपने पाचोरा में जैन और अजैन सब के पढ़ने के लिए एक स्कूल बनवाया है। ता० ७ दिसम्बर पूर्व खान देश के कलेक्टर ओटो रोथ-फील्ड साहब के हाथ से यह स्कूल खुलवाया गया। उस समय आसपास के बहुत से जैन अजैन सज्जन आमन्त्रित होकर आये थे। साहब बहादुर ने द्वारोद्घाटन करते समय सेठ बच्छराज जी को उनको इस उचित दानशीलता के उपलक्ष्य में धन्यवाद दिया और जैनजाति के सम्बन्ध में बहुत ही अच्छे शब्द कहे। उन्होंने कहा कि "जैन जाति दया के विषय में विशेष रूप से प्रसिद्ध है और दया के कार्यों में वह हज़ारों रुपया खर्च करती है। जैनों की मुख्य की रचना से और उनके

नामों से जान पड़ता है कि वे पहले क्षत्रिय थे। जैन बहुत ही शान्तिप्रिय हैं।"

जैनों के लिए यह बहुत ही सतोष का विषय है कि उनके विषय में एक प्रतिष्ठित यूरोपियन अफसर के मुँह से इतने अच्छे शब्द निकले। परन्तु इन शब्दों के जानने की जैनों को उतनी ज़रूरत नहीं है जितनी कि देशी राज्यों को है। कुछ समय पहले जामनगर राज्य ने अपनी प्रजा के एक धनवान् किन्तु निर्दोष जैन को क़ैद करके उसकी सारी सम्पत्ति ज़ब्त करली थी और उसे बहुत ही कष्ट दिया था। अन्त में सार्वजनिक पुकार सुनकर ब्रिटिश सरकार ने उस पर दया की और उसे मुक्त कराया। इसी तरह की एक विपत्ति जयपुर राज्य में भी एक जैन भाई पर आपड़ी है। स्वार्थत्यागी और सुप्रसिद्ध विद्वान् पं० अर्जुनलाल जी सेठी बी. ए. को जयपुर राज्य ने भी बिना किसी अपराध के हवालात में रख छोड़ा है और जैसा कि सुना गया है राज्य ने पाँच वर्ष तक इसी तरह क़ैद में सड़ाते रहने का भी निश्चय कर लिया है।

मि० ओटो रोथफील्ड जैसे ब्रिटिश अफसरों का यह कहना बिलकुल सत्य है कि "जैन बहुत ही शान्तिप्रिय हैं।" लार्ड कर्जन ने भी यही कहा था और मिसिस एनीबिसेंट ने अभी कुछ ही दिन पहले अपने 'कामन विल' पत्र में जैनजाति की राजनिष्ठा और शान्तिप्रियता का उल्लेख करके अर्जुनलाल जी जैसे सुशिक्षित जैन राजद्रोह करेंगे यह माननेसे साफ इन्कार किया है। परन्तु जैनों को जो यह ब्रिटिश सर्टिफिकेट मिला है, सो शहद से लपटा हुआ है। सच बात तो यह है कि जैन जाति बहुतही निर्बल, निरीह और नाचीज़ है। वह मि० रोथ०

फील्ड के बतलाये हुए असली क्षत्रियत्व को खो बैठी है और बहुत ही पोच कमज़ोर बन गई है। यदि ऐसा न होता तो ऐसी शान्त, निरपराध और साहूकार प्रजा पर इस प्रकार का अत्याचार या जुल्म कभी न हो सकता। सब जगह दुबले ही सताये जाते हैं। नरम पिलपिली चीज में सभी कोई उगली घूसना चाहता हैं। ईद बकरी की ही होती है, बाघ की ईद कही भी सुनाई नही दी। जैन यदि मि० रोथफील्ड के कथनानुसार वास्तव में क्षत्रिय होते तो अपनी सारी जाति को और धर्म को कलक लगाने वाले इस जुल्म को वे कभी सहन न करते और इन दश महीनो में कोई न कोई उचित उपचार किये बिना न रहते।

अभी अभी कुछ सज्जनों ने श्रीयुत अर्जुनलालजी के छुटकारे के लिए जयपुर राज्य को प्रार्थना पत्र भेजना शुरू किये हैं, परन्तु इस तरह की भिक्षाओं से हो क्या सकता है? जो राज्य निरपराधी नागरिको को किसी प्रकार का दोष सिद्ध हुए बिना ही जेल में ठूस दिया करते हैं, जिनमें बस, इतना ही प्रजाप्रेम है, इतना ही स्वदेश प्रेम है—अपने राज्य के सारे भारतवर्ष में आदृत और पूजित होनेवाले हीराओं के प्रति इसी प्रकार का अभिमान है, वे राज्य क्या इस योग्य हो सकते हैं कि उनसे प्रार्थना की जाय या उनके आगे हाहा खाई जाय? प्रार्थना की यथार्थता और प्रार्थियो के हृदय की पीड़ा समझने की योग्यता रखने वाले मस्तक और हृदयों की क्या उनमें संभावना हो सकती है? मि० रोथफील्ड, आप जैनों के नामों पर से भले ही उन्हें क्षत्रिय ठहराइए; परन्तु उनके मुंह पर से तो उन्हें मैं स्वयं जैन हूँ तो भी, क्षत्रिय नहीं

मान सकता। जिनके मुँह पर क्षत्रिय के लक्षण हों उनके हृदय में क्या क्षत्रियों के शौर्य और स्वदेशप्रेम का अभाव हो सकता है? अफसोस कि अँगरेज़ तो हमें क्षत्रिय बनाना चाहते हैं, परन्तु हम स्वयं 'दास' ही बने रहने में खुश हैं—हम अपने नामों के साथ 'दास' पद को जोड़ने भी लगे हैं। रॉथफील्ड साहब के इन क्षत्रियों के हाथ में प्रार्थना करने या हहा खाने की तरवार और खुशामद की ढाल, बस ये दो ही तो हथियार रह गये हैं। इन क्षत्रियों की यदि जयपुर राज्य कुछ सुनाई न करेगा तो फिर बहुत हुआ तो ये ब्रिटिश सरकार के पास पुकार मचाने का—विनती करने का—हथियार उठाने की बहादुरी दिखलावेंगे।

\+ \+ \+

और भीख माँगी ही क्यों जावे और किस से माँगी जावे? क्या देश के एक देशी राज्य के विरुद्ध विदेशी राजा से? क्या माँगी हुई भीख मिल जावेगी? मिलना असंभव नहीं है, तथापि मेरी समझ में ऐसी भिक्षा माँगने की अपेक्षा एक स्वदेशी नागरिक की चिता जो एक स्वदेशी राजा ने चेताई है और जिसकी धधकती हुई ज्वाला को उसके स्वधर्मी भाई तमाशगीर बनकर मज़े से देख रहे हैं, उस में चुपचाप जल जाना ही एक क्षत्रिय जैन स्वयंसेवक के लिए अधिक शोभास्पद होगा। याद रखना चाहिए कि इस चिता की भस्म पर भविष्य के देशभक्त युवक स्मारकस्तंभ खड़ा करेंगे और उसमें निम्नलिखित लेख लिखेंगे:—

जयपुरनिवासी, क्षत्रियवंशी
जैनस्वयंसेवक श्रीयुत अर्जुनलालजी सेठी ने
अपने उन्नतम धर्म और प्रियतम देश की गौरवरक्षार्थ
दया की भिक्षा नहीं माँगकर, (अपूर्व स्वार्थत्यागकर)
कृतघ्न और कर्तव्यहीन जैनों को रुलाकर
जागृत करने के लिए
और
स्वदेशाभिमान, स्वप्रजापालन और राजकर्तव्य का
अपने राजा को ज्ञान कराने के लिए
इस स्थल पर
साहसपूर्वक आत्मोत्सर्ग किया है,
इस अन्तिम प्रार्थना के साथ कि—
मेरी भस्म में से
देश और धर्म का गौरव बढ़ानेवाले अनेक सच्चे
क्षत्रिय जैनपुत्र उत्पन्न हों !

इतना लिखे जाने के बाद मालूम हुआ कि जयपुर राज्य ने ता० ५ दिसम्बर को यह आज्ञा निकाली है कि "अर्जुनलाल जी सेठी का राजनीतिक षड्यत्रों से निकट सम्बन्ध है और उसका यह आचरण राज्यनियम के विरुद्ध है। ऐसे पुरुष को स्वतंत्र रखना भयकर है, इसलिए पाँच वर्ष तक या जबतक दूसरा हुकम न निकले तबतक वह हिरासत में रक्खा जाय।"

पाठकों को मालूम होगा कि आरा महन्तकेस और दिल्ली षड्यंत्र केस में पं० अर्जुनलाल जी सेठी बी० ए० सन्देह के कारण पकडे गये थे; परन्तु नियमानुकूल जाँच पडताल करने से उन पर कोई अपराध सिद्ध नही हुआ। ऐसे भयकर अपराध का जरा भी सुबूत मिलता तो ब्रिटिश सरकार उन्हें कठिन से कठिन दण्ड दिये बिना नहीं रहती और ऐसा होना ही चाहिए, परन्तु जब ब्रिटिश सरकार पूरी पूरी छानबीन कर चुकने के अन्त में उन्हें दोषी या दण्डपात्र कहने से इन्कार करती है तब मालूम नही होता कि जयपुर राज्य ने आठ महीने बिना अपराध प्रमाणित किये किस आधार से हिरासत में डाल रक्खा है। क्या ब्रिटिश राज्य के अधिकारी और सरकारी वकील अपराध समझने की या दण्ड देने की शक्ति नही रखते हैं जिससे जयपुर राज्य को ब्रिटिश राज्य की रक्षा के लिए यह कष्ट उठाने की आवश्यकता आ पडी है? क्या जयपुर स्टेट यह सिद्ध करना चाहता है कि ब्रिटिश राज्य एक देशी राज्य की मदद के बिना अपनी रक्षा करने में समर्थ नही है? और यदि अर्जुनलाल जी सचमुच ही अपराधी हैं तो फिर उनके ऊपर खुल्लमखुल्ला मुकद्दमा चलाकर सजा देने में क्यों आनाकानी की जाती है? क्या राजद्रोही को सिर्फ़ नजरक़ैद मे रखने की ही सजा काफ़ी है? सिर्फ़ एक सन्देह या बहम से किसी गरीब प्रजा को बिना अपराध सिद्ध किये महीनो नजरक़ैद रखना और फिर पाँच वर्ष तक क़ैद में रखने की आज्ञा दे डालना, इसके लिए क्या किसी अङ्गरेजी या देशी क़ानून का आधार है? यह भी मालूम हुआ कि अभी कुछ ही दिन पहले देवदर्शन बन्द कर देने के कारण सेठी जी

थे ८-१० दिन तक अन्नपानी का स्पर्श नहीं किया था। इससे जयपुर राज्य और वायसराय साहब की सेवा में जैनों की ओर से क्षमायाचना के लिये बीसों तार भेजे गये थे। परन्तु मेरी समझ में राजद्रोह का सन्देह होने पर-भले ही वह झूठा ही क्यों न हो-दया की याचना कदापि ठीक नहीं हो सकती। दया नहीं, हम केवल न्याय चाहते हैं और हमारी यह मँगनी भिक्षा नहीं किन्तु फ़र्याद है। यदि कोई जैन किसी और कारण से फाँसी पर लटका दिया जाता तो हम लोग उसके लिए इस तरह की मँगनी न करते; परन्तु जब एक जैन-सुशिक्षित जैनग्रेज्युएट पर राजद्रोह का सन्देह प्रकट किया जा रहा है और इससे सारी जैनजाति पर—जिसमें आज तक कभी किसी प्रकार के राजद्रोह की घटना नहीं हुई है, जिसको बड़े बड़े ब्रिटिश अधिकारी शान्त से शान्त राजभक्त प्रजा बतलाते हैं और जिस जाति में सारी दुनिया की सारी जातियों की अपेक्षा छोटे से छोटे अपराध भी बहुत ही कम होते हैं-एक भयंकर कलंक लगाया जा रहा है, तब यह पुकार उठानी पड़ी है और कहना पड़ा है कि या तो अर्जुनलाल जी सेठी पर नियमानुसार राजद्रोह का अपराध प्रमाणित करके उन्हें कठिन दण्ड दो या दया के लिए नहीं किन्तु देश के गौरव के लिए, न्याय के लिए, प्रजापालन के ऊँचे धर्म की रक्षा के लिए उन्हें निर्दोष प्रकट करके शीघ्र छोड़ दो।

राजद्रोह! जयपुर में राजद्रोह! बिलकुल झूँठ! सर्वथा असम्भव! ब्रिटिश शासन के असाधारण राजनिष्ठ जयपुर राज्य में राजद्रोहियों के रहने या जन्म लेने की बात कहना एक तरह से जयपुर राज्य का अपमान या 'लाइबल' करना

है। योरोप में लड़ाई का आरंभ होते ही जो मारवाड़ी ढूंढिये जैन अपने अपने गांवों को नौ दो ग्यारह हो गये थे, उन्हीं डरपोक जाति के जैनबालकों में—और सो भी उसमें, जिस की अँगरेजी विद्या के जीतोड़ परिश्रम से शारीरिक सम्पत्ति बिलकुल लुट गई है—खून और राजद्रोह करने की शक्ति की क्या कभी सम्भावना हो सकती है? यह हवाई खयाल—यह वहम का भूत जैनजाति की चिरकाल की कीर्त्ति को मैली कर देगा और इस बिलकुल असत्य तथा हानिकारक भ्रम को स्थान देगा कि जयपुर राज्य में भी ब्रिटिश-शासन के विरुद्ध विचारों को पोषण मिलता होगा। इसी लिए हम चाहते हैं कि इस प्रश्न पर गंभीरता से विचार किया जाय और उस मार्ग को अङ्गीकार करने की दूरदेशी दिखलाई जाय जिससे कि राज्य और जैन प्रजा दोनों का विशेष हित हो।

हिरासत में देवदर्शन की रुकावट! और सो भी हिन्दू राज्य में! हिन्द माता, अब तुझे भविष्य के सुख की झूठी आशाएँ देकर अपने सन्तानों को व्यर्थ ही भुलाये रखने की चेष्टा न करनी चाहिये।

\+ + +

जो हिन्दूराज्य स्वयं मूर्त्तिपूजक है और सैकडों देवमन्दिरों के ख़र्च के लिये राजभंडार से हज़ारों रुपया प्रतिवर्ष देता है, वह मालूम नहीं किस धर्मदृष्टि से जिनदेव के दर्शन करनेकी अपने एक क़ैदी को मनाई करता है। क्या जयपुर राज्य को यह भय है कि छोटे से छोटे जीव की रक्षा का उपदेश देनेवाले और कानों में कीलें ठोकने वाले शत्रु को तथा अत्यन्त दुःखप्रद डंक मारने वाले साँप को भी क्षमा कर देने वाले जिनदेव की मूर्ति के

दर्शन से एक क़ैदी को खून या राजद्रोह करने की उत्तेजना मिलेगी? यह बात निःसन्देह होकर कही जा सकती है कि किसी भी दयासागर और शान्त देव की मूर्ति मनुष्य को कोई बुरा काम करने में प्रवृत्त या उत्तेजित नहीं कर सकती। तब क्या एक हिन्दूराज्य के लिए हिन्दुओं के धर्मव्रत-देव-दर्शन के नियम को ज़बर्दस्ती बन्द कराना उचित हो सकता है? किसी मनुष्य ने चाहे जितना बड़ा अपराध किया हो, परन्तु उसे उसके धर्म से भ्रष्ट करने की किसी भी सरकार को सत्ता नहीं है। अपराधी को शारीरिक कष्ट पहुँचाने के लिए कड़े से कड़े नियम बनाये गये हैं; परन्तु उसके धर्म में अन्तराय डालने की सत्ता आज तक किसी परमेश्वर ने, देव ने या प्रजा ने किसी भी राजा को नहीं दी है।

इलाहाबाद के 'लीडर' में सेठीजी के सम्बन्ध में 'जस्टिस' नाम धारी महाशय ने जो लेख छपवाया है वह प्रायः सभी प्रसिद्ध पत्रों में प्रकाशित हो चुका है। उसमें ब्रिटिश सरकार से सेठी जी के विषय में बीसो प्रश्न किये गये हैं जिन सबका सारांश यह है कि किसी प्रकार का अपराध सिद्ध न होने पर जयपुर राज्य के द्वारा उनको व्यर्थ कष्ट क्यों दिलाया जा रहा है?

जस्टिस के प्रश्नों से अदूरदर्शी लोग इस तरह का अनुमान करने लगते हैं कि सेठी जी को क़ैद रखने के लिए ब्रिटिश सरकार ने ही शायद कुछ युक्ति की होगी, परन्तु राजभक्त भारतवासियों को अपने मस्तक में इस तरह के अनुमान को क्षण भर के लिए भी न टिकने देना चाहिए। जो अँगरेज़ी सरकार बेल्जियम सरीखे ग़ैर देश की रक्षा के लिए अपने

लाखों मनुष्यों को कटा डालने की उदारता और न्यायप्रियता प्रकट करती है वह अपनी निरीह प्रजा के एक मनुष्य को अपराध की जाँच किये बिना ही हिरासत में रक्खेगी, रखवावेगी या कोई चाल चलेगी, इस बात पर ज़रा भी विश्वास नहीं किया जा सकता। यदि थोड़ी देर के लिए यह बात मान भी ली जाय, तो भी जयपुर राज्य इस मामले में निर्दोष सिद्ध नहीं हो सकता। जयपुर राज्य ने अपने हृदय से विरुद्ध किसी के कहने मात्र से एक अपनी ही निर्दोष प्रजा को बन्धन में डाल रक्खा है, इससे क्या इस इतने बड़े पहली श्रेणी के देशी राज्य के चरित्रबल की कमी का प्रमाण नहीं मिलता है? और देवदर्शन की मनाई भी क्या अँगरेज़ अफसरों की आज्ञा से हुई होगी? क्या इस तरह की ज़रा ज़रासी बातों के हुक्म भी उसी तरफ से आते होंगे? इससे साफ़ समझ में आता है कि इस बेकानूनी दयारहित मामले का सारा उत्तरदायित्व जयपुर राज्य के ही सिर पर है। बेचारे देशी राज्य इतना भी नहीं जानते हैं कि राजभक्ति का इस तरह अमर्यादित स्वाँग बनाने की तैयारी में हम अपने राज्य में राजद्रोह का अस्तित्व सिद्ध कर डालने की बड़ी भारी भूल कर रहे हैं और साथ ही अपनी प्रजा के हृदय मे अरुचि उत्पन्न करा के अपना ही अहित कर रहे हैं।

\+ \+ \+

तब और क्या उपाय किया जाय? कुछ नहीं, सहना-सहना और स्वदेशी राजाओं की इस बुद्धि के लिए आँसू बहाना, बस यही एक अच्छा मार्ग है। सभव है कि इन स्वदेशाभिमानी आँसुओं के प्रवाह से देशी राजाओं के हृदय धुलकर निर्मल बन

जावें और विदेशी सरकार को भी इस मामले से जैनजातियों की राजभक्ति के विषय में विशेष ऊंचा ख्याल हो जावे।

\+ \+ \+

वर्तमान युद्ध को देखते हुए विचारशील सरकार को चाहिए कि वह वहमों और शकाओं पर रची जानेवाली भयकर इमारतों को इशारा मिलते ही—पता पातेही गिरा दे और हर तरह से प्रजा के सम्पूर्ण अंगो को अपने पूर्ण विश्वास और प्यार में रखने का यत्न करे। जैनजाति प्रार्थना करे या न करे, जब सार्वजनिक पत्रों ने इस विषय में आवाज़ उठाई है तब उसी आवाज़ पर से ही प्रजाप्रिय वायसराय को इस मामले में आगे बढ़कर प्रजा के असन्तोष को शान्त कर देना चाहिए। जहाँ तक हम जानते हैं इस तरह के मामलो में माननीय वायसराय का दयाभाव, अनुभव और राजनीतिपाटव बहुत ही बढ़ा चढ़ा है।

बम्बई
ता० २६-१-१५ } बाडीलाल मोतीलाल शाह"

मिसेज ऐनी बेसट ने अपने सुप्रसिद्ध दैनिक पत्र न्यू इंडिया में निम्न लिखित टिप्पणी २ फरवरी १९१५ ई० को प्रकाशित की है—

"इन पण्डित जी के साथ जो व्यवहार किया गया है उस पर जो कुछ बहुत से भिन्न २ भारतीय पत्रों ने अपना तीक्ष्ण प्रतिवाद प्रकाशित किया है उसकी ओर सरकार कुछ भी ध्यान नहीं दे रही है। एक प्रसिद्ध जैनसभा का हमारे पास पत्र आया है कि "समस्त जैन समाज का यह विश्वास है कि पण्डित अर्जुनलाल सेठी निर्दोष हैं, वह दस वर्ष से

बराबर जैन समाज में परम-धार्मिकता के साथ कार्य कर रहे हैं। उन्होंने अपने सच्चे, वास्तविक और बिना दिखावटी प्रेम से समस्त जैन जाति का और जो कोई उनको जानते हैं. सब का हृदय जीत लिया है क्योंकि उनका उद्देश्य जाति पाँति के झगड़ों से दूर सर्वथा उदार रहा है किन्तु यदि वह अपराधी हैं तब भी यह कभी न्यायसंगत नहीं है कि उनको अपने पक्ष का समर्थन करने का न्यायालय में कोई अवसर न दिया जावे। हम केवल न्याय चाहते हैं। अभियोग होना चाहिये और यदि उसमें वह अपराधी प्रमाणित हों तो उनको दण्ड मिलना चाहिये।" निश्चय यह ख्याल सर्वथा उचित और नियमानुकूल है।

जैन जाति बहुत उच्च समाज है, वह शान्त और अहानिकारक है। प्रकटतः ही उसके न्यायभावों को आघात पहुँचाना बुरा कार्य है, और हम सब यह अच्छे प्रकार जानते हैं कि भारतीय सरकार के एक शब्द से ही जयपुर राज्य में बहुत कुछ हो सकता है।"

अमृतबाज़ार-पत्रिका की सम्पादकीय टिप्पणी

ता० १० फरवरी १९१५ ई०

"पिछले थोड़े दिनों से भारतीय समाज सेठी अर्जुनलाल के मामले पर बहुत कुछ आकर्षित हो रहा है और ऐसा होने के लिये कुछ कारण है। उनको जयपुर दरबार की ओर से पाँच वर्ष की क़ैद की आज्ञा हो गई है परन्तु यह किसी को नहीं ज्ञात कि यह सब कुछ किस अपराध के कारण हुआ। संक्षेपतः, सर्व साधारण को मालूम है, कि उनको बिना ही

किसी मुक़द्दमे के और बिना कुछ उनकी सुनाई किये ही सज़ा हो गई है। उनकी स्त्री श्रीमती गुलाब बाई ने पत्रों में प्रकाशित होने के लिये एक चिट्ठी प्रेरित की है जिसका कि अँगरेज़ी अनुवाद अन्यत्र छपा है, जो कि जैन समाज को लिखी गई है और उससे कैसी विचित्र और हृदयविदारक कहानी का पता लगता है। पत्थर का भी हृदय सेठी अर्जुनलाल और उनकी धर्मपत्नी को आपत्ति से पिघल जावेगा। विचारिये, श्रीमती अर्जुनलाल अपने बच्चों के साथ सर्वथा भूखी मर रही है। उनका पत्र इन अन्तिम शब्दों से समाप्त होता है "क्या आप मेरे रोने को .. .. .. भारतसरकार और जयपुर महाराज के पास तक पहुँचावेंगे?

यदि रीत्यनुसार मुकद्दमा चलाये जाने के पश्चात् अर्जुनलाल अपराधी प्रमाणित हो जावें तब यदि उनको दण्ड दिया जावे तो कोई उसका प्रतिवाद नहीं कर सकता। परन्तु क्या यह न्याय का गला घोटना नहीं है कि किसी मनुष्य को बिना नाम मात्र के अभियोग तक के ही बन्द कर दिया जावे। अच्छा हो यदि श्रीमती जी मामले का सब हाल लिख कर एक प्रार्थनापत्र श्रीमान् महाराजा की सेवा में भेजें।"

मिसेज़ बेसेन्ट ने अपने १०।२।१५ के "न्यू इंडिया" में जो अग्रलेख दिया है उसका अनुवाद

"बिना अभियोग कारागृह

बंगाली में पं० अर्जुनलाल सेठी जी की धर्मपत्नी का एक हृदयद्रावी पत्र प्रकाशित हुआ है जिसमें उसके अपने पति

के प्रति जयपुर राज्यद्वारा किये गये अत्याचार की शिकायत की है। इसकी ओर हम २ फरवरी को पाठको का ध्यान आकर्षित कर चुके हैं। १० महीने पहिले तक जब कि वे पकड़े गये थे पंडितजी एक शिक्षाप्रचारक जैन के नाम से प्रख्यात थे और जैसा कि उनकी पत्नी ने लिखा है "वे अन्य सासारिक झगड़ों से दूर रहना ही पसद करते थे"—वे भारतवर्षीय जैन शिक्षा-प्रचारक समिति के अधिष्ठाता और इन्दौर के त्रिलोकचंद जैन हाई स्कूल के प्रिंसिपल थे। इन्दोर ही में गत मार्च में ये पकड़े गये और यह अपराध लगा कर दिल्ली भेज दिये गये कि इनका कुछ राजनैतिक षड्यंत्रों से सबन्ध है। कोई अभियोग नहीं चलाया गया किन्तु वे जयपुर भेज दिये गये और वहाँ १० महीने तक बिना अभियोग ही जेल में रखे गये और तब उनको पाँच वर्ष की सजा की आज्ञा हो गई। इन बातो से कि जिनका कोई विरोध नही किया गया है यह मामला कुछ भी समझ में नहीं आता। वे इन्दौर में उस अपराध के लिये पकडे गये थे कि जिसके अन्य अपराधियो पर ब्रिटिश न्यायालय में अभियोग चलाया गया था परन्तु इन पर नही। बहुत आश्चर्य की बात है कि वे जयपुर की जेलमें रखे गये और १० महीने बाद एक राजकीय आज्ञा द्वारा उनका जेल में रहने का समय ५ वर्ष और बढा दिया गया। जब वे इन्दौर में पकडे गये तो उन पर वहीं अभियोग क्यों न चलाया गया और वे जयपुर क्यों भेजे गये ? यदि उनका अपराध जयपुर राज्य के विरुद्ध था तौ भी उन पर नियमानुसार अभियोग न चलाने में लेश मात्र भी न्याय नहीं हो सक्ता और फिर भी बिलकुल समझ में नहीं आया कि जनता को यह क्यों नहीं बतलाया गया कि

अपराध अमुक प्रकार का था। ज़ाहिरा तीन राज्यों का इस मामले से सम्बन्ध है, एक तो भारत सरकार, क्योंकि जैसा पहिले पत्रों में प्रकाशित हुआ था अपराध भारत सरकार के विरुद्ध ही व्यक्त किया जाता था, दूसरे इन्दौर राज्य, क्योंकि वे उस राज्य में पकड़े गये थे और अंत में जयपुर राज्य जिस का सम्बन्ध सब से अधिक आश्चर्यजनक है। यह कदापि उचित नहीं कि जिस मामले में तीन राज्यों का ऐसा सम्बन्ध हो वह इस प्रकार उलझन में फँसा रहे। प्रत्येक के सुनाम के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि कम से कम उन पर नियमानुसार अभियोग चलाया जावे। यदि वे वास्तव में दोषी हैं तो उनके छोड़ देने की प्रार्थना का कोई समर्थन न करेगा परन्तु जब तक उस न्यायालय से अपराध प्रमाणित न हो जाय कि जिसमें जनता का विश्वास है, उनको जेल में रखना उचित नहीं, जैसा कि बंगाली ने लिखा है कि लोकमत, न्याय और समय की आवश्यकता के विचार इस बात को पुष्ट करते हैं कि अर्जुनलाल पर अभियोग चलाया जाय और उसके दंड के लिये नीति को आज्ञा हो"

---

११ फरवरी के लीडर में पं० अर्जुनलाल जी के विषय में जो पत्र प्रकाशित हुआ उसका अनुवाद

"जनता के प्रतिनिधियों की अर्जुनलाल जी सेठी के मामले से असहानुभूति

महाशय, कृपा करके मुझे यह कहने की आज्ञा दीजिये कि पं० अर्जुनलाल जी की धर्मपत्नी की प्रार्थना पढ़ते पढ़ते मैं

अत्यन्त व्यथित हुए बिना नहीं रह सका। न्याय से कहीं भी इन्कार करना बड़ी विचारणीय बात है और सब देश का ध्यान आकर्षित करती है। दुर्भाग्यवश योरोपीय महाभारत होने के कारण अँग्रेजी जनता (ब्रिटिश पबलिक) और हाउस आफ कामन्स के सभासद् इस मामले में दिलचस्पी न ले सके, नहीं तो अब तक सेक्रेटरी आफ स्टेट द्वारा भारतीय सरकार को यह कितनी ही दफे कह दिया जाता कि कुछ सभासद् इस मामले को बड़े महत्व का समझते हैं और इस लिये सरकार का ध्यान इस तरफ शीघ्र आकर्षित होना चाहिये परन्तु बड़े खेद की बात है कि "इम्पीरियल लैजिसलेटिव काउन्सिल" के जो कि हमारे घर के अधिक समीप है, किसी सभासद् ने सरकार को इस विषय मे प्रश्न पूछना उचित नहीं समझा जिससे सरकार को सब मामला साफ तौर पर कहना पड़ता।

काउन्सिल के चुने हुए सभासदों को स्मरण रखना चाहिये कि कुछ भी हो, वे देश के प्रतिनिधि हैं और इसलिये नैतिक रीति से अपने कार्यों और उल्लघनों के लिये जनता के उत्तरदाता हैं। यह बात कि उन्हें जनता स्वयं नहीं चुनती उनका उत्तरदायित्व कुछ कम नहीं कर देती। वे देश के नेताओं में हैं और नेताओं के अधिकार प्राप्त करने के लिये भी प्रयत्न करते हैं किन्तु नेतालोग यदि देश मात्र की सेवा करने के लिये नहीं तो और किस लिये हैं? इसका क्या कारण है कि साधारण और कम योग्यता रखने वाले पुरुष इनका इतना आदर करते हैं और उनके सामने मस्तक झुकाते हैं? सिर्फ यह ही कि उन से उन पुरुषों में जिनको वे अपने नेता समझते हैं सर्वसाधारण की फर्यादों को सरकार तक पहुँचाने की ज्यादा योग्यता है और उनको

ऐसा करने के लिये अधिक अवसर भी प्राप्त होता है। जितने यहाँ के नेता समालोचना से अप्रसन्न रहते हैं उतने, मेरे ख़याल में, और किसी देश के नेता नहीं रहते। मुझको यह कहना पड़ता है, और मुझको यह कहने में कुछ सुख नहीं मिलता कि संसार के और किसी भी देश में नेता लोग अपने देश की आवाज का इतना कम आदर नहीं करते। मुझको राजद्रोही मनुष्यों के साथ रत्ती भर भी सहानुभूति नहीं है किन्तु क्या पं० अर्जुनलाल जी कभी राजद्रोही प्रमाणित किये गये? कौनसा सिद्धान्त है जो राष्ट्रीय जीवन की नीव तक इस सिद्धान्त से कि कोई भी मनुष्य तहकीकात हुये बिना कारागृह के दुखो का भोगी नही बनाया जा सकता, अधिक पहुँचता है? किन्तु हम बार बार सुनते है, किन्तु इस ही सिद्धान्त के विमुख प० अर्जुनलाल सेठी के साथ बर्ताव किया गया है यदि प० अर्जुनलाल से नेता लोग अधिक परिचित होते तो यह सम्भव नही था कि सब आकाश न्याय के अपमान की ध्वनि से वहाँ गूंज उठता किन्तु क्या इस बात से कि वे कम विख्यात हैं, सिद्धान्त मे कुछ अन्तर आता है। हम सरकार पर क्या दूषण लगा सकते हैं जब कि हमारे अधिकारोँ और स्वतन्त्रता के प्रतिनिधि ही उदासीन रहते हैं। उनही के पद और कीर्ति के लिए मेरी यह इच्छा और प्रार्थना है कि कमसे कम 'वाइसराय की कौंसिल' के कुछ सभासद अधिक समय व्यतीत किये बिना अपने अब तक उपेक्षित कर्तव्य के पालन करने के लिये तुरन्त तैयार हो जावें।

एक मुसलमान राष्ट्रीय"

कलकत्ता बजट (एक अङ्गरेजी दैनिक पत्र) का अग्रलेख

ता० ११ फरवरी १९१५ ई०

"एक विचित्र मामला

एक विचित्र और समझ-शक्ति में बाह्य मामला पण्डित अर्जुनलाल सेठी बी० ए० जयपुरनिवासी का है। हम कहते हैं विचित्र, क्योंकि चार तारीख वर्त्तमान मास को जो इस सम्बन्ध में इस पत्र में एक 'जस्टिस' नामधारी की चिट्ठी प्रकाशित हुई थी और उसमें जो बहुत से प्रश्न किये गये थे उनमें से एक का भी हम उत्तर नहीं दे सके हैं। परन्तु हम समझ सकते हैं कि ऐसा मालूम होता है कि पण्डित जी से कोई अफ़सर नाराज हो गया होगा, कोई पुरुष उनसे अप्रसन्न हो गया होगा, जिस के अधिकार मे जीवन और मृत्यु का अधिकार होगा, जिसके कारण उनको इतना दुःख भोगना पड़ा है और अब भी भोग रहे हैं। सब का सब मामला सर्वथा विचित्र है, ब्रिटिश आदर्श, ब्रिटिश पुरातनत्व, ब्रिटिशभाव और ब्रिटिश शासन से इतना दूर है जितना कि सूर्य, चन्द्रमा और तारे पृथ्वी से हैं। 'जस्टिस' की चिट्ठी में जिस व्यवहार का उल्लेख है कोई मनुष्य जिसको पाश्चात्य सभ्यता तथा सभ्य राज्यो के सिद्धान्तो से तनिक भी परिचय है उससे मिलती जुलती बात को भी अपने ख़्याल में नहीं ला सकता।

× × ×

परन्तु हम पाठकों तथा शासकों से यह कह सकते हैं कि इस मामले से भारत की जैनजाति को बहुत दुःख पहुँचा है और इसका कारण समझना कुछ कठिन नहीं है।

+ + +

इसलिये वह राजनैतिक अपराधों में सम्बन्ध रखने के सन्देह पर पकड़े गये थे। परन्तु जैसा कि शायद सब को ख्याल था उनको ब्रिटिश राज्य के सुपुर्द नहीं किया गया जैसा कि होना चाहिये था यदि उनका ब्रिटिश इण्डिया में किये हुये अपराधों से सम्बन्ध होता।

+ + +

यहाँ तक कि हम को मालूम है गत दिसम्बर तक भी उनका कोई मुक़द्दमा नहीं किया गया, तदपि किसी मनुष्य की बिना मुक़द्दमे के तीन मास से अधिक के लिये स्वतन्त्रता छीनना ब्रिटिश राज्य के न्यायनियम के विरुद्ध है।

+ + +

हम यह ज़रूर कहेंगे कि हम इन्दौर राज्य में ऐसी बुराई की ख़बर सुनने को कभी तैयार नहीं थे क्योंकि यह प्रायः सबको मालूम है कि इन्दौर के महाराज बरोदा के गायकवार को प्रशंसा की दृष्टि से देखते हैं।"

+ + +

(शेष फिर)

रामजीलाल शर्म्मा के प्रबन्ध से हिन्दी प्रेस, प्रयाग में मुद्रित.

सूची ।

नाम ... पृष्ठ

हिन्दी प्रेस, प्रयाग

" श्रीमद्विजयानन्दसूरिभ्योनम "

देवपरीक्षा

प्रथम भाग

योजक

चांदन राम जैनी अम्बाला
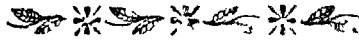
प्रकटकर्त्ता

आत्मानंद पुस्तक प्रचार मंडल, देहली

वीर निर्वाणात् २४४० — आत्म सं० १९

विक्रम १९७१ — ई० स० १९१४

प्रति २०००

बाम्बे मैशीन प्रेस, लाहौर ॥

मूल्य)॥

श्री वीतरागाय नमः

"गतौ रागद्वेषौ विविधगतिसंचारजनकौ
महामल्लौ दुष्टावतिशयबलौ यस्य बालिनः
प्रभोर्देवार्यस्य प्रचुरतरकर्मारिविकलं
नमामो देवं तं विबुधजन पूजाभिकलितम्

विजयानन्द सूरि
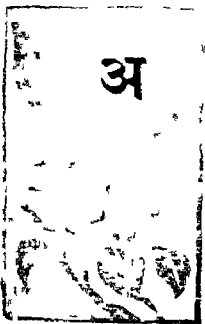
त्यन्त रमणीय ऋतुराज वसंत के विलासमय साम्राज्य का प्रभाव सर्वत्र व्याप्त होरहा था, निर्जन और भयंकर वन प्रदेश ने भी अपनी महामनोहरतामय स्वर्गीयता धारण की थी। परन्तु हमें इस क्षण में जिस अरण्य प्रदेश का निरिक्षण करना है उस अरण्य प्रदेश में एक सुविशाल कलकल निनादिनी नदी अपने अपरिमित जलप्रवाह रूप शीघ्रपद की गति से अपने पति महा सागर को मिलने के लिए तत्पर न हो रही हो ऐसी मालूम होती थी, उस के किनारे सब प्रकार के वृक्ष

प्रफुल्लित होरहे थे आम्रवृक्ष नींबुवृक्ष और केलीवृक्ष आदि की शाखायें स्वादिष्ट फलभार से नम्र होरही थीं, लता रूप ललनायें वृक्ष रूप वल्लभ को गाढ़ आलिंगन देकर " विनाश्रया न शोभन्ते पंडिता वनिता लताः" इस सिद्धान्त की सत्यता का परिचय करा रही थी, वसन्त कोकिलायें अपने कमनीय कूजन के व्यापार को अव्याहत चला रही थी और मयूर-समुदाय अपने नृत्य के व्यवहार में निमग्न हो रहे थे, भ्रमरो के गण वृक्षों पर इधर उधर फिरते हुए कर्ण-मनोहर गुंजन कर रहे थे. शीतल और मन्द सुगंधित वायु चल रहा था. सरोवरों में सुन्दर सरोज सुमन शोभा दे रहे थे, लता कुंजों में कलापी के कारव करते हुए भ्रमण करते थे,वसन्त ऋतु ने मानों कामी जनों की काम वासना को उद्दीपन करने वास्ते ही यह मदनोत्तेजक साधनों का विलासजाल सर्वत्र न फैलाया हो ऐसा ही परिपूर्ण भास हो रहा था, वसंत की निर्मल कौमुदी विभूषित शुक्ल पक्षीय निशा में मृग आदि तृणभक्षक पशु इतस्ततः स्वेच्छ संचार कर रहे थे और सिंह, व्याघ्र, रीछ, चित्ता, वराह आदि हिंसक

वनपशु भयंकर गर्जना करते सर्वत्र भ्रमण कर रहे थे, शृगाल आदि चतुर और भीरू पशुओं की भी वहां न्यूनता न थी, ऐसे वनप्रदेश में शुक्ल त्रयोदशी की रात्रि को खिडी हुई कुमुदिनीयो से बडे विशाल सरोवर की पाल पर इन्द्रप्रस्थ के रहने वाले "चन्द्र" और "प्रकाश" नामक दो मित्र अपनी इच्छानुसार परस्पर वार्तालाप कर रहे थे, एक प्रहर रात्रि व्यतीत हो चुकी थी तो भी उन्हे अपने घर आने का विचार वहा की सुन्दरता भुला रही थी, ऐसी स्थिति में उस सरोवरके दक्षिण दिशाकी तर्फसे एक कारमी चीसकी आवाज उन दोनों के कानों में पड़ी, उस आवाज के सुनते ही "चन्द्र" और 'प्रकाश" का दयार्द्र हृदय कांप उठा, उस दिशा की तर्फ दोनों की दृष्टि गई, न्यूनी अनुमान सौ कदमके अंतर एक वटवृक्ष के नीचे उन्हे चन्द्रमा की चादनी से मन्द हुआ हुआ एक दीपक का प्रकाश मालुम पड़ा, इतने ही में, उसी तर्फ से दूसरी बार चीस आई कि "अरे मुझे बचाओ, पापी के हाथ से छुड़ाओ, मरा रे मरा हाय रे" इस आवाज के सुनते ही दोनों मित्रों से न रहा गया

एके दम उठ खड़े हुए और जिधर से वह आवाज आई थी उसी तर्फ बड़ी शीघ्रतासे गमन करते हुए "चन्द्र" को "प्रकाश" कहने लगा कि "मित्र ! खेद है कि अपने पास कोई शस्त्र नहीं है मालुम देता है कि वहा पर हमें किसी आपत्ति का सामना करना पड़ेगा" ॥

"बंधु प्रकाश ! खेद को मत प्राप्त हो, अपने हृदय में पंचपरमेष्ठी मंत्र रूप शस्त्र विराजमान हैं उस के सामने बाह्य शस्त्र किस गिनतीमें है, धैर्य धर, भय नहीं" ॥ चन्द्र ने अपनी दृढ़ता और वीरता प्रकट करते हुए "प्रकाश" को कमजोर हृदय को उत्साही कर दिया. थोड़ी देर में उस वटवृक्ष के नीचे दोनों जा पहुंचे देखा तो एक पाषाण की कालिका देवी की मूर्ति के सामने हाथमें तलवार लेकर बैठे हुए बड़े हृष्ट पुष्ट शरीर में सिंदूर आदि लगाए हुए रोड मोड़ शिर वाले आदमी को देखा, उस ने देवी के सामने कितनी एक पूजा की सामग्री रखी हुई थी और एक कुंड (वेदी) खोद कर उस में अग्नि जला रखी थी, पास में एक मनुष्य जिसके हाथ पैर बांधे हुए थे पड़ा २ रुदन कर रहा था, यही मनुष्य कभी २ उच्च स्वर

मे चीस मार कर पुकारता था इस कारवाई को देख कर "चन्द्र" ने उस खड्ग ग्राही पुरुप को बड़े रोप में आकर तिरस्कार पूर्वक कहा कि

"अरे ! नीच पापिष्ठ ! क्या ये तूंने अकृत्य प्रारंभ किया है ? छोड़ दे इस विचार को जल्दी नही तो तेरे लिये अच्छा न होगा "

उस ने अपने सामने जब इन दोनों जनों को खड़े हुए देखा तो विचार करने लगा कि यह मेरे कार्य में विघ्न डालने वाले कौन आलगे, अस्तु, पहले इन्ही दोनो को इस तलवार से समाप्त कर दूं, पछि निश्चित पूर्वक अपनी इष्टसिद्धि करूंगा ॥ ऐसा विचार कर हंसता हुआ खड़ा होकर "चन्द्र"से कहने लगा कि आओ आओ, तुम मेरे पास आओ , इस को तो मैं छोडूंगा कि नही,लेकिन तुम को तो पहले ठिकाने सर पहुंचा दूं, मालूम होता है कि मेरी इष्टदेवी मुझ पर आज अत्यंत तुष्टमान हुई है, जो एक पुरुष मुशकिल से मिला था, तुम दो और मेरे पुण्य से आगये हो, अब जिस किसी अपने इष्टदेव देवता का स्मरण करना हो करलो " ऐसा कह कर "जय जगदंबे " इस पद

को ऊंचे से उच्चारण करके तलवार उठाई, उस का यह कहना सुनते ही "चन्द्र" क्रोध में आकर उस के ऊपर बिजली की तरह मुख से कड़कड़ाहट का शब्द करता हुआ टूट पड़ा, उस के हाथ से रही हुई तलवार एकदम ज़मीन पर जा पड़ी, उसे पड़ते ही लपक कर "प्रकाश" ने उठा लिया तब निरुपाय सोच में पडे हुए उस को "चन्द्र" ने कहा—

"क्यों ? बता अब तेरा क्या करूं ?" इतना कह कर "चन्द्र" ने उसे छोड़ दिया और कहा कि "अरे नराधम ! नीच ! जा चला जा यहां से, आज अपने कोई पुण्य का उदय समझ जो जीवित मिला नहीं तो यह तेरी जगदम्बा देवी तेरे रुधिर का पान करती"। उस नराधम को "चन्द्र" के इन वाक्यों से बडा भारी क्रोध पैदा हुआ, कुन्ड में जलती हुई एक लकड़ी उठा कर मारने के लिये सामने खड़ा होकर बोला—

"अरे दुष्ट ! क्या बोला ?"

"पापी का पाप बोला और क्या बोला ? अभी भी अपनी दुष्टता से नहीं हटता" "चन्द्र" ने डपट कर कहा।

"क्या तुझे मृत्यु से डर नहीं ?" नराधमने नया ही प्रश्न किया,

"क्या तुझे दुर्गति का डर नहीं ?" चन्द्र ने बलवान् स्वर से उत्तर दिया।

"मूर्ख ! दुर्गति तो पापके करने से होती है" नराधम ने कहा।

"अरे अधमाधम ! तेरे जैसा पापी कौन होगा जो विलाप करते हुए मनुष्य की हत्या करने को तैयार होरहा है" चन्द्र ने स्फुट उत्तर दिया।

"मुझे पापी सिद्ध करने वाला दुनियां के तख्ते पर कौन है ?" नराधम ने प्रश्न किया।

"श्रेष्ठधर्म, सुधर्म, उत्तमधर्म" चन्द्र ने उत्तर दिया, "तथा तेरा अपकृत्य, और कौन ?"

"मुझे पाप करते हुय देखनेवाला कौन?" नराधम ने प्रश्न किया॥

"केवलज्ञानी सर्वज्ञ परमात्मा परमेश्वर तथा धर्म को समझने वाले उस के नेता तथा मैं जो तेरे सामने खड़ा हुं ?" चन्द्र ने उत्तर दिया।

"अरे मूर्ख ! मुझे धर्म करते हुए को अधर्म का दोष लगाने से तुझे कैसा पश्चाताप होता है सो तो तू

देख, ” नराधम ने धमकी दी ।

“तेरे पापका घड़ा भर गया है इस का परिणाम फल तुझे क्या मिलता है सो तो तू देख ? ” चन्द्र ने भी सामने धमकी दी ।

“तू मूर्ख है तेरी बुद्धि ठिकाने नहीं है” नराधम बोला

‘तू महा मूर्ख है, तुझे भले बुरे का विवेक नहीं धर्माधर्म का विचार नहीं, मिथ्या स्वार्थ के लिये अंधा हुआ र पाप करने को उद्यत हो रहा है” चन्द्र ने उत्तर दिया ।

“अरे ! चुप कर, क्यों मरने को उद्यत हुआ है अगर अपना भला चाहता है तो तलवार यहा रख दे और भाग जा जल्दी यहां से अपने इस मित्र को ले के, नाहक मेरे धर्म में विघ्न मत डाल, तेरी बुद्धि भ्रष्ट हो रही है जो शास्त्रविहितधर्म को अधर्म बतलाता है अभी जो मेरा इष्टदेव क्रोध को प्राप्त होगा तो तुझे और तेरे इष्टदेव दोनों को भस्म कर देगा तू मेरे से तो नहीं डरता लेकिन देव से भी नहीं डरता जो देव से नहीं डरते और धर्मशास्त्र में लिखी हुई विधि को नरक का कारण पाप बतलाते हैं वे तेरे जैसे मूर्ख के सिवाय दुनिया में और कौन होंगे ? ” नराधम ने अपने इस कथन से चन्द्र को अपने आधीन

बनाना चाहा ।

'बस बस ! अलम् बहुत बक बक करने से, अरे पापी ! एक तो पाप करता है दूसरे धर्म का नाम लेकर धर्मशास्त्र तथा देवादिकों को कलंकित करने रूप असत्य बोल कर द्विगुणे पाप का भागी क्यों बनता है ? जैसा तूं है जैसा तेरा देव होगा और जैसा ही तेरा शास्त्र, मुझे डर वर कुछ नहीं है, बुला तेरे देव को देखू तो सही कि तेरा देव कैसा है ? " चन्द्र ने खडाके के साथ उत्तर दिया ।

"मालूम देता है कि तू नास्तिक है ?" नराधम ने प्रश्न किया ।

'तुझे पाप करने से रोका इस लिए ? " चन्द्र ने उत्तर के साथ प्रश्न कर डाला ।

"अरे ! फिर वोही, मुझे पापी कहते है " नराधम चिड़ कर(मारने को जलती हुई लकड़ी उठा कर)दौड़ा ।

"एक दफे नही हजार दफे तूं पापी, पापी महा पापी " चन्द्र ने उत्तर दिया ।

उस नराधम के साथ इस प्रकार की रक झक को देख कर "प्रकाश" ने मित्र से कहा कि "भाई ! इस पापी के साथ वाद विवाद से क्या मतलब है, चलो इस

बिचारे मनुष्य के बंधन खोल दो और अपने साथ ले चलो, इस के साथ बोलना भी पाप है" ऐसा कह कर "प्रकाश" उस मनुष्य के बंधन खोलने के लिये आगे बढ़ा, योंही उस नराधम ने मारने के लिए उठाई हुई लकड़ी से प्रहार करना ही शुरु किया था, कि चन्द्र ने बीच ही में पकड़ कर जमीन पर गिरा दिया और जिस आदमी को इसने जिस रस्सी से बांधा था उसी के साथ बांध कर "चन्द्र" ने कहा कि:—

"क्यों ? बता क्या करूं अब तुझे? किधर है तेरे देवी देवता जिन की क्षुधा को दूर करने के लिए इस मनुष्य को तूने बांधा था, अब कहे तो तुझ से ही तेरे इष्ट की तृप्ति कराऊं? "चन्द्र" के कहने को सुनकर दोनों हाथ जोड कर बोला कि "मुझे छोड़ दो। मैं तुम्हारे शरण हूं" जान किसे प्यारी नहीं होती॥ चन्द्र ने उस की दीनता पर तरस खाकर उसे छोड़ दिया तब प्रकाश ने उस से पूछा कि "तू सच सच बता कि तू कौन है? और कहां का रहने वाला है? इस जगह आकर यह अकृत्य करने का कारण क्या है ?" ऐसे "प्रकाश" के पुछने पर वह बोला कि—

"मेरा नाम "भद्रदत्त" हैं मैं इसी शहर के रहने वाला ज्ञाति का द्राविड ब्राह्मण हूं.मुझे मेरे पिता ने कहा था कि जब तुझे कोई इष्ट वस्तु की इच्छा हो तो चैत्र शुक्ल त्रयोदशी को इस उद्यान में इस इष्टदेव जगदंबा के सामने एक पुरुष की बलि देने का प्रण कर जाना और जब कार्य सिद्ध हो जावे तो विधि पूर्वक नरयज्ञ करना सो मुझे पुत्र प्राप्ति की इच्छा थी वह पूर्ण होने से मैं यहां आया था,इतने में तुम आ पहुंचे,कहो अब क्या करूं ? देवता की बलि न देने से अगर देवता रुष्ट होगया तो ? मुझे इस बात की बड़ी चिंता है" उस भद्रदत्त के वचन सुन कर "चन्द्र" ने कहाकि "यह क्या तुझे निश्चय है कि बलि देने से देवता तुष्टमान होते है और न देने से नहीं ?"

"हां ! अगर ऐसा न हो तो लोक क्यों करे ?" भद्रदत्त ने उत्तर दिया।

"तो कोई पुरुष अपनी इष्टसिद्धि के लिए देवता के आगे तेरी या तेरे पुत्र की बलि देवे तो ?" यह चन्द्र का कहना सुन कर भद्रदत्त तो चुप कर रहा तब

चन्द्र ने कहा कि "भाई! अपने इष्ट की सिद्धि यदि अपना पूर्व कृत्य पुण्य किया हुआ हो तो ही होती है, जीवों को सुख दुख में अपने किये पुण्य पाप का फल है, देवता तो न किसी को सुखी करते है न दुखी, यदि देवता भी सुख दुख देवेंगे तो वह भी उसी को ही सुखी दुखी करेंगे जिस का जैसा पुण्य पाप, यह प्रत्यक्ष हिंसा करके पाप को धर्म मानना इस से परे और महापाप क्या होगा? यह जीव अनन्त काल से इस संसार में चार गति चैरासी लाख जीवा योनि में इसी पुण्य पाप के फल सुख दुख को भोगता आरहा है।

जिसने मनुष्य जन्म पाकर यह नहीं समझा कि देव किस को कहते है? कुदेव क्या है? गुरु क्या है? कुगुरु क्या है? धर्म क्या है? अधर्म क्या है? पाप पुण्य क्या? स्वर्ग नरक क्या है? वह जीव कैसे सुखी हो सकता है इसलिए हे भद्र! आज पीछे ऐसा कृत्य करने को अपने मन में भी मत लाना, यह अच्छी तरह समझना कि देव वही है कि जिस के कथन में हिंसा का उपदेश नहीं"।

भद्रदत्त—मैं आपका उपकार मानता हुं, इतना ही नहीं

किंतु भवांतर में भी आप के उपकार को भूलु
गा नहीं, आपने जैसे मुझे अभयदान दिया है
वैसे ही मेरे पर कृपा करके उस सच्चे देव गुरु
धर्म की पहिचांन कराओ, जिस द्वारा मेरे
आत्मा का कल्याण हो"।

चन्द्र–भद्र! अब रात्रि अधिक चली गई है इसलिए
अब तो चलो, कल प्रातःकाल में तुम्हें यथार्थ
देव गुरु धर्म का स्वरूप गुरु महाराज के पास
से सुनवायेंगे।

भद्रदत्त–आपके गुरु कहां रहते हैं?

चन्द्र–इस नगर के बाहर ही एक उपाश्रय में रहते है

भद्रदत्त–है! है! "उपाश्रय" यह स्थान तो जैन लोकों का
कहाता है"

चन्द्र–मै जैन ही हूं क्यों तुम ऐसा चमकते क्यों हो?

भद्रदत्त–अरे रे! खैर तुम मेरे उपकारी हो इसलिये मैं
कुछ नहीं कहता, वरना जैन लोक तो वही न
जो नास्तिकों की कोटि में कहाते हैं न ब्रह्मा
को मानें, न विश्नु को, न महादेव शिव
को, न वेद मानें, न शास्त्र, न तीर्थ मानें, स्नाना

यह तो मैंने अपने धर्म के कई पंडितों से सुना है।

चन्द्र–भाई भद्र! यह सुना ही है कि जैन शास्त्रों में उन का मन्तव्य देखा भी है, चन्द्र ने प्रश्न किया।

भद्रदत्त–क्या सुना है वह असत्य सुना है?

चन्द्र–बेशक, ? असत्य ही नहीं किंतु महा असत्य

भद्रदत्त–अच्छा ! जैनलोक ब्रह्मा विष्णु महादेव को मानते है?

चन्द्र–असली ब्रह्मा विष्णु महादेव को मानने वाले तो जैन ही है बाकी तो" —

भद्रदत्त–हा हा ! रुकते क्यों हो, कहो कहो, बाकी तो आगे क्या कहते २ रुक क्यों गये?

चन्द्र–बाकी तो मात्र नाम धारी ब्रह्मा विष्णु महादेव को मानने वाले है

भद्रदत्त–मुझे तुम्हारी बात सुन कर आश्चर्य होता है

चन्द्र–क्यों

भद्रदत्त–क्यों क्या ? जो बात तुम कहते हो यदि सत्य हो तो बडा ही आश्चर्य है, मुझे तो रात भर नींद आनी भी मुश्किल है, अच्छा खैर इत्यादि बातें करते २ चारों जने नगर में आये, भद्रदत्त अपने घर पहुंचा, जिस पुरुष को भद्रदत्त के हाथ से छुडाया था वह "चंद्र" और "प्रकाश" का बारंबार उपकार मानता हुआ घर पहुचा, सब की रात्री आनन्द में समाप्त हुई, भद्रदत्त चन्द्र के कहे हुए स्थान पर प्रातः उठते ही आ हाजर हुआ, इधर से दोनों मित्र भी अपने नित्य नियम पूजन पाठ आदि करके वहा पहुंचे तीनों जने मिल कर उपाश्रय में पहुचे, गुरु महाराज को नमस्कार करके चन्द्र ने भद्रदत्त से कहा कि "हा पूछो श्रीगुरुमहाराज से रात्रि में जिस बात के लिये आश्चर्य मनाते थे" चन्द्र की प्रेरणा से भद्रदत्त ने जैनमुनि से पूछा कि "महाराज ! मैंने सुना है कि जैनलोक ब्रह्मा विश्नु महा- देव मानते हैं सो यह क्या बात सत्य है ?

यदि यह बात सत्य निकले तो मैं अपने दिलमें धारण करके आया हूं कि जैनधर्म स्वीकार कर लेना—

"भाई तुम्हारा नाम क्या है ?" मुनिराज ने पूछा

"विभो ! मुझे 'भद्रदत्त' के नाम से बुलाते है" भद्र ने कहा—

मुनि— "भाई भद्र ! तुमने जनधर्म स्वीकार करने की जो प्रतिज्ञा प्रगट की सो ठीक है परन्तु इस से पहिले यह विचार करने की आवश्यक्ता है कि मनुष्य साधारण से साधारण एक सांसारिक वस्तु लेने के लिए जाता है तो वह कितनी पूछ परछ करके अपने दिल की तसल्ली के लिए कई दुकानों फिरे बाद उसे अंगीकार करता है, यह तो धर्म वह वस्तु है जो इस जीव को संसार के जन्म मरण मिटा कर परमपद अनंत सुख मोक्ष को देनेवाली है उस के लिए सहसा अच्छी तरह परीक्षा किये विना या किसी के सुने सुनाये धर्म को अधर्म या अधर्म

को धर्म मान अंगीकार करना पीछे से पश्चाताप का कारण होता है, जैसे विना विचारे सुवर्ण लेने वाले पुरुष को पीछे से पश्चाताप होता है कि हाय ! हाय ! यह तो पीतल निकला, उस समय उसे कैसा दुःख होता है ॥

भद्र ! इसी प्रकार जो पुरुष अपने २ कुल परंपरा रूढि से माने हुए धर्माधर्म का विचार नहीं करते, वे पीछे पश्चाताप के भागी होते हैं । इस लिए हे भद्र ! हर एक पुरुष को धर्म की अच्छी तरह परीक्षा करके ही अंगीकार करना चाहिए जो मनुष्य वस्तु तत्त्व को श्रवण करने के लिए अपने दोनों कान लगाते हैं और उस सुने हुए तत्त्व को बुद्धि द्वारा विचार करते हैं वो ही तत्त्व पदार्थ को प्राप्त कर सकते हैं, परं जो सुन कर विचार नहीं करते, वे धर्म तत्त्व को क्या जान सकते है ?

भद्र ! इस जगत् के जितने धर्म हैं वे अगर जीव को दुर्गति से बचा कर सुगति में ले जाने वाले हैं, तो वे सब ही धर्म जैनधर्म से बाहर नहीं हैं ।

जैन कहते किसको है, लोक यही नहीं समझते, परन्तु जैन के नाम से भड़कते हैं, अगर ख्याल किया जावे तो जितने वैष्णव धर्म को मानने वाले है, वे सब ही विष्णु भगवान् के सहस्रनाम को स्वीकार करते है और "विष्णु सहस्रनाम" का पाठ करने वाले "जिनेश्वर" का नाम रटन करे और 'जिन" भगवान् के कहे धर्म को अपने मुख से नास्तिक बतावें यह पक्षपात हठ-कदाग्रह नहीं तो और क्या है ?

भद्र—महाराज ! मुझे आपकी वाणी सुन कर एक और ही दुनिया नज़र आने लगी । कृप नाथ ! "विष्णु सहस्रनाम" का पाठ तो मै सदा स्मरण करता हूं, परंतु यह विचार आज तक मैंने कभी नहीं किया, कृपा कर "जिन" इस का अर्थ क्या ? और जैन किसे कहते हैं ? सो बतलाईये ॥

मुनि—भद्र ! यह तो ज्यूं ज्यूं विचार करोगे त्यूं त्यूं तुम्हें मालूम होगा कि सत्य क्या है, भद्र ! जिसने संसार में भ्रमण कराने वाले

रागद्वेष को जीता हो उसे "जिन" कहते हैं। 'जयति रागद्वेषादीनरीनिति जिनः"-उस का कहा हुआ जो धर्म वह 'जैनधर्म" है ॥

भद्र—महाराज ! यह तो चाहे कोई हो ॥

मुनि—बेशक ! बेशक ! जो चाहे सो हो पर हां जिस के रागद्वेष नाश हो चुके हों वह जिन है। चाहे ब्रह्मा हो, विष्णु हो, महादेव हो या तुम हो, चाहे मैं होऊं कोई हो ॥

मुनि का यह कथन सुन कर भद्र हसने लगा, तो मुनि जी ने पूछा कि 'क्यों भाई ?"

भद्र ने हाथ जोड़ कर कहा कि "महाराज ! मै अपने हृदय का आनन्द रोक नहीं सकता, क्योंकि आपने तो सब को यहीं ब्रह्मा, विष्णु और महादेव बना दिया। खैर ! अब आप कृपा कर मुझे ब्रह्मा विष्णु और महादेव जैन मानते है, यह कैसे सो बतला-इये ॥" मुनि जी ने कहा कि "भद्र ! जैसा जैन मानते है वैसा संक्षेप मात्र से तो ब्रह्मा, विष्णु, महादेव का स्वरूप इस एक ही श्लोक में आ जाता है ॥ यतः—

यस्य निखिलाश्च दोषा,
न सन्ति सर्वे गुणाश्च
विद्यन्ते ब्रह्मा वा विष्णुर्वा,
हरो जिनो वा नमस्तस्मै ॥१॥,'

(आर्यावृत्त)

मतलब जिसके सब दोष अर्थात् राग, द्वेष, मोह, अज्ञान आदि अष्टादश दूषणों में से एक भी नहीं है। अर्थात् क्षय—नाश होगये है और दूषणों के नष्ट होने से आत्मा के अनन्त गुण जिस में प्रगट हुए है, अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त चारित्र, अनन्त वीर्य आदि गुण जिस में विद्यमान हों वह चाहे ब्रह्मा के नाम से हो, चाहे विष्णु और चाहे हर महादेव के नाम से चाहे जिन के नाम से उसको हमारा नमस्कार है ॥

और भी सुनिये—

मो मा रा म म मा दं दो,
ह या ग द ल नं भ षः।

एते यस्य न विद्यन्ते,
तं देवं प्रणमाम्यहम् ॥ १ ॥

मतलब कि जिस में मोह, माया, राग, मद, मल, मान, दंभ और दोष (द्वेष) नहीं हैं। उस देव को मै प्रणाम करता हूं।

भाई भद्रदत्त ! हमारा ब्रह्मा, विष्णु, महेश तो वही है, जो सर्व कर्म को क्षय करके फिर इस संसार की विटंबना में जन्म मरण रूप अवतार नहीं धारण करता। यदि जन्म मरण धारण करने वाला है, तो वह हमारा ब्रह्मा, विष्णु, महादेव नहीं। जिन कर्मों के प्रताप से हमारे तुम्हारे अन्दर जो दोष रहे हुए हैं वही अगर उस में भी हों तो वह सदोषी देव हमारे तुम्हारे आत्मा के कल्याण का कारण कैसे हो सकता है ?

भद्र—"महाराज ! यह तो ठीक है, परंतु जिस ब्रह्मा, विष्णु, महादेव के लिये मै पूछ रहा हूं उस के लिये आपका क्या मानना है वह कहिये ?

मुनि—तुम किस ब्रह्मा, विष्णु, महादेव के लिये पूछते हो ?

भद्र—जिस को लोक मानते हैं ॥

मुनि—लोक क्या मानते हैं ? और कैसा मानते हैं ?

भद्र—क्या आप नहीं जानते ?

मुनि—बेशक ! मै जानता हूं, पर तुम से कहलाना चाहता हूं कि लोक कैसा मानते हैं ?

भद्र—मै पीछे कहूंगा, पहले आप कृपा कीजिये. क्योंकि मैंने किसी जैन को महादेव, ब्रह्मा या विष्णु को मनाते पूजते नहीं देखा, नाही सुना। यदि मानते होते तो अवश्य ही कोई न कोई ग्रंथ में उनकी स्तुति या उनका नाम होता, मैंने तो किसी जैन को नही देखा कि जो "शिव शिव शिव" जाप करता हो ॥

मुनि—भाई भद्रदत्त ' तुम यह कहो कि मै कौन हूं '

भद्र—आप जैनमुनि (साधु) है ॥

मुनि—तो मै तुम्हारे सामने ही बैठा शिव शिव शिव शिव शिव का नाम स्मरण कर रहा हूं. फिर तुम कहते क्यों हो कि मैने किसी को नही देखा, अरे भाई ! सुनो ! हमारे पूर्वज जैनाचार्य श्री

कुमारपाल राजा के प्रतिबोध करने वाले साढ़े तीन क्रोड़ श्लोक के रचयिता कलिकाल सर्वज्ञ विरुदधारी हेमचंद्र सूरि महाराज ने तो खास " महादेव स्तोत्र " इस नाम का ग्रंथ ही बनाया है। इतना ही मुनि जी कह पाये थे कि भद्र बीच में ही हाथ जोड़ अधैर्यता के साथ बोल पड़ा "महाराज! बस बस! कृपाकरके अब मैं कुछ नहीं सुनना चाहता मुझे तो यह जो आपने अभी महादेव स्तोत्र नामी ग्रंथ का नाम लिया वह अगर आप के पास हो तो दिखला दीजिये " मुनि जी ने 'भद्र' की उत्सुकता देख कर "महादेव स्तोत्र" निकाल कर 'भद्रदत्त' के सामने रख दिया 'भद्रदत्त" ने उसे हाथ में लेकर उस का पहिला श्लोक उच्चारण कर--

"प्रशांतं दर्शनं यस्य
सर्व भूताभयप्रदम्।
मांगल्यंच प्रशस्तंच
शिवस्तेन विभाव्यते ॥१॥

मुनि जी से कहने लगा कि "विभो ! कृपाकर इस महादेव स्तोत्र का अर्थ मुझे सुनने की इच्छा है, अगर आपको अवकाश हो तो सुनाइये" मुनि जी ने कहा कि "भाई ! तुम्हारी सुनने की इच्छा हो तो सुनो हमारा तो यही कार्य है"

भद्र—आप भिक्षा भोजन के लिये किस समय जाते हैं?

मुनि—"हमारे भिक्षा की चिन्ता नहीं और आज तो चतुर्दशी होने से निश्चित है अर्थात व्रत.(उपवास)है

भद्र—तो कृपा कीजिये ॥

मुनि—भाई भद्रदत्त ! जिस देव का अथवा जिस देव की प्रतिमा का दर्शन प्रशांत है, जिस का दर्शन अभय को देने वाला है, जिसका दर्शन मंगल को करने वाला है और जिसका दर्शन आत्मा को शांति देने वाला है, उसे शिव कहते हैं ॥

महत्वादीश्वरत्वाच्च, यो महेश्वरतां गतः ।
रागद्वेषविनिर्मुक्तं, वंदेहं तं महेश्वरम् ॥२॥

"शुद्ध आत्म स्वरूप शुद्ध निर्मल क्षायिक केवल-ज्ञानादि गुणों मे महान् बड़ा होनेसे तथा सर्व देवताओं का पूज्य आत्मा के ऐश्वर्य की प्राप्ति द्वारा ईश्वर होने से जो महेश्वर पने को प्राप्त हुआ है, उन राग द्वेष से रहित महेश्वर को मै नमस्कार करता हू ॥"

महाज्ञानं भवेद्यस्य,
लोकालोकप्रकाशकम् ।
महादया दमो ध्यानं,
महादेव: स उच्यते ॥ ३ ॥

महांतस्तस्करा ये तु,
तिष्ठन्तः स्वशरीरके ।
निर्जिता येन देवेन,
महादेवः स उच्यते ॥ ४ ॥

रागद्वेषौ महामल्लौ,
दुर्जयौ येन निर्जितौ ।
महादेवं तु तं मन्ये,

शेषा वै नामधारकाः ॥ ५ ॥
शब्द मात्रो महादेवो,
लौकिकानां मते मतः ।
शब्दतो गुणतश्चैवार्थ
तोपि जिनशासने ॥ ६ ॥

जिस ने महादया, महादम और महाध्यान द्वारा लोकालोक को प्रकाश करने वाला महाज्ञान केवलज्ञान प्राप्त किया है, उसे महादेव कहते है ॥

"महादेव उसे कहते है जिसने अपने शरीर मे रहे अष्टादश[1] दूषण रूप महातस्करों को जीत लिया हो

मै सच्चा महादेव उसे ही मानता हू, जिसने दुर्जय ऐसे राग द्वेष रूप महा मल्ल का पराजय किया है । बाकी रागी द्वेषी को जो महादेव कहना है, केवल नाम मात्र ही महादेव है, मंगल भद्रादि नामवत् जेसे मंगल

(१) 'योवार्जित पञ्चभिरन्तुरायैर्हास्येनरत्यारति भीति शोकैः मिथ्यात्व कामाविरति प्रमीला द्वेषैर्जुगुप्सा जडताति रागैः ॥

[इन्द्रवज्रा]

यह एक वार का नाम है। परन्तु उसका स्वरूप मंगल नहीं, इसी प्रकार ज्योतिःशास्त्र में भद्रा एक करण का नाम है, परंतु उस से भद्र नहीं होता ॥

इस से सिद्ध है कि लोकों ने तो केवल "महादेव" शब्द मात्र से ही माना है बाकी गुण से और अर्थ से युक्त ऐसा महादेव शब्द का खरा वाच्य पदार्थ जैन-शासन में ही माना है॥

शक्तितो व्यक्तितश्चैव,
विज्ञानं लक्षणं तथा ।
मोहजालं हतं येन,
महादेवः स उच्यते ॥ ७ ॥
नमोऽस्तु ते महादेव,
महामदविवर्जित ।
महालोभविनिर्मुक्त,
महागुणसमन्वित ॥ ८ ॥
महारागो महाद्वेषो,

महा मोहस्तथैव च ।
कषायश्च हतो येन,
महादेवः स उच्यते ॥ ९ ॥
महा कामो हतो येन,
महाभयविवर्जितः ।
महाव्रतोपदेशी च,
महादेवः स उच्यते ॥ १० ॥
महाक्रोधो महामानो,
महामाया महामदः ।
महालोभो हतो येन,
महादेवः स उच्यते ॥ ११ ॥
महानन्दो दया यस्य,
महाज्ञानी महातपः ।
महायोगी महामौनी,
महादेवः स उच्यते ॥ १२ ॥

महावीर्यं महाधैर्यं,
महाशीलं महागुणाः ।
महामञ्जु क्षमा यस्य,
महादेवः स उच्यते ॥ १३ ॥
स्वयं भूतं यतो ज्ञानं,
लोकालोकप्रकाशकम् ।
अनन्तवीर्यचारित्रं,
स्वयंभूः सो विधीयते ॥ १४ ॥
शिवो यस्मात् जिनः प्रोक्तः,
शंकरश्च प्रकीर्त्तितः ।
कायोत्सर्गी च पर्यंकी,
स्त्रीशस्त्रादिविवर्जितः ॥१५॥

जिसने मोह कर्म की अट्ठाईस (२८) प्रकृति रूप

---

(१) आठों कर्म का विस्तार से स्वरूप देखने की इच्छा हो तो देखो 'कर्मग्रंथ" जो टीका सहित छप चुका है, तथा "कर्म प्रकृति" यह भी छप गया है ।

मोहजाल को नष्ट करके क्षायक ज्ञान लब्धि रूप शक्ति मे सादि अनन्त और ज्ञानोपयोगरूप व्यक्ति मे सादि सान (द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा अनादि अनन्त) ऐसा विज्ञान लक्षण प्राप्त किया है उसे महादेव कहते है। महामद करके रहित महालोभ करके रहित और महागुण करके सहित ऐसे हे महादेव! आप को नमस्कार हो।

जिसने महा राग, महाद्वेष, महामोह तथा कषायों का नाश किया है अर्थात् जो राग, द्वेष, मोह तथा कषाय रहित है, उसे महादेव कहते है।

जिसने महा काम का नाश किया है अर्थात् जो काम से सर्वथा रहित है जो महाभय करके रहित है तथा जो अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह रूप पांच महाव्रतों का उपदेशक है, उसे महादेव कहते है।

महा क्रोध, महा मान, महा माया, महा मद और महा लोभ जिसने नष्ट किया है अर्थात् जो क्रोध, मान माया, लोभ रहित है "उसे महादेव कहते हैं?

जो महा आनन्द स्वरूप, परम दयालु, परमज्ञानी, महा तपस्वी, महायोगी और महा मौनी अर्थात् सावद्य सपाप वचन से रहित है सो महादेव है॥

जो वीर्यांतराय कर्म के क्षय होने से महावीर्य अनन्त शक्ति वाला होवे, जो छद्मस्थ अवस्था में परीसह[1] उपसर्गों के सहन करने में महाधैर्य वाला होवे कदापि ध्यान से चलायमान न होवे, जो अष्टादश सहस्र शीलांग के पालने से महाशीलवान् होवे जो केवल ज्ञान केवलदर्शन आदि अनन्त महा गुण वाला होवे और जो महा कोमल,सुन्दर, मनोहर क्षमावान होवे, उसे महादेव कहते हैं ॥

ज्ञानावरणीय कर्म के क्षय होने से स्वयमेव ही आत्मस्वरूप से ही आविर्भूत प्रगट हुआ है लोकालोक प्रकाशक केवलज्ञान जिस को, वीर्यतराय कर्म के क्षय होने से प्रगट हुआ है अनन्त वीर्य जिस को, और चारित्र मोह के क्षय होने से प्रगट हुआ है अनन्त क्षायक चारित्र जिस को ऐसे भगवान् को स्वयंभू कहते हैं ॥

राग द्वेषादि अन्तरंग शत्रु के जीतने से 'जिन' ही शिव निरुपद्रव स्वयं उपद्रव रहित और जगत् को

---

(१) देखो "उत्तराध्ययन सूत्र"

(२) देखो "प्रवचन सारोद्धार" तथा "आवश्यक सूत्र"

निरुपद्रव का हेतु है तथा जगत के जीवों को शिव अर्थात् मोक्ष मार्ग का उपदेश देने से जिन भगवान ही शिव हैं और उसी जिन भगवान को उपदेश द्वारा तीन जगत् के जीवों को "शं सुख करोतीति शंकरः" सुख करने से शंकर कहते हैं, ऐसे जिन शिव-शंकर भगवान् स्त्री शस्त्रादि से वर्जित कायोत्सर्ग या पर्यंक दो आसन में विराजते हैं जो कि उन की मूर्ति देखने से स्पष्ट मालूम होता है ॥

मुनि आगे कहना चाहते थे कि 'भद्रदत्त' ने बीच में प्रश्न किया कि "महाराज! यह आपने जो गुण कहे वे लोक में माने हुए महादेव में क्या नहीं है ?"

मुनि—यह निर्णय तुम कर देखो, यदि वह पूर्वोक्त गुणों वाला हो तो उस को हमारा वारंवार नमस्कार है।

भद्र—इस बात का निर्णय करने का क्या उपाय ?

मुनि—भाई ! उपाय ! उपाय तो हमारे तुम्हारे जैसे जीवों के लिये परोपकारी महात्मा महर्षि ऐसी युक्ति बता गये है कि जिस द्वारा हम तुम झट निर्णय कर सकते हैं।

भद्र—वह क्या ? कहिये ?

मुनि—भाई भद्र ! सुनो—

प्रत्यक्षतो न भगवानृषभो न विष्णु
रालोक्यते न च हरो न हिरण्यगर्भः ॥
तेषां स्वरूपगुणमागमसंप्रभावात्,
ज्ञात्वा विचारयथ कोत्र परापवादः ॥

(हरिभद्र सूरिः)

देखिये ! कि अगर हम से तुममे कोई इस विषय में प्रत्यक्ष प्रमाण मांगना चाहे तो न प्रत्यक्ष में भगवान् ऋषभदेव दिखलाई देता है और नहीं विष्णु भगवान् न हर महादेव और ना ही हिरण्यगर्भ—ब्रह्मा, तो फिर इनका स्वरूप कैसे जाना जा सकता है ? समाधान यही है कि जैसा जैसा जिनका स्वरूप आगम सूत्र शास्त्र अर्थात् आगम वेद स्मृति पुराणादिकों में वर्णन किया है, उस स्वरूप द्वारा उनके जीवनचरित्र द्वारा हमें तुम्हें उसके गुणों का निर्णय झट होसकता है । हमारे तुम्हारे लिये तो उनके चरित्र और उनकी मूर्ति के सिवाय तीसरा निर्णय होने का उपाय मालूम नहीं देता

भद्र—महाराज ! आप के यहां परमात्मा को मूर्त्त माना है या अमूर्त्त ?

मुनि—भाइ ! परमात्मा—

साकारोऽपि ह्यनाकारो मूर्त्तामूर्त्तस्तथैवच ।
परमात्मा च बाह्यात्मा अंतरात्मा तथैवच ।१६।
दर्शनज्ञानयोगेन परमात्मायमव्ययः ।
परा क्षान्तिरहिंसा च परमात्मा स उच्यते ।१७
परमात्मा सिद्धिसंप्राप्तौ बाह्यात्मा तु भवान्तरे ।
अन्तरात्मा भवेद्देह इत्येषस्त्रिविधः शिवः।१८
सकलो दोषसंपूर्णो निष्कलो दोषवर्जितः ।
पंचदेहविनिर्मुक्तः संप्राप्तः परमं पदम् ।१९।।

परमात्मा (ईश्वर) साकार भी है और अनाकार भी है, जीवनमुक्त अवस्था में अर्थात् तेरहवें तथा चौदहवें गुणस्थान में जब तक देहसंयुक्त है तब तक साकार ईश्वर माना जाता है और देह से रहित हो विदेह मोक्ष सिद्धपद को प्राप्त होता है तब वह निराकार ईश्वर कहा जाता है, साकार अवस्था

में ईश्वर को मूर्त और निराकार अवस्था में अमूर्त मानते हैं, तथा इसी शिव ईश्वर की परमात्मा, बाह्यात्मा और अन्तरात्मा यह तीन अवस्था मानते है। ज्ञान दर्शन स्वरूप करके यह परमात्मा अव्यय अविनाशी है तथा परम शान्ति और परम अहिंसा (दया) युक्त होने से परमात्मा कहा जाता है।

सिद्धि–मुक्ति-मोक्षपद को प्राप्त होवे तब अर्थात तेरहवें चौदहवें गुण स्थान से लगा कर सिद्धपद प्राप्ति तक परमात्मा कहाजाता है, चौथा गुणस्थान प्राप्त नहीं होता, तब तक यह आत्मा संसार में बाह्यात्मा कहा जाता है और चतुर्थ गुणस्थान से लेकर बारहवें गुणस्थान की प्राप्ति पर्यन्त यह जीव देह शरीर में अन्तरात्मा कहा जाता है इस प्रकार शिव के तीन भेद कहे जाते है इसीवास्ते शास्त्रकारों ने कहा है कि–

शिवो जीवःजीवः शिवःनान्तरं शिवजीवयोः
कर्मयुक्तोभवेज्जीवः कर्ममुक्तोभवेच्छिवः ॥

जब तक यह जीव दोष से भरा हुआ जगत में परिभ्रमण करता है तब तक चार घाति कर्म की

४७ प्रकृति रूप कलायुक्त होने से "सकल" कहाता है और जब दोष रहित वीतराग होता है तब पूर्वोक्त ४७ प्रकृति रूप कला का अभाव होने से "निष्कल" कहाता है तथा औदारिकादि पांच शरीर से रहित अर्थात् अशरीरी-विदेह होता है तब परमपद मोक्ष को प्राप्त होता है।

एक मूर्त्तिस्त्रयो भागा ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
तान्येव पुनरुक्तानि ज्ञानचारित्रदर्शनात् ॥

एक मूर्त्ति द्रव्यार्थिक नयके मत मे परन्तु एक ही मूर्त्ति पर्यायार्थिक नयके मत से तीन भाग ब्रह्मा विश्नु महेश्वर रूप कहे है वे इस तरह से कि ज्ञान स्वरूप को विश्नु, चारित्र रूप को ब्रह्मा और सम्यग् दर्शन स्वरूप को महेश्वर कहते है ।

पर्यायार्थिक नयके मत से ये तीनों गुण अविरोधीपणे एक द्रव्य में रहते है, जैसे अग्नि में उष्णता पीतता रक्तता रहती है तैसे एक आत्मा द्रव्य में तीन गुण एक मूर्त्ति में रहते हैं इसलिये तीनों की एक मूर्त्ति है

परन्तु हे भाई ! तुम्हारे मत में ब्रह्मा विश्नु महेश्वर की एक मूर्त्ति मानने के लिये तुम चाहो तो नहीं हो सकती क्योंकि—

एकमूर्त्तित्रयो भागा ब्रह्माविश्नुमहेश्वराः ।
परस्परं विभिन्नानामेक मूर्त्तिः कथं भवेत् ॥
कार्यं विश्नुः क्रिया ब्रह्मा कारणं तु महेश्वरः ।
कार्यकारणसंपन्ना एक मूर्त्तिः कथं भवेत् ॥
प्रजापति सुतो ब्रह्मा माता पद्मावती स्मृता ।
अभिजिज्जन्म नक्षत्र मेकमूर्त्तिः कथं भवेत् ॥
वसुदेव सुतो विष्णुर्माता च देवकी स्मृता ।
रोहिणी जन्म नक्षत्र मेकमूर्त्तिः कथं भवेत् ॥
पेढालस्य सुतो रुद्रो माता च सत्यकी स्मृता ।
मूलंच जन्मनक्षत्र मेकमूर्त्तिः कथं भवेत् ॥
रक्तवर्णो भवेत् ब्रह्मा श्वेतवर्णो महेश्वरः ।
कृष्णवर्णो भवेद्विष्णु रेकमूर्त्तिः कथं भवेत् ॥
अक्षसूत्री भवेदब्रह्माद्वितीयः शूलधारकः ।

तृतीयः शंखचक्रांक एकमूर्त्तिः कथं भवेत् ॥
चतुर्मुखो भवेद ब्रह्मा त्रिनेत्रोऽयं महेश्वरः ।
चतुर्भुजो भवेद विष्णु रेकमूर्त्तिः कथं भवेत् ॥
मथुरायां जातो ब्रह्मा राजगृहे महेश्वरः ।
द्वारावत्या मभूद्विष्णु रेकमूर्त्तिः कथं भवेत् ॥
हंसयानो भवेद्ब्रह्मा वृषयानो महेश्वरः ॥
गरुडयानो भवेद्विष्णु रेकमूर्त्तिः कथं भवेत् ॥
पद्महस्तो भवेद ब्रह्मा शूलपाणि महेश्वरः ।
चक्रपाणि भवेद विष्णु रेकमूर्त्ति.कथं भवेत ॥
कृते जातो भवेद्ब्रह्मा त्रेतायां च महेश्वरः॥
द्वापरे जनितो विश्नु रेकमुर्तिः कथं भवेत् ।

मुनि इतने श्लोक उच्चारण करके इनका विवेचन करने ही लगे थे कि "भद्रदत्त ने कहा कि महाराज ! इनका अर्थ तो मैं भली प्रकार समझ गया । परन्तु यह तो आप को भी भारी हो पड़ेगा, क्योंकि आप कह चुके है कि हम ब्रह्मा, विष्णु, महादेव को एक मूर्ति

भी मानते हैं और अनेक रूप (भिन्न भिन्न) भी मानते हैं तब आप ही कहिये कि यह तीनों देव एक कैसे ?

मुनि ने कहा कि "भद्र ! मुशकिल तो तुमको मालूम देता है कि जो एकांत भिन्न २ नाम, गुण वाला मान कर तीनों को एक कहना, यह जैन-शासन तो स्याद्वाद-अनेकांतवाद कथंचित नित्या-नित्य मानने वाला, सर्वनयों का मार्ग दिखलाने वाला है, सो तीनों देव एक, तीनों देवों की मूर्त्ति भी एक, फिर और क्या कहते हो ?"

ज्ञानं विष्णुस्सदा प्रोक्तं चारित्रं ब्रह्म उच्यते ।
सम्यक्त्वंतु शिवंप्रोक्त मर्हन्मूर्त्तिस्त्रयात्मिका॥

ज्ञान को सदा विष्णु कहते है चारित्र को ब्रह्मा और सम्यक्त को शिव कहते है, इसलिये "अर्हन्" जो है वह त्रयात्मक मूर्त्ति रूप है अर्थात ज्ञान, दर्शन, चारित्र इन तीनों गुण वाली अर्हन् की आत्मा है क्योंकि ये तीनों गुण आत्मा द्रव्य से कथं-चित भेदाभेद रूप है जो द्रव्यार्थिक नयके मत से विचार करें तब तो एक द्रव्य होने से एक ही मूर्त्ति

हैं और जो पर्यायार्थिक नयके मत मे विचारें तो ज्ञान दर्शन चारित्र रूप तीनो गुणों के भिन्न २ होने से तीन रूप सिद्ध होते हैं इस हमारे सर्वज्ञप्रणीत स्याद्वाद मत में कथंचित द्रव्य पर्याय के भेदाभेद होने से एक मूर्त्ति त्रयात्मक है इसलिये हे भद्र ! अर्हन् ही ब्रह्मा विश्नु महादेव के रूप के धारक है ।

हे भद्र ! भगवान वीतराग में ८ गुण होते हैं यतः—

क्षितिजलपवनहुताशन,
यजमानाकाशसोमसूर्याख्याः ।
इत्येतेष्टौ भगवति,
वीतरागे गुणा मताः ॥

क्षितिरित्युच्यते क्षान्ति जलं या च प्रसन्नता ।
निःसंगता भवेद्वायु र्हुताशो योग उच्यते॥३५
यजमानो भवेदात्मा तपोदानदयादिभि ।
अलेपकत्वादाकाशः संकाशः सोभिधीयते ३६
सौम्यमूर्तिरुचिश्चंद्रो वीतरागः समीक्ष्यते ।
ज्ञानप्रकाशकत्वेन आदित्यः सोऽभिधीयते३७

पुण्यपापविनिर्मुक्तो रागद्वेषविवर्जितः ।
श्रीअर्हद्भ्यो नमस्कारः कर्तव्यः शिवमिच्छता
अकारेण भवेदविष्णु रेफ ब्रह्मा व्यवस्थितः ।
हकारेण हरः प्रोक्त स्तस्यान्ते परमं पदम्॥३९॥
अकार आदिधर्मस्य आदिमोक्षप्रदेशकः ।
स्वरूपे परमज्ञान मकारस्तेन उच्यते ॥४०॥
रूपि द्रव्य स्वरूपं वा दृष्टवा ज्ञानेन चक्षुषा ।
दृष्टं लोकमलोकं वा रकारस्तेन उच्यते ॥४१॥
हता रागाश्च द्वेषाश्च हता मोह परीसहा ।
हतानि येन कर्माणि हकारस्तेन उच्यते ॥४२
संतोषेणाभिसंपूर्णः प्रातिहार्याष्टकेन च ।
ज्ञात्वा पुण्यंच पापंच नकारस्तेन उच्यते ४३

हे भद्र ! इस प्रकार से हमारे अर्हन् ईश्वर का स्वरूप है—

भवबीजांकुरजननारागाद्याःक्षयमुपागतायस्य
ब्रह्मा वा विश्नुर्वा हरो जिनो वा नमस्तस्मै ॥

संसार रूप बीज के चार गति रूप अंकुर को उत्पन्न करने वाले राग द्वेष आदि १८ दूषण जिस के क्षयभाव को प्राप्त हुए है अर्थात् नाश होगए हैं वह चाहे ब्रह्मा हो विष्णु हो हर महादेव हो वा जिन हो उस को हमारा नमस्कार हो ॥

भद्र—महाराज ! मै आज अपने आप को धन्य मानता हूं क्योंकि कल रात्रि में मुझे यह दोनों मित्र न मिले होते तो मैं नराधम उस मनुष्य को इष्ट देव के आगे मार कर अवश्य दुर्गति को प्राप्त होता परन्तु मेरे भाग्य से ये यहां आ पहुंचे. हे विभो ! मैने आज तक इस प्रकार देव का स्वरूप नहीं सुना था । आप जैसे निस्पृह, दयालु मुनि राजों का समागम हुआ उस में निमित्त यह "चद्र" और 'प्रकाश" मेरे परम उपकारी हैं, परन्तु इस देव गुरु धर्म के जानने की अतीव इच्छा हुई है इस लिये आप से ही मेरी जिज्ञासा पूर्ण होगी, ऐसा मुझे मेरा अन्तःकरण साक्षी दे रहा है, हे विभो ! आज मेरे लिये आपने अपने अमूल्य समय का व्यय किया उस के लिये मै कृतज्ञ

हूं। जैनमत नास्तिक है, ईश्वर भगवान् को नहीं मानते यह मेरे हृदय का भ्रम नष्ट हो गया। तौ भी मुझे अभी इस विषय में कुछ प्रष्टव्य है॥

प्रकाश—"मित्र भद्र! अब ऐसे शुद्ध न्याय पूर्वक मार्ग बतलाने वाले गुरु के योग मिलने पर अपनी हृदयगत शंकाओं को अवश्य निवारण कर लेना, लोकों की सुनी सुनाई बातों को मान बैठने में सत्यासत्य का निर्णय नहीं होता, जैसे आज तक तुम्हारे मन में जो सुनी हुई बात से 'जैन नास्तिक हैं' यह ठस रहा था वह तुम्हें मालूम हुआ, जैनों को नास्तिक कहना बड़ी भूल है इस विषय में यह लो देखो "जैनास्तिकत्व मिमांसा" की पुस्तक और अब आज तो चलो, कल फिर मुनिजी के पास आवेंगे। इतना कहकर तीनों जने मुनिजी को नमस्कार करके अपने २ घर गये। ओम् शांति ३॥

मूर्त्तिमंडन।

इस जगत् में एकांत एक २ तत्व को अंगीकार करने से अनेक मतमतांतर चल रहे हैं, परन्तु स्याद्वाद अनेकांतवाद कथंचित नित्यानित्य मानने वाला यदि कोई मत है तो केवल एक जैनधर्म ही है । कई मत मूर्त्तिमंडन के पक्षवाले हैं, कई मत इसके परम शत्रु हैं, वास्तव में तो ऐसा कोई भी मत नहीं, जो किसी न किसी प्रकार से मूर्त्ति को न मानता हो, मुख्यतया इसी बात को दिखलाने वास्ते श्रीमान् मुनि श्री लब्धिविजयजी महाराज ने **मूर्तिमंडन** नामक पुस्तक रची है, इस में राजा की सभा में मूर्तिपूजक मन्त्री के साथ ढूंढिया, मुसलमान, सिख, और आर्य्यसमाजी के जो प्रश्नोत्तर हुए हैं, वह सर्व सरल हिन्दी भाषा में प्रतिपादन किये है ग्रन्थकर्त्ता की सुन्दर मूर्त्ति बीच में है, मनोहर कागज की जिल्द है । मूल्य केवल ।)

❀ दयानन्दकुतर्कतिमिरतरणि ❀

स्वामी दयानन्दजीने सत्यार्थप्रकाश के १२वें समुल्लास में जो जैनधर्मोपरि उपहास्यजनक, असत्य और असमंजस कुतर्के की हैं, श्रीयुतमुनिलब्धिविजय जी महाराज ने उनका सविस्तर खंडन तयार किया और पूर्वोक्त नाम की पुस्तकाकार में छापकर हमने प्रसिद्ध किया है, कर्त्ता के गुरु जैनाचार्य श्रीमद्विजयकमलसूरि जी की मनोहर मूर्त्ति भी इन में लगाई गई है, बढ़िया बलायती कागज़ और उत्तम छपवाई और सुन्दर पुस्तक होने पर भी सर्वसाधारण के लाभार्थ मूल्य केवल छःआना रक्खा है।

मिलने का पता:—

जसवन्तराय जैनी,

जनरल बुकडिपो, लाहौर रोड,

लाहौर।

नोट—जो महाशय दयानन्द कुतर्कतिमिरतरणि और मूर्त्तिमंडन दोनों मंगवावेंगे, उन से दोनों का मूल्य केवल आठ आना ही लिया जावेगा॥

कल्पसूत्र हिन्दी भाषा में

जैन बच्चा२ इस की महिमा को बंगाक जानता है । आजतक गुजराती भाषामें होनेसे बंगाल पंजाब, मार-वाड़, मेवाड़, सी०पी०, यू०पी० आदि देशों के जैन इस से पूर्ण लाभ नहीं उठा सके, अतः लोगों की प्रेरणा होने से हमारा विचार हुआ है कि ५०० पुस्तकों की खरीददारी की दरख्वास्ते आने पर हम इस को सरल हिन्दी भाषा में चित्रों सहित छपाना प्रारम्भ करेंगे । मूल्य रुपया तीन चार के लगभग होगा,

दरख्वास्तें नीचे पते पर आनी चाहियें ॥

जसवन्तराय जैनी

लाहोर

‘दिगंबर जैन’ का [illegible]

दिगंबरजैनग्रंथमाला नं. १८

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

बालशिक्षा।

लेखक—

बाबू बुधमल पाटनी-इन्दौर।

प्रकाशक—

मूलचंद किसनदास कापड़िया-सूरत।

प्रथमावृत्ति। वीर सं. २४४१ प्रतियां २१००

चित्रोडा (महीकांठा) निवासी स्वा. मूलचंद मोतीचंदके स्मरणार्थ “दिगंबर जैन” के ग्राहकोंको आठवां वर्षमे तीसरी भेट।

मूल्य रु. ०-१-६

प्रस्तावना ।

हरएक मातापिताकी फर्ज है कि अपने बालकों चाहे पुत्र हो चाहे पुत्री हो सभीको शिक्षा अवश्य देनी चाहिए । परंतु आजकल देखा जाता है कि बहुतसे मातापिता यह नहीं जानते हैं कि अपने बालकोंको क्यों और कैसी शिक्षा देनी चाहिए। इसहीसे जैनसमाजकी दशा बिगड़ रही है और बालकोंको यथेष्ट शिक्षा नहीं मिलती इसलिये एक ऐसा निबंध प्रकट होनेकी आवश्यकता थी जिसमें बालकोंको किस प्रकारसे कैसी कैसी शिक्षा देनी चाहिए, यह बताया गया हो । हमको हर्षके साथ लिखना पड़ता है कि ऐसे ही विषयका एक 'बालशिक्षा' नामक निबंध बाबू बुधमलजी पाटनी (इन्दौर) ने लिखकर भेजा था, जिसको अतीव उपयोगी जानकर हम यह पुस्तकरूपमें प्रकट करते हैं और इस पुस्तकका प्रचार बिनामूल्य बाहुल्यतासे हो-सके इसलिये चिरोडानिवासी शा. मूलचंद मोतीचंदके स्मरणार्थ 'दिगंबर जैन' के ग्राहकोंको आठवां वर्षकी तीसरी भेटरूप प्रकट करते हैं। हमें पूर्ण उम्मेद है कि ऐसी पुस्तकसे हरएक मातापिताको अपने बालकोंको शिक्षा देनेके लिये बहुत सुभीता हो सकेगी ।

जैनजातिका सेवक—

वीर स. २४४१
ज्येष्ठ वदी ९
ता. ६—७—१५

मूलचंद किसनदास कापड़िया—सूरत.

बालशिक्षा।

जैन समाज शिक्षाके विषयमें बहुत पछिड़ा हुआ है। उसमें इस बातकी परम आवश्यकता है कि जहातहा स्थायी पाठशालाएं खोली जायं और धार्मिक तथा लौकिक शिक्षाका सुयोग्य प्रबंध किया जाय। क्या बालक क्या बालिकाएं सभीको शिक्षाकी अनिवार्य आवश्यकता है। जबसे अविचारित रम्य विचारों, शकाओं तथा रूढियोंसे जैनसमाज दलमला जा रहा है तभीसे लड़कियोंकी शिक्षाका मार्ग तो लोप होने लगा मानो उन्नतिका एक असाधारण साधन—शिक्षाका फाटक ही बन्द कर दिया गया। वहींसे जैन समाजकी अवनतिका प्रारंभ हुआ। कारण जब अल्प अवस्थामें ही अज्ञान अशिक्षित बालिकाएं विवाहित होकर गृहिणी बन जाती है और सन्तानकी माताएं कहलाने लगती है तब इन्हें इस बातका ज्ञान ही नहीं होता कि हमारा गार्हस्थ धर्मका क्या कर्तव्य है। धार्मिक साधनमें क्या महत्त्व है। किस प्रकार गृहमें सब वस्तुओंकी व्यवस्था होनी चाहिये।

सन्तानकी आरोग्यता किस प्रकार सुरक्षित बनायी रखनी चाहिये। किस युक्तिसे सन्तानके सुकोमल हृदयमें शिक्षाका बीजारोपण होना चाहिये। कैसे उनमें शारीरिक और नैतिक बल बढ़ाना चाहिये। इन सब आवश्यकताओंकी पूर्ति **सुशिक्षित, सदाचारिणी माताके** द्वारा ही हो सकती है।

ये एक सर्वमान्य बात है कि **विदुषी माताकी सन्तान प्रायः विद्वान** होती है। इतिहास इस बातका साक्षी है। सन्तानके लिये उसकी माता ही सर्व श्रेष्ठ अध्यापिका है। हर्षकी बात है कि जैनसमाजमें अब धीरे धीरे **पाठशालाएं, कन्याशालाएं, श्राविकाश्रम, महाविद्यालय, हाईस्कूल, ब्रह्मचर्याश्रम** आदि खुलने लगगये है। ये हमारा अभी **प्रारंभ** ही है। ये बड़े आनन्दकी बात है कि अब जैनी भाई अपनी पुत्रियोंको भी पढ़ाने लगगये है। हमारे श्रीमान धीमान और सर्वसाधारण अब विद्याके उपासक बनने लगे है। **जैन मंदिरों**के अतिरिक्त ज्ञानमंदिरोंकी भी अब स्थापना और प्रतिष्ठा होने लगी है। ये सब शुभ चिन्ह है। ये सब कुछ होनेपरभी हमारी संस्थाओंमें जबतक आदर्श चारित्रवान और शिक्षणशैलीके ज्ञाता अध्यापक नियत न होवेंगे तबतक हमारा उद्देश्य सिद्ध नहीं हो सकता। अतएव इस बातकी प्रथम ही आवश्यकता है कि शालाओंमें अच्छे अनुभवी अध्यापक रक्खे जावें जो कि प्रेमद्वारा शिष्योंपर अपना शासन

जमावें और उनके सुसंस्कारित अन्त.करणमें शिक्षा सुधातरंगिनी बहावें। जैन समाचारपत्रोंमें शिक्षा सम्बन्धी लेखमालाए निकलती रहें जिससे कि हमारी पाठशालाए अपने कर्तव्यको समझें। जैन विद्वानोंसे भी निवेदन है कि शिक्षा विषयक लेख प्रकाशित किया करें, पाठशालाओंका निरीक्षण किया करें, उनकी त्रुटिए दर्शाया करें और यथोचित पठनक्रम तयार कर उसके अनुसार शिक्षण दिये जानेकी प्रेरणा करते रहें। एक भारतवर्षीय जैन शिक्षा समिति भी स्थापन करें कि जिसके द्वारा पठनक्रम, शाला निरीक्षण, शिक्षणपुस्तक सगठन इत्यादि किया जाय। मै इस स्थलपर बालशिक्षाके विषयमें अपने कुछ विचार प्रगट करता हू। पाठकगण, हसवृत्तिसे सार अश ग्रहण करें, यदि कोई विचार उचित न समझे तो उसपर लक्ष्य न देवें और मुझे क्षमा करे।

शिक्षा एक बहुव्यापी शब्द है। लिखने पढनेको ही शिक्षा नहीं कहते। शिक्षा वही सराहनीय है जिससे चारित्र सुधरे। व्यवहारिक कुशलता, शिल्प वाणिज्य दक्षता, कलाकौशल्य, निपुणता, नीति और धार्मिक भावोंकी उत्तेजना ये सब शिक्षाके ही अग है। रत्न जब शाणपर चढाया जाता है तथा सुवर्ण जब सोलहवार तपाया जाता है तब उसकी चमकदमक निकलती है और उसका पूरा मूल्य मिलता है उसी प्रकार जब सन्तान सस्कारसहित शिक्षित

की जाती है तभी वह अपने मनुष्यत्वको प्राप्त करती है और तभी वह ऐहिक और पारलौकिक उन्नति कर सकती है।

वास्तवमें बालशिक्षाका समय तबसे प्रारंभ होता है जबसे कि बालक गर्भमें आता है। गर्भिणीके विचारोंका प्रतिबिम्ब गर्भस्थ बालकपर अवश्य पड़ता है। यदि वह चारित्र और धर्मको सभालती हुई ऐसे विचार करे कि मेरी सन्तान सुचारित्रवान और धर्मात्मा होवे तो इसमें सन्देह नहीं कि सन्तान वैसी ही होवेगी। जब गर्भिणीका रहनसहन ठीक न होगा, चारित्रकी सुधारणा पर उसका लक्ष्य न होगा तथा जब उसके अधम विचार होंगे तब यह सभव है कि उसकी सन्तान दुर्गुणी पतित चारित्रवाली निकले। आजकल जो सन्तान प्राय विनयहीन हठग्राही विषयलोलुपी आलसी और पुरुषार्थ हीन हुआ करती है ये दुर्गुण भी प्रायः मातापिताओंके कुसंस्कारजन्य समझने चाहिये। मातापिताके बाह्य चारित्रका असर सन्तान पर पडना ही है अतएव यदि वे अपने चारित्र-को सुधारें तो सन्तान कभी उन्मार्गमें न चले। हम प्रत्यक्ष देखते है कि यदि पिता गंजेडी भंगेडी हो, बीड़ी चुरुट हुक्का पीता हो, भगकी तरगमें उछलता हो और व्यभिचारी हो तो उसके पुत्रोंमें भी ये खोटी आदतें (व्यसन) दावाग्निके समान फैल जाती है। इसी प्रकार कल्पना कीजिये कि बालक मचल रहा है, हठपूर्वक चिल्ला रहा है उसे आप राजी करना चाहते

है, चुप करना चाहते हैं। इस दशामें यदि आप शान्ततासे किसी हिकमतसे उसे न समझावेंगे और यदि स्वयं अग्नि शर्माजी बनकर लाल आंखें निकालकर गाली देते हुए उसे डरावेंगे, लकडियोंसे पीटने लग जावेंगे तो संभव है कि बड़ी देरमें रोता हुआ सिसकते सिसकते वह चुप हो जाय परतु ऐसी राक्षसीय कठोर ताड़नासे आप बड़ा भारी अनर्थ कर रहे है कारण प्रथम तो तीव्र क्रोधमें तप्ताय होनेसे तुम्हें तीव्र बंध होता है। उधर बिचारे बालककी हड्डी पसली टूट जाने और चोट आनेका संभव है। सबसे अधिक तो इसमें ये नुकसान है कि जैसा तुम्हारा क्रोधी स्वभाव है वैसा ही स्वभाव उसका पड़ जावेगा। प्रथम तो वह धमकी दिखानेसे ही सुधर जाता, परंतु अब उसका वह इलाज नहीं रहेगा कारण जिन बालकोंकी आदत मार खानेकी पड़ जाती है वे मारपीटसे नहीं डरते। ऐसी आदत हमें भूलके भी नहीं पाड़ना चाहिये। भला, जब माता पिता या गुरु ही क्रोधके आवेषमें आजाते है तब क्या संभव है कि उनकी सन्तान या शिष्यगण शान्त परिणामी बनें? हमीं तो उन्हें क्रोधकरके क्रोध करनेकी शिक्षा दे रहे है। कदाचित आप कहें कि क्या किया जाय? हमारा लडका बड़ा ऊधमी है। वह किसीको गाली देता है, किसीको मारता है, घरकी चीजें उलट पुलट अव्यवस्थित कर डालता है और कभी कहना नहीं मानता। ठीक है। आपकी शिकायतोंके बारेमें मैं कुछ निवेदन करता हूं। सुनियेः—

मै स्पष्ट कहूगा कि आप अपनी सन्तानपर शासन करना ही नही जानते। आपने सरकसमे देखा होगा कि चतुर मनुष्य अपने बुद्धिबलसे घोडे, हाथी, कुत्ते, रीछ, तोते, कबूतर, बदर, चीते, व्याघ्र, शृगाल, सिंह आदि पशुओंको अपना आज्ञाकारी बना लेता है और उनसे तरहतरहके कठिन काम लेने लगता है, तब क्या हम इतने मन्दबुद्धि हो गये कि अपनी सन्तानको भी नहीं सुधार सकते? शिक्षा वो चीज है कि जिसके द्वारा पशु भी आश्चर्यकारी कार्य कर दिखा रहे है। हमने अखबारोंमे बाचा है कि घोडे लिख सकते और जोड, गुणा, भाग कर सकते है। कबूतर सैकडों कोसतक खबर ले जाता है तथा फोटो खैंच सकता है। बन्दर, ढोर चराने जाया करता है इत्यादि। सरकसमे हमने प्रत्यक्ष देखा है कि हाथी रीछ तथा बन्दर साइकल चलाते है, शेर और बकरी एक घाट पानी पीते है। व्याघ्र और सिंह पर चाबुक लगाये जाते है तथा शिक्षा देनेवाला अपना हाथ उनपर फेरता रहता है तो भी हिंसक पशु उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं करते। भावार्थ—जब शिक्षाद्वारा पशु भी सुधर सकते है तो क्या मनुष्य अपनी सन्तानका भी सुधार नहीं कर सकता? अपि तु सहजमें ही कर सकता है। कमी इस बातकी है कि हम सुधारना जानते ही नही। अस्तु।

प्रथम जो ऊधमी होनेकी शिकायत की गई है उसके उत्तरमें निवेदन है कि ऊधम करना चंचलताका द्योतक है।

ये बालकोंका सद्गुण है, न कि दुर्गुण। यदि इसका सदुपयोग किया जाय तो बालक हट्टा कट्टा शरीरवाला और विचक्षण निकल सकता है। जो चचल होगा वही चलतापुरजा पूर्ण उद्योगी बनेगा। खेलना कूदना बालकोंका स्वभाव है। खेलने-से रोकना उचित नहीं। बस, **खेलनेके समय खेलें और पढ़नेके समय पढ़ें**, इसी पर हमारा ध्यान रहना चाहिये। दूसरी शिकायत, गाली देनेकी की गई है जिसके विषयमें मैं कह सकता हू कि आपने या आपके पड़ोसियोंने ही उसे गालीदेना सिखाया है। माताके पेटमे गालिये सीख कर तो वह पैदा ही नहीं हुआ। वो गालीका मतलबही क्या जाने? बिचारा बालक करे क्या? उसे जो सिखाया गया वही सीख गया। यदि तुम्हें गालिया सुननी पसंद नहीं तो ज्योंही बालक प्रथम ही गाली निकाले, उसे उसी समय रोक दो, धमका दो, लाड़ न करो। जो गालियें सिखाते हों उनसे भी कह दो कि ऐसे दुर्वचन न सिखावें कारण इससे आदत बिगड़ जाती है जिसका छुड़ाना फिर मुश्किल हो जाता है। मारने-की बुरी आदत के विषयमें मै ऊपर कह आया हू कि जब आप उसे मारते कूटते हो तो वह देखादेखी दूसरों-को मारना क्यों न सीखेगा! आपको उचित है कि उसपर अपने हाथ कभी न चलाओ और उसे ताड़ना किये जाओ कि वह दूसरेको न मारे। आपने जो चीजें जहा तहा फैला देनेकी शिकायत की है उसके विषयमें मै कहना चाहता हूं

कि आप जानते है बाल्यक्रीड़ा दुर्गुण नहीं है । बालकोंके लिये कुछ तो खिलौने होने चाहिये । वो अपने हाथ पाव चलावे या सुस्त बीमारके मुवाफिक हाथपर हाथ धरे बैठा रहे ? यदि उसने दवात उलटा दी है या कलम कागज बिगाड़ डाला है तो कृपा कर ठहरिये । आगबबूला न बन जाइये । ज़रा बिचारिये कसूर किसका है । वह तो है अज्ञानी । वो क्या जाने तुम्हारी दवात कागज कलम ? उसे सब खिलौने समान हैं । तोड़ना, मरोड़ना पानी तेल स्याही आदि जो मिला उंडेल देना, यही तो उसका विनोद है । भला, फिर उसे क्यों मारते हो ? उसके पास आपने वैसी चीजे क्यो धरी अथवा उसे उनके निकट क्यों बिठाया ? उसकी चौकसी करना ये भी तो तुम्हारा कर्तव्य है । तुम तो अपना कर्तव्य न पालो और बिचारे बालकको मारने लग जाओ, ये कहाका न्याय है ?

आपकी अन्तिम शिकायत है कि बालक कहना नहीं मानता । कहिये—कबसे कहना नहीं मानता ? आप कहेगे—बहुत दिनोंसे या शुरूसे । तो मै कहूगा कि लाडसे ही आपने उसकी आदत बिगाडी है । शुरूमें ही उसका इलाज करते तो ये रोग न बढ़ता । धनवानोंके लड़के प्राय. इसीसे बिगड़ते है । लड़का बड़ा हो जाता है तब उसे सुधारना कठिनताका काम है । नीमकी हरी लकड़ी सहजमें नम सकती है, सूखने पर नमना कठिन है ।

अब आजकलकी बालशिक्षाका हाल सुनिये। पाठशालाओंमें बिचारे बालकोंको रटना सिखाया जाता है। हां-खूब घोके जाओ-बस यही प्रेरणा शिक्षक करते है। मानों मनुष्यत्वको छुडा कर मिट्ठुराम रट्टू टट्टू बनाये जाते है। इसीसे छात्रोंकी विचारशक्तिपर पाला पड़ जाता है। किताबें रट रट कर पी जाना बस हो गये होशयार। अशिक्षित भारतमें रहीसही यही शिक्षा है। फिर भी हमारा पतन न हो तो क्या हो? फिर भी रूढीके गुलाम तयार न हों तो क्या हों? अध्यापकोंकी हालत पर गौर कीजिये। ये कुछ सीखे तो हैं लेकिन सिखाना नहीं जानते। मिठाई बनानेकी तरकीब सिखानेवाली किताबोंको पढ जानेसे कोई चतुर हलवाई नहीं हो सकता और न वैद्यकके ग्रथोंका अभ्यास मात्रसे ही कोई वैद्य हो सकता। इसीप्रकार पढने और पढ़ानेमें बड़ा अन्तर है। शिक्षण किस प्रकार दिया जाता है ये एक प्रथक ही शिक्षाकी कक्षा (Training Class) है। इसमें उत्तीर्ण होनेवाले या वैसी योग्यताको रखनेवाले ही अध्यापक बननेके पात्र होसकते है। बालकोंकी शिक्षा जिनके सुपुर्द की जाती है वे प्रायः कम पढ़े कम तनखा पानेवाले अध्यापक होते है। इन अर्द्धविदग्धोंके द्वारा अपनी सन्तानको शिक्षा दिलाना मानों दूधको कटु तुम्बीमें पटकना है। संस्थाके वाहक इस बात पर ध्यान ही नहीं देते। सुकुमार बालकोंके हृदयमें विद्याका ठसाना सहज काम नहीं है। बालकोंको रटाना सिखानेवाले अध्यापक शि-

क्षाका गला घोटते है। शिक्षणशैलीका पूर्ण ज्ञाता ही इसके मर्मको पहचानता है कि प्रेम शासनपूर्वक छात्रोंके चित्तमें किसतरह बिना रटाये विद्यादेवीको स्थापन करना चाहिये। वह बालकोंको तोताराम नहीं बनावेगा। यदि शालाओंमें छात्रोंकी स्वतत्र विचारशक्तिको उत्तेजना देनेका प्रयत्न किया जाय और लीला विनोदरूपमें खिलौनोंके द्वारा उन्हें विविध विषयकी शिक्षा दी जाय तो छात्रगण शीघ्रता और सरलतासे रुचिपूर्वक विद्या सीख जाय।

हमारे पाठक जानते होंगे कि करीब दस वर्ष हुए पंडित पन्नालालजी बाकलीवालने चार पाच वर्षकी गेंदीबाईको गजीफे याने ताश (Playing Cards) पर लिखी हुई वर्णमालाके द्वारा किसप्रकार हिंदी और संस्कृत बाचनकला सिखाई थी? पाच वर्षकी उमरमे गेदीबाई भक्तामर–तत्वार्थ सूत्र आदि सस्कृत ग्रथ धाराप्रवाह शीघ्रतासे बाचने लगी थी।

बालकोंकी शारीरिक मानसिक और नैतिक शक्तिको उत्तेजना देना भी हमारा परम कर्तव्य है। परन्तु खेद है कि हमारा इस ओर बिलकुल लक्ष्य नहीं है। बच्चा चाहता है कि मै गोदीसे उतर कर खेलू, जहा तहा दौडू, परन्तु हम उसे रोकते है, गोदी में ही लादे रहते है। इससे क्या बिगाड़ होता है, इसका हमें ख्याल ही नहीं है। गोदीमें रहनेकी

आदतसे बालकका शरीर फुर्तीला सबल और विकसित होनेसे रुक जाता है। आजकल शहरोंमें रहनेवाले बालकोंको सृष्टिसौन्दर्य देखना दुर्लभ हो रहा है। प्रकृतिकी चित्र-विचित्र रचनाके देखे बिना उनकी मानसिक कल्पनाशक्ति स्फुरायमान नहीं होने पाती। आप जरा बालकको साथमें लेकर बगीचेमें घूमिये और देखिये कि बालक कितना प्रफुल्लित होता है और कैसे तरहतरहके प्रश्न पूछता है। आप कृपाकर उसकी जिज्ञासाको पूर्ण किये जाइये। उत्तर दिये जाइये। बालकको धमकाइये नहीं। उसकी तर्कनाशक्तिको अकुरित होने दीजिये। यदि आप उसकी प्रश्न करनेकी आदतको रोक देंगे तो उसकी बुद्धिके विकाशका एक उत्तम मार्ग बंद हो जायगा। वह लकीरका फकीर बन जायगा। स्वतंत्र विचार करनेकी शक्तिको वह खो बैठेगा।

इसी प्रकार बालकको नैतिकशिक्षा भी देते जाइये। दया करना। हिंसा नहीं करना। किसी भी प्राणीको नहीं मारना। सबके प्राणोंकी रक्षा करना। किसीका दिल नहीं दुखाना। झूठ नहीं बोलना। बात जैसी हो वैसी सत्य सत्य कह देना। कपट नहीं करना। अपना अपराध स्वीकार करना। विनयको धारण करना। चोरी नहीं करना। माता पिता गुरुजनोंकी आज्ञा पालना। स्वच्छतासे रहना। क्रोध नहीं करना। घमण्ड नहीं करना। लोभ नहीं करना। हंसी दिल्लगी

नहीं करना। वृथा बकवाद नहीं करना। अपना अमूल्य समय वृथा नहीं खोना। नम्रतासे बोलना। किसीका उपकार नहीं भूलना। दूसरोंको मदद करना। दान देना। कुसंगतिमें नहीं रहना। आलस्य नहीं करना। धीरज धरना। साहस रखना। डरपोक नहीं बनना—ये सब नैतिक शिक्षा कहलाती है। इसीसे बालकोंका चारित्र गठन होता है। पाठशालाओंमें जहांतक देखा गया है नीतिकी शिक्षा कम दी जाती है इसी सबबसे विद्वान हो जाने पर भी उनमें दुर्गुण रह जाते है।

देखा जाता है कि मातापिता स्वयं अपनी अज्ञानतासे बालकको डरपोक बनाते है। उसे झूठ बोलकर डराते हैं। बालक बाहिर जाना चाहे तो उसे रोकनेके लिये कहते है-बेटा, बाहिर नहीं जाना। वहा भूत खा जायगा। बावा पकड ले जायगा। साप काट खायगा। बिचारा बालक ये सुनते ही चौकन्ना हो जाता है और उसके ढाढस और उत्साह पर पानी फिर जाता है। इसीप्रकार जब बालक अडोसपडोससे कोई चीज उठा लाता है तो अविवेकी मातापिता उसे मना नहीं करते। पडोसियोंसे इसी कारण कभी कभी खटपट अनबन हो जाती है। यदि हम ये समझ लेवें कि ये बालक अनसमझ है और इसीसे यदि उसे न धमकावें और उसीके हाथ वो चीज वापिस न पहुंचवा देवें तो धीरेधीरे बाल्यविनोद करते करते बालकोंको चोरी करनेकी आदत पड जाती है। बड़ा

होते ही वह धाडा मारने लगजाता है । फिर इस व्यसनका छूटना कठिन हो जाता है ।

एक मूर्खशिरोमणि माता, जब उसका लडका दूसरेकी वस्तु उठा लाया करता था तब उसकी पीठ ठोका करती थी। उसे शाबासी दिया करती थी । कुछ दिनों बाद उस लड़केको चोरी करनेकी आदत पड गई तौ भी माताने उसे मना नहीं किया । एक दिन उसने द्रव्यके लिये एक मनुष्यको मार डाला । पोलिसने पता लगा कर उसे गिरफ्तार किया । न्यायाधीशने अपराध साबित होनेपर उसे फांसीकी सजा दी। फासी पर जाते समय उसने अपनी अभिलाषा प्रगट की कि मैं अपनी मासे मिलना चाहता हू । मा बुलाई गई । ज्योंही वह अपने लडकेके पास आई, लडकेने अपनी जेबमेंसे चाकू निकाल कर उसकी नाक काट डाली । जब उससे मनुष्योंद्वारा इस कठोरताका कारण दर्याफ्त किया गया तब वह बोला कि यदि मेरी ये दुष्टिनी माता मुझे चोरी करना न सिखाती तो आज मुझे फांसीपर लटकना नहीं पडता ।

नैतिक शिक्षामें इस बात पर भी पूर्ण ध्यान देना आवश्यक है कि बालाकोंका दृढ ब्रह्मचर्य बना रहे। उनके वीर्यको किसी भी प्रकारका विकार न पहुंचे । आजकल देखा जाता है कि छोटे छोटे बालकोंको धातुक्षीणताकी बीमारी आ घेरती हैं । इसके अनेक कारण हो सकते है । जैसे प्रकृति विरुद्ध

आहार करना अर्थात् खटाई मिर्च वगैरह अधिक खाना। कुसंगतिमें पड़कर हस्तमैथुन करना और अपक्व वीर्यको स्खलित कर डालना। शक्तिको उलघन कर पढनेमें अत्यन्त मानसिक परिश्रम करना, जिससे नेत्रोंकी ज्योति क्षीण पड़जाती, निर्बलता आ दबाती जठराग्नि मद हो जाती और धातुक्षीणता-का रोग ग्रसने लगजाता है।

हमारे श्रीमान्, श्रीमती शेठानियोंके आग्रहसे हैरान होकर अपनी छोटी छोटी सन्तानका विवाह शादी कर डालते है। उन्हें नफे नुकसानका कुछ ख्याल ही नही रहता। बिचारे लडके जिनकी अवस्था विद्याभ्यास करने योग्य रहती है, विवश हो शादीकी झंझटमे फंसाये जाते है। चौपाये बना दिये जाते हैं। उधर लाडीजी भी छोटी उमरकी ही होती है। इन दोनोमे असमयमे ही विषयवासनाए उत्तेजित की जाती है। इनके समागम होते ही पशुकर्म होने लगता है। अपक्व वीर्यके निकलते रहनेसे धातुक्षीणताकी बीमारी हो जाती है। पढना लिखना सब पर पानी फिर जाता है। तेल लूण लकडीकी फिकर पड़ जाती है। इस प्रकार प्यारी सन्तान शारीरिक सुख और शिक्षालाभ दोनोंसे वंचित रह जाती है।

हमे उचित है कि जब कमसे कम १८ वर्षकी वरकी अवस्था हो जाय और कन्याकी अवस्था कमसे कम १२ वर्षकी हो जाय तब उनका पाणिग्रहण करावे। इस उमर

तक वर कन्या को शिक्षित करना चाहिये। जब पत्नी मासिक धर्मसे शुद्ध हो जाय और जब पति पूर्ण बलवान और स्वास्थ्य युक्त हो तभी उन्हें एक विस्तर पर शयन करने देना चाहिये। दक्षिणी लोगोंमें हम यही पद्धति प्रचलित देखते है। ऐसा होने से ही सन्तति यथेष्ट बलिष्ट हो सकती है। ईश्वर हमे सद्बुद्धि दे जिससे हम ब्रह्मचर्य और संयमकी रक्षा करते हुए अपनी उन्नति कर सकें।

व्यापारिक शिक्षाकी भी हमारे समाजमें पूर्ण त्रुटि है। पहले सुननेमें आता था कि भारतका आधा व्यापार जैनी लोग करते हैं। ये कुछ कम सौभाग्यकी बात नही थी परन्तु अब ये बात श्रुति किंवा किंवदन्ति मात्र में रह गई है। जैनीभाई धन जन ज्ञान सभीसे क्षीण प्रतिक्षीण होते जा रहे है। और अंग्रेज पारसी कच्छी आदि विधर्मी व्यापारकुशल होते जा रहे है। हमारा व्यापार रसातलमें पैठता जाता है। व्याज उकालना या दलाली आढत करना, बस वही व्यापार हमारे हाथमे रह गया है। नौकरी करनेकी आफत भी हमारे पर सवार होती जा रही है। इस अवनतिका कारण एक मात्र वाणिज्यविद्या विहीन रहना है। धनवानोंने अपने धनके मदमें चकचूर होकर अपनी सन्तान को शिक्षित नहीं किया। पुण्यके क्षीण होते ही अथवा सट्टे के नशे में गर्क होनेसे उनकी लक्ष्मीजी चल बसीं। फिर क्या था? हो गये दरिद्री। उदरपूर्ति भी करना कठिन हो गया। शहरोंमें जैनियोंके ऐसे

सैकडों घराने दीख पड़ते हैं जो एक समय लखपति थे लेकिन आज वे कौडीपति बन रहे हैं । प्रगतिशील समयमें जब कि भारतका व्यापार सम्बन्ध सभ्य संसारसे होने लगा है इस बातकी परम आवश्यकता हुई कि हम राज्यभाषासे परिचित हो जाय । परन्तु हमारा ध्यान इस ओर बहुत ही कम है । मातृभाषा सीखनेका ही जब ठिकाना नही है तब क्या अंग्रेजी सीखेंगे और क्या संस्कृत । कलाकौशल्य सीखनेके लिये जापान, लंदन, अमेरिकादि देशोको अपने पुत्रोंको भेजना जैनियोने पातक ही समझ लिया । परन्तु आजकल भारतमें भी वैसी शिक्षाकी व्यवस्था होती जा रही है । उन संस्थाओंमें ही भेजकर यदि हम अपने पुत्रोंको निपुण बना देवें तो भी हमारा बहुतसा उत्थान हो सकता है ।

समाचार पत्र और लौकिक शिक्षाकी पुस्तकें बाचनेका भी प्रचार जैन समाजमें कम है । अक्षरशत्रु रहनेसे हम नेत्र-वान होते हुए भी अंधे है । अनपढ प्राणी क्या शास्त्र स्वाध्याय करेगा और क्या धर्मके मर्मको समझेगा । सैकडों ग्राम ऐसे हैं जहां जैनी भाईयोंको विद्याप्राप्तिका कोई साधन ही नहीं मिलता । यदि मिलता है तो मदरसेकी फीस वे नहीं चुका सकते इस कारण विद्यासे शून्य रह जाते है। धनाढ्योंने समझ रखा है कि " सर्वे गुणाः कांचनमाश्रयन्ते " अर्थात् सब गुण रुपयेमें है । लोग उन्हें बडे आदमी कहते ही हैं फिर विद्या

पढ़कर और अपनी सन्तानको पढाकर उन्हें करना ही क्या है? “दांत खटाखट किं कर्तव्यं” ये वाक्य उनकी जिव्हा-पर नृत्य किया ही करता है। प्रति पक्षमें जब हम विलायत और अमेरिकाके धनवानोंकी दशाका विचार करते है तो नेत्रपटल खुल जाते है। प्रथम तो वे धनवान अच्छे विद्वान भी होते है, दूसरे परिश्रम करनेसे वे कभी पीछे नही हटते। वे अपने पुत्रोंसे पूर्ण परिश्रम कराते है। एकचित्त और निष्कपटवृत्तिसे वे अपने कारखाने और व्यापार वाहन करते है। इसीसे लक्ष्मीने उनके कण्ठमें वरमाला डाल रखी है। विद्याके लिये लाखों और करोडों रुपयोका दान उन्होंने किया है। हमारे धनवानोंको उचित है कि उनका अनुकरण करें। अपनी सन्तानको प्रथम ही पूर्ण विद्वान बनावें। विद्याके प्रभावसे ही हम स्वपर कल्याण कर सकते है।

ये विद्याका ही प्रताप था जो स्वर्गीय माननीय गोखलेने असामान्य राज्यमान सम्प्राप्त किया था। देशकी निःस्वार्थ सेवा की। परोपकारमें ही अपने जीवनको लगादिया था। आज सम्पूर्ण भारतमें उनका शोक मनाया गया है। इसमें सन्देह नहीं कि समाजसेवा वही नररत्न भलीभाति कर सकता है जो प्रथम उच्च शिक्षा प्राप्त कर ले और पश्चात् शुद्ध मन वचन कायसे अपने स्वार्थको लात मार कर निःस्वार्थसे अपना जीवन समाजको अर्पण कर दे। जैन समाजका उत्थान

इसी प्रकारके नरपुंगवोंसे हो सकता है। जो धनवान अपने पुत्रोंको नहीं पढाते है, वे सन्तानके हितैषी नहीं कहा सकते। एक श्रेष्ठिपुत्रकी अविद्यावश कैसी दुर्दशा हूई उसका दृष्टान्त यहा लिखा जाता है—

एक शेठजीपर लक्ष्मीजी खूब प्रसन्न थीं। उनका एक ही लाड़ला पुत्र था। शेठ शिठानी उसे देखकर ही जीते थे। शेठजीके लिये काला अक्षर भेंस बराबर था। पुत्रको पढानेकी उन्होने बिलकुल दरकार नहीं की। जब अपने पास अटूट धन है तो फिर पढानेकी क्या आवश्यकता है—ऐसी अजब समझ उनके दिलमें फैली हुई थी। वे कहा करते थे कि पैसेके द्वारा हम चाहे तो अच्छे अच्छे पढेलिखोंको नौकर रख सकते हैं। नौंकरी तो कराना ही नहीं है जो पढ़ाना पडे। शेठानीजीके आग्रहसे पुत्रका १०वे वर्षमें ही विवाह कर दिया। एक वर्ष पश्चात् श्रेष्ठिपुत्र मुकलावेको श्वसुरालय गये। ये भी लक्षाधीशका घराना था। फिर आदरसत्कार मान मनवार और सेवा शुश्रूसाका पूछना ही क्या है। एक दिन ये कुवरसाहेब भोजन करके गलीचेपर गुदगुदे तकियेके सहारे बैठे थे। कानमें अतरका फुआ महक रहा था। मुंहमें पानका बीडा दबा हुआथा और माथे पर पंखा चल रहा था। अलंकारोंकी शोभा तो पाठक स्वय ही विचार लेवें। इतनेमें चिट्ठीरसा एक चिट्ठी कुंवरजीके नामकी लाया। उस समय साम्हने साली सासूजी वगैरह स्त्रिया बैठी थीं। कुंवर-जीने पत्र खोला और वे उसे देरतक देखते रहे। उन्हें अपनी

अनपढ दशा पर बडा दुःख हुआ, उदासी उनके मुंह पर छा गई और नेत्रोंसे आंसू बह आये। ये देखकर सासू साली वगैरह रोने लगीं, अडोसपडोसकी औरतोंने भी आकर रोना शुरू कर दिया। शीघ्रही ये खबर चहुं ओर फैल गई। बिरादरीकी सभी स्त्रियोंने आकर हाहाकार मचा दिया। इतनेमें जातिके लोग भी आ पहुचे। कुछ देरतक सब चुपचाप बैठे रहे। कुंवरजीका सिसकना अभी बन्द न हुआ। उनके नेत्र लाल पड गये। पचोंने रुदनका कारण पूछा परन्तु कुंवरजी कुछ न बोले। किसीने वो कागद जो कि कुवरजीके पास आया था पचोंको दिया और कहा कि कुछ खराब खबर आई होगी, बाचिये। पचोंने पत्र बाचा। उसमें राजीखुशीके समाचार थे। तब शेठानी आदिसे रुदनका कारण पूछा गया। वे बोलीं कि कुवरजीको रोते देख कर ही हम सब रोने लगीं। तब पचोंने कुवरसाहबको मनाया और रंजका सबब दर्याफ्त किया। कुवरजी नेत्रोंमें आसू भरके बोले कि मैं उन मातापिताके नामको रोता हूं जिन्होंने मुझे कुछ न पढ़ाया। मुझे शरम मालूम हुई कि मैं पत्र न बांच सका। इसी दु.खसे मेरे नेत्रोंसे आसू निकल पड़े। नीतिशास्त्र सच कहता है कि:—

लालनात् बहवो दोषाः ताडनात् बहवो गुणाः।
तस्मात्पुत्र च शिष्य च ताडयेन्नतु लालयेत् ॥ १ ॥
माता पशुः पिता वैरी येन बालो न पाठितः।
सभामध्ये न शोभन्ते हसमध्ये बको यथा ॥ २ ॥

अर्थात—लाड़ करनेमें बहुतसे दूषण और ताड़ना करनेमें बहुतसे गुण है इसवास्ते शिष्यकी तथा पुत्रकी ताडना करना चाहिये न कि लाड़ना ॥ १ ॥ वे मातापिता अपनी सन्तानके शत्रु है जो कि उन्हें नही पढाते । मूर्ख लड़के विद्वानोंकी मडलीमें शोभा नही देते—अच्छे नहीं लगते, जैसे कि हंसोंमें बगुला शोभा नहीं देता ॥ २ ॥

चालिये, हम आपको स्कूल ले चलते हैं । वहा आप देखेगे कि अध्यापकोंकी मेज एक एक बेतसे सजी हुई है । या टेबिल अथवा सन्दूकमे एक बेत छिपी हुई रखी है । ज्योंही शिक्षकका मस्तक क्रोधसे ठनक उठता है, वह बेत निकाल कर विद्यार्थीको सडासड जमाता है । कभी कभी तो छात्रोंकी पीठ या हाथो पर बेतोंकी लकीरे उछल आती है । कई लडके तो इसी डरसे जीवनपर्यत निरक्षर रह जाते है । मै कह सकता हू कि वे अध्यापकोंके पात्र ही नहीं है जो कि बालकों पर प्रेमसे शासन करना नहीं जानते । छडी मारना मानो बालकोंकी निर्भयता और प्रसन्नता पर वज्रप्रहार करना है । क्या पीटनेके अतिरिक्त अन्य प्रकारकी ताडना—दंड है ही नही ? क्या मनुष्य अब पशुओंसे भी अधम हो गये ? क्या बातकी मार कुछ कम है ? घटोंतक खडे रखना, नबर उतार देना, कान पकड़ाना इत्यादि प्रकारका क्या दड नहीं है ? सुदर लेखन, वाचन और शुद्ध स्पष्ट उच्चारण परभी ध्यान देना प्रत्येक छात्रका कर्तव्य है । यदि प्रारभमें इस ओर लक्ष्य न

दिया जावेगा तो फिर आदत पड़ने पर सुधार होना मुश्किल है। जो हिंदी या सस्कृतके पद्य कठस्थ कराना आवश्यक हों, वे भी तबतक याद न कराये जाय जबतक कि विद्यार्थी उनका शुद्ध उच्चारण न कर सकता हो । पद्योंके अर्थ अच्छी तरह समझा दिये जाय तब कंठस्थ करावें ।

हमारे छोटे छोटे बालकोंको णमोकारमंत्र, चौवीस तीर्थंकरोंके नाम स्तुति आदि अशुद्ध ही रटा दिये जाते है । ऐसा करना उचित नहीं । इसी प्रकार स्त्रीयोंके दुराग्रहसे बालकोंको भक्तामर और तत्त्वार्थसूत्रका महा अशुद्ध पाठ रटा दिया जाता है और उसे ही सुनकर स्त्रियें अपनेको कृतकृत्य समझने लगती है । ये हमारी बडी भूल है। बिचारे विद्यार्थियोंको कठिन शब्दका अर्थ घुकाया जाता है लेकिन उसके भावको-तात्पर्यको बालक बहुत कम समझते है। ऐसे फजूल परिश्रमसे विद्यार्थीकी विचारशक्ति जाती रहती है। अमेरिका, इंग्लैड, जापानादिने अद्भुत आविस्कारोंसे बेहद उन्नति की है, क्या भारतवर्षीय पुरुष वैसे आविस्कार करनेके पात्र नहीं है ? अवश्य है, परन्तु प्रारंभसे ही हम मार्ग भूले हुए हैं। हमारे दुर्भाग्यसे वैसे अध्यापकोंकी ही कमी है जो शिक्षणपद्धतिके ज्ञाता हों।

सबसे प्रथम माताका शिक्षित होना आवश्यक है। क्या आपने कभी सुना है कि अमुक मेम अनपढ है ? अंग्रेजोंकी समग्र उन्नति शिक्षा और हार्दिक परिश्रमसे हुई है।

आजकल देखा जाता है कि जैनी विद्यार्थी तीन प्रकारकी संस्थाओंमें प्रारंभिक शिक्षा पाते है। सरकारी मदरसोंमें, मारवाडी शालाओंमें और सामाजिक जैन पाठशालाओंमें। इन सस्थाओंकी त्रुटियों पर भी हमें पूर्ण लक्ष्य देना चाहिये। सरकारी मदरसोंमें धार्मिक शिक्षा देनेकी कोई व्यवस्था नहीं होनेसे हमारे बालक धार्मिक ज्ञान-शून्य रह जाते है अतएव हमे उचित है कि उन्हें अपने घर पर धार्मिक शिक्षा देते रहें अथवा जैन पाठशालाओंमें प्रातःकाल या रात्रिसमय घंटे दो घंटे भेज दिया करे। मदरसोंमें ऊपरकी कक्षाओंमें अंग्रेजीके अतिरिक्त गणित भूगोल इतिहास इत्यादि विषयोंकी शिक्षा अंग्रेजी पुस्तकोंपरसे दी जाती है जिससे बालकोंको बहुत परिश्रम करना पड़ता है। उनकी विचारशक्ति विकसित होनेका मार्ग कुंठित हो जाता है। हमें मातृभाषाकेही द्वारा विविध विषयोंका ज्ञान सहजमें हो सकता है अतएव हमें इष्ट है कि देवनागरीका यथेष्ट प्रचार करे और इसीसे ज्ञान सम्पादन करें। अंग्रेजी द्वितीय भाषारूपमें सीखनी चाहिये। बालकोंको प्रेमदृष्टिसे शिक्षा दी जाय। उन्हें मारना पीटना उचित नहीं है। जब हम मारवाडी शालाओंकी ओर दृष्टि फेरते हैं तो मालूम हो जाताहै कि वहा गणित मुख्यतासे और हिंदी भाषा गौणरूपमें सिखाई जाती है। प्रथम गिनती पहाड़े खूब घुकाये जाते है पश्चात् जोड़ वगैरह सिखाकर नाममात्रको वर्णमाला सिखाई जाती है। मात्राओंका ज्ञान

बहुत कम कराया जाता है । अक्षरसौन्दर्य और शुद्धताका तो आपको वहां दर्शन भी नहीं हो सकता । प्रायः दश बारह वर्षकी अवस्थामें वणिक् पुत्रकी पढ़ाई समाप्त कर दी जाती और वह अकालमें ही दूकान पर बिठा दिया जाता है । चार पाच वर्ष तक दूकानके कामकी पद्धतिसे परिचित हो जानेपर वह रोकड वही नोंद वगैरह करने लग जाता है । जमा खर्चके हिसाबको रखनेकी पद्धति तो ठीक ही है, लेकिन जो मारवाड़ी लिपिमें लिखा जाता है वह महा अशुद्ध और असुहावना होता है। यदि मारवाड़ी भाषामें ही लिखनेका आग्रह है तो हानि नहीं, किन्तु जैसा बोलते है वैसा लिखना तो चाहिये । ऐसा नहीं कि जावें अजमेर, लिखें "अजमर गय" और बाचा जाय— आज मर गये ।

ऐसी कोई भाषा नहीं जो मारवाडीके सदृश अशुद्ध लिखी जाती हो । खूबी ये है कि जितनी अशुद्ध लिखी जाय उतनी ही लेखककी तारीफ की जाती है। अशुद्ध चिट्ठियां अट-कल और काठिनाईसे बाची जाती है । मारवाडीकी लिपि भी प्रथक् प्रथक् तरहकी लिखी जाती है । बस, जिसे जिसकी चिट्ठी बाचनेका मुहावरा होता है वही मतलब निकाल सकता है । फिर भी सदेह रहता ही है । प्रारभमगलसे ही अशुद्धिया साम्राज्य जमा लेती है जेसे लिखना चाहिये या उच्चारण करना चाहिये—" ॐ नमः सिद्धेभ्यः " और लिखते या बोलते हैं " ओ ना मा सी धम् " शिक्षित मडलके साम्हने ऐसी

मूर्खता लज्जास्पद होनेकी पात्र है। प्रथम तो हमें इष्ट है कि शुद्ध हिंदी भाषाकी लिपिको आश्रय देवें। यदि मारवाडी भाषामें ही लिखना हो तो जैसे स्वर्गीय शिवचद भरतियाने मारवाडीमें पुस्तकें लिखी है वैसा ही शुद्ध हमें भी लिखना चाहिये। परन्तु यह देखके कि इस उन्नतिशील समयमें भी मारवाडी लिपिका सुधार नही हुआ है। एक कविने सच कहा है कि·—

वणिक पुत्र कागद लिखत, कान मात नही देत।
हीग मिरच जीरो लिखत, हग मर जर लिख लेत ॥

अर्थात्–वणिक्पुत्र जब पत्रपर लिखते है तो काना मात्रादि कुछ नहीं लगाते। जैसे यदि उन्हे हींग मिर्च जीरा लिखना हो तो " **हग मर जर** " लिखते है। कहिये, इस अशुद्धिका कुछ ठिकाना है?

अब हमारी जैन पाठशालाओंका हाल सुनिये। वहां प्राय. निखालस हिंदी या सस्कृतमे धार्मिक पूजापाठ स्तोत्रादिक सिखाये जाते है। व्यवहारिक शिक्षणपर प्राय. ध्यान ही नहीं दिया जाता। अब कई जगह जातीय विद्यालयोंमें इसकी व्यवस्था होती जाती है तौ भी शुद्ध हिन्दी लिखनेकी शिक्षापर कम ध्यान दिया जाता है। हिंदी व्याकरणके जाने विना विद्यार्थीगण लेखनमें बहुत अशुद्धियां किया करते हैं। शिक्षित लोगोंको ये बात बहुत खटकती है।

एक पुत्रने अपने पिताको जो कि विद्वान था एक पत्र लिखा जिसमें ये वाक्य थे " **यहां शकल श्वजन प्रसन्न हैं। कुटुम्बियोंको शकृत भोजन करा दिया है** इत्यादि "। पत्र वाचते ही पिताके नेत्रोंमें आंसू भर आये। वह ऐसे अर्द्ध विदग्ध पुत्र द्वारा अपनेको अभागी समझने लगा और उसने पुत्रको उत्तरमें एक श्लोक लिखा:—

यद्यपि बहुना धीषे तथापि पढ पुत्र व्याकरणम्।
स्वजन श्वजनो माभूत् सकल शकल सकृच्छकृत्॥

अर्थ—हे पुत्र। यदि तुझसे अधिक न पढ़ा जाय तो रहने दे परन्तु व्याकरण अवश्य पढ़ले। **स्वजन** (कुटुम्बियों) को **श्वजन** (कुत्ते) मत लिख। **सकल** (सम्पूर्ण) को **शकल** (टुकडा) मत लिख और **सकृत्** (एकवार) को **शकृत्** (भिष्टा) मत लिख। विद्यार्थियोंको शुद्ध लेखन पर पूर्ण ध्यान देना चाहिये।

शिक्षा दो प्रकारकी है। एक लौकिक दूसरी पारमार्थिक। लौकिक विद्याके द्वारा हम अर्थ और काम पुरुषार्थकी सिद्धि कर सकते, अर्थात् अपनी आजीविका कर सकते और सामाजिक उन्नति भी कर सकते है। पारमार्थिक (धार्मिक) विद्याके द्वारा हम धर्म पुरुषार्थ और उत्तरोत्तर मोक्ष पुरुषार्थ साध सकते है। लौकिक विद्यामें कृषि शिल्प और वाणिज्य को प्रधानता है। इन्हींसे प्राचीन भारत उन्नत बना हुआ

था। अब भी भारतकी उन्नति शिक्षाके साथ साथ इसी उद्योगके द्वारा हो सकती है। धार्मिक विद्याका तो भारत केन्द्र गिना जाता था। आज भी धार्मिक दृष्टिसे इसे ही प्रथम स्थान दिया जाता है, परन्तु वास्तवमें हम धार्मिक उन्नतिमें बहुत ही पिछडे हुए हैं। अधश्रद्धा, दैवावलम्बन और आलस्यने हमें नष्ट करडाला है। यदि हम आत्मोन्नतिके अभिलाषी हैं तो हमें इष्ट है कि अपने बालकोंको धार्मिक शिक्षा प्रदान करें। लौकिक उन्नतिमें विज्ञान—साइसने अद्भुत चमत्कार दिखाया है। बे तारका तार, एक्सकिरण यत्र, आकाश विमान, टेली-ग्राफ , फोनोग्राफ, आगबोट, रेल्वेट्रेन इत्यादि आविस्कारोंसे दुनियामें बहुत परिवर्तन हुआ है अतएव हमारी पाठशाला-ओंमें इस विज्ञानकी भी शिक्षा दीजानी चाहिये। समयके प्रवाहको देखकर प्रयत्नशील होनेसे ही हमारा अस्तित्व रह सकता है।

शिक्षाकी महिमा—विद्याकी प्रशसा सम्पूर्ण मतोंके धर्म-शास्त्रोंमें और सर्वसाधारण नीतिशास्त्रोंमें वर्णन की गई है। विना विद्याके हमारा जीवन निरर्थक है। यदि हम उभय लोक सम्बन्धी सुखोंकी अभिलाषा करते हों तो हमें उचित है कि चाहे जैसी कठिनतामें मन वचन कायसे विद्याभ्यास करें। सब उन्नतिकी जड़ विद्या है। जैनसमाजमें जो फजूलखर्ची, बालविवाह, वृद्धविवाह, कन्याविक्रय इत्यादि कुरीतियां

फैल रही हैं वे भी शिक्षाके प्रभावसे सब नष्ट हो जावेंगीं। देखिये नीतिशास्त्र विद्याके विषयमें क्या अभिप्राय प्रगट करते है:—

विद्या ददाति विनयं विनयाद्याति पात्रताम्।
पात्रत्वाद्धनमाप्नोति धनाद्धर्मं ततः सुखम्॥

अर्थ—विद्या पढनेसे विनय, विनयसे योग्यता, योग्यतासे धन और धनसे सुख प्राप्त होता है। भावार्थ—विद्या ही सुखकी दात्री है।

न चोरहार्यं न च राजहार्यं, न भ्रातृभाज्यं न च भारकारी।
व्यये कृते वर्द्धति एव नित्यं, विद्याधनं सर्वधनप्रधानम्॥

अर्थ--विद्याको न चोर लूट सकता, न राजा हरण कर सकता, न भाईबन्धु बटा सकता और न इसका भार ही मालूम पडता है। इसे जितनी खरचो उतनी ही ये बढती है। याने जितना विद्यादान करो—दूसरोको पढाओ उतनाही ज्ञान बढ़ता जाता है। इसीकारण विद्याधन सब धनोंमें मुख्य है।

रूपयौवनसम्पन्नाः विशालकुलसम्भवा।
विद्याहीना न शोभन्ते निर्गंधा इव किंशुका॥

अर्थ—मनुष्य चाहे रूप यौवन सम्पन्न हो और उच्च-कुलमें जनमा हो परन्तु यदि वह विद्याहीन होवे तो उसकी कुछभी शोभा नहीं। जैसे कि सुगंधरहित टेसूका फूल कोई शोभा नहीं देता।

विद्वत्त्वं च नृपत्वं च नैव तुल्यं कदाचन।
स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान् सर्वत्र पूज्यते॥

अर्थ–विद्वत्ता और राजापना ये दोनों कदापि समान नहीं हो सकते कारण राजा तो अपने ही देशमें पूजा जाता है किन्तु विद्वान जहा जाता है वहा पूजा जाता है। भावार्थ—विद्वानको राजासे भी अधिक सन्मान मिलता है।

विद्या नाम नरस्य रूपमधिक प्रच्छन्न गुप्त धन,
विद्या भोगकरी यश सुखकरी विद्या गुरूणा गुरु ।
विद्या बन्धुजनो विदेशगमने विद्या परा देवता,
विद्या राजसु पूजिता न तु धन विद्याविहिन पशु ॥

अर्थ—विद्या मनुष्यको अधिक रूपवान बनाती है, ये मनुष्यका गुप्त धन है। इससे नाना प्रकारकी भोगोपभोगकी सामग्री प्राप्त होती है। यश और सुख मिलता है। यही सब-गुरुओंमें प्रधान है। विदेशमें विद्या भाईबन्धुके समान सहायक होती है। विद्याही श्रेष्ट देवता है। राजाके यहा धनकी प्रतिष्ठा नहीं किन्तु विद्याकी प्रतिष्ठा है। भावार्थ–विद्याविहीन मनुष्य पशु सदृश है।

एक कविने सच कहा है कि –“विद्या चेत् कि भूषणैः सुकविता यद्यस्ति राज्येन किम्” अर्थात्–यदि विद्या है तो अन्य आभूषणोंकी क्या आवश्यकता है? और यदि कवित्व शक्ति है तो राज्यकी भी क्या आवश्यकता है? भावार्थ–कवि-जन कविताके द्वारा राजाओंसे भी अधिक आनंद प्राप्त करते है। नीतिकारोंने यहातक कहा है कि “गुणवानोंकी गिनती

करते समय जिसका नाम शीघ्रतासे नहीं लिखा जाता उस सन्तानसे यदि उसकी माता पुत्रवती समझी जाय तो फिर बाझ किसे कहते हैं । भावार्थ—निरक्षर पुरुषकी माता बांझ सदृश है।

मै ऊपर कह आया हू कि जन्मके पूर्व नौ महीनेसे शिक्षाका प्रारंभ होता है परन्तु लिखना पढना सीखनेके लिये सन्तानको पाच वर्षसे आठ वर्षकी उमरके दर्म्यान जब उसकी शारीरिक शक्ति ठीक समझी जाय—बिठा देना चाहिये । बालकोंकी दिनचर्या मेरी समझमें इस प्रकार होना चाहिये — प्रात'काल पाच बजे उठना और रात्रिको ९ बजे सो जाना । आठ घंटेसे कम निद्रा लेना बालकोंके लिये हानिकारक है । बिस्तरसे सबेरे उठते ही पंचपरमेष्ठीका स्मरण करना, उन्हे परोक्ष नमन करना । मंगलपाठ पढ़ना । अपना पाठ याद करना । पश्चात् स्वच्छ हवामें आध घंटे घूमना । व्यायाम करना । शौच्यादिसे निपट कर स्नान करना । दन्तशुद्धि (दतौन) करना । स्वच्छ वस्त्र पहन सामग्री लेकर जिनदर्शनको जाना । लौट कर पुन· विद्याभ्यास करना । समय पर अनुमान दस बजे भोजन करना । पश्चात् वख्त पर शालामें पहुंच जाना । गुरुजीको प्रणाम करना । विनयसे अपने निर्दिष्ट स्थान पर बैठ जाना । कक्षाके छात्रोंसे भ्रातृभावपूर्वक प्रेम रखना । किसीसे नहीं झगड़ना । अपना पाठ सुनाना । नवीन पाठको ध्यानसे सुनना, समझना । अपनी भूल हुई हो तो

छिपाना नहीं। उसे स्वीकार कर मेटनेकी चेष्टा करना। पुस्तकें संभाल कर रखना—फाड़ना नहीं। चित्त प्रसन्न रखना। समझमें न आवे तो गुरुजीसे पूछ लेना। छुट्टी हुए बाद सीधे घर आना। पाच बजे अंदाज़ भोजन करना। पश्चात् सात बजेतक खेलना हवाखोरीको जाना तथा जिनदर्शन करना। नौ बजेतक मौखिक शिक्षा ग्रहण करना या अपना पाठ याद करना। और अन्तिम भगवत् प्रार्थना कर सोजाना।

शारीरिक शिक्षापर भी हमारा पूर्ण लक्ष्य होना चाहिये। प्रत्येक विद्यार्थीको उचित है कि प्रतिदिन कुछ कुछ व्यायाम किया करे। इससे शरीरकी कान्ति बढ़ेगी, अच्छा पाचन्य होगा और बल बढ़ेगा। बालकोंको शुद्ध सादा आहार ग्रहण करना चाहिये जिसमें दूध और घीकी मात्रा अधिक हो। अच्छे अच्छे फल भक्षण करना भी आवश्यक है। तर पदार्थोंसे मस्तिष्कशक्ति बढेगी और नेत्रोंकी ज्योति मंद नहीं होवेगी। बालकोंको प्रथम ही संस्कारयुक्त करना चाहिये। भावार्थ—बालकोंको उचित है कि चित्तकी शुद्धिके लिये मद्य (शराब) मांस और मधु (शहद) याने तीन मकार और ऊंबर कठूंबर (अजीर) बड़ पीपर और पाकरफल अर्थात् पंचोदम्बर सर्वथा त्याग देवें और विधिपूर्वक यज्ञोपवीत धारण कर लेवें। जल छानकर पीना, जिनदर्शन करना, अभक्ष्य भक्षण और रात्रिभोजन नहीं करना—ये नियम भी उनके लिये आवश्यक है।

प्यारे बालको ! इस पर्यायमें शिक्षा प्राप्त कर अपना कर्तव्य पालन करना ही तुम्हारा प्रधान उद्देश्य होना चाहिये। अशिक्षित मनुष्य अंधेके समान है। ज्ञानको तीसरा नेत्र कहते हैं अतएव बाल्यावस्थाको खेल कूदमें ही व्यतीत मत करो। याद रखो कि राष्ट्रकी उन्नति तुम्हारे ही हाथमें है। तुम्हारी एक एक सेकंड लाख लाख रुपयेकी है। उसे वृथा मत खोओ। कुसंगतिसे सदा दूर रहो। किसी प्रकारका व्यसन (खोटी आदत) मत डालो। शारीरिक परिश्रमसे मत डरो। जितना परिश्रम करोगे उतनेही फूलोगे और फलोगे। परिश्रम करनेसे सदा रोगोंसे बचे रहोगे। आलस्यको तुम अपना शत्रु समझो। स्कूलके प्रत्येक अध्यापकसे और प्रौढ विद्यार्थियोंसे मैं निवेदन करता हू कि वे बाबू रवीन्द्रनाथ टागोर लिखित शिक्षाकी पुस्तकें तथा अमेरिका निवासी बुकर टी. वाशिंगटन-का स्वरचित जीवनचरित्र जिसका नाम " आत्मोद्धार " है, अवश्य पढें। इनसे उन्हें स्वावलम्बन और स्वतंत्र विचारकी अच्छी शिक्षा प्राप्त होवेगी। ये पुस्तकें दिगंबरजैनपुस्तका-लय--सूरतको लिखनेसे प्राप्त हो सकती है।

प्रिय बालको ! यदि तुम मन वचन कायसे कमसेकम बीस वर्ष पर्यंत शिक्षा ग्रहण करोगे--विद्याभ्यास करोगे और पश्चात् शिक्षित सुशील कन्यासे तुम्हारा पाणिग्रहण होगा तो निःसन्देह तुम सुखपूर्वक गार्हस्थधर्म निभाते हुए आत्मकल्याण कर सकोगे। धन सन्मान कीर्ति आदि सभी तुम्हें प्राप्त हो सकेंगे

तुम अपनी पूर्ण उन्नतिके साथ साथ परोपकार भी कर सकोगे। अतएव—

हे भारतभूमिके भूषण सपूतो! जागो, जागो। आलस्यको त्यागो और चाहे जैसी कठिनाई होनेपर भी विद्या अवश्य पढ़ो। सब धन इसपर न्योछावर है। इसीसे तुम्हारी शोभा है।

मै अब इस निबन्धको समाप्त करते हुए प्रार्थना करता हूं कि यदि जैनसमाज अपनी वास्तविक उन्नति करना चाहे तो वह प्रथम ही शिक्षाका खूब प्रचार करे। यहातक कि किसी भी नगर या ग्राममें कोई भी जैन बालक या बालिका अशिक्षित न रहने पावे। शिक्षारूपी कल्पलतासे, विद्यारूपी कामधेनुसे, ज्ञानरूपी दिव्य प्रकाशसे ही हम अपनी धार्मिक लौकिक आर्थिक सामाजिक और शारीरिक उन्नति कर सकते है। अतएव—

हे सरस्वती देवी! हे शिक्षा देवता! तू हमसे चिरकालसे रूठी हुई है। अब प्रसन्न हो और हमारे अन्तःकरणमें प्रकाश फैला यही तुझसे हमारी अन्तिम प्रार्थना है। एवमस्तु।